मानव की
आध्यात्मिक यात्रा

बलविंदर कुमार

अनुवाद

महेंद्र यादव

बलविंदर कुमार वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी हैं। एक बहुमुखी व्यक्तित्व के नाते उनकी दिलचस्पियों में पेंटिंग, अतींद्रिय चिंतन, विज्ञान और आध्यात्मिकता शामिल है। वह एक विचारक और एक दार्शनिक हैं, वह नए युग की आध्यात्मिकता के प्रबल अनुयायी रहे हैं।

उन्होंने नई दिल्ली और लखनऊ की ललित कला अकादमी में प्रदर्शनी लगाई है, जहाँ सौ से अधिक तैल चित्र और कैनवास पर 'अमूर्त' एक्रिलिक पेंटिंग के कारण उन्हें व्यापक मान्यता मिली। एक विचारक होने के नाते उन्होंने क्वांटम यांत्रिकी, तंत्रिका विज्ञान और चेतना, धर्मशास्त्र और तत्त्वमीमांसा पर छानबीन की है।

भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए काम करते हुए उन्होंने उत्तर प्रदेश सरकार के साथ-साथ केंद्र सरकार के तहत नई दिल्ली में अनेक महत्त्वपूर्ण पदों को सँभाला है।

मानव की आध्यात्मिक यात्रा

बलविंदर कुमार

अनुवाद

महेंद्र यादव

अपनी माता और पिता के प्रति
जिनसे मैंने सच्चा ज्ञान प्राप्त किया,
जिसने मुझे जीवन और अस्तित्व के सही अर्थ
और उद्देश्य को, काफी हद तक,
समझने में मदद की।

आभार

मैं अपने जन्म-जन्मांतर की साथी नेहा, अपने प्रिय पुत्र अक्षय और शान, अपने अनमोल मित्रों—महेंद्र और मंजू का उनके सतत समर्थन के लिए हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। और मैं रोड द्वीप, अमेरिका की सुश्री जो-आन लांगसे के योगदान को भी अविस्मरणीय मानता हूँ, जिन्होंने इस किताब का संपादन किया है।

परिचय

मेरी इस किताब का उद्देश्य मेरे उन अव्यवस्थित विचारों को एक सूत्र में पिरोना है, जिनका संबंध उन विविध विषयों से है, जो हमारे जीवन को नियंत्रित करते हैं। मैं पाठकों का परिचय विज्ञान और आध्यात्मिकता के समसामयिक विषयों से कराना चाहता हूँ और बताना चाहता हूँ कि दोनों का आपस में कितना गहरा संबंध है। पाठकों का परिचय उनकी आध्यात्मिक प्रकृति से होना आवश्यक है, जिससे कि वे समझ सकें कि कैसे उनका संपर्क अपने स्वभाव की निहित अच्छाई से भंग गया है। मैंने यह बताने का प्रयास किया है कि कैसे एक व्यक्ति, जो सदा ही अच्छे-बुरे दिनों के अधीन होता है, अपने जीवन से अनेक सबक सीखता है। ऐसे कठिन दौर में हम कुछ परम प्रश्नों पर विचार करने के लिए विवश हो जाते हैं, जैसे : हम इस जगत् में क्यों आए हैं? और हमारे जीवन का उद्देश्य और अर्थ क्या है? इससे भी महत्त्वपूर्ण यह कि पाठक उन विषयों में दिलचस्पी दिखाएँगे, जिनकी उनके जीवन में एक अहम भूमिका है। इन व्यापक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए एक व्यक्ति के आध्यात्मिक सफर को विचारों के छोटे-छोटे टुकड़ों में पेश किया गया है।

यह किताब उस समय आ रही है, जब जीवन के हर क्षेत्र में मानवता एक परिवर्तन को महसूस कर रहा है। यह ऐसा समय है, जब सारे संस्थानों सहित बाहरी दुनिया में तेजी से बदलाव आ रहे हैं। एक तरफ, सामूहिक मानव चेतना तेजी से बढ़ रही है, तो दूसरी तरफ, प्रमुख रूप से भौतिकवादी मूल्यों और इच्छाओं के कारण, मनुष्यों की पीड़ा बढ़ती जा रही है। हम अपने साथी मनुष्यों के प्रति अधिक असहिष्णु और शत्रुतापूर्ण होते जा रहे हैं, और हम पहले की अपेक्षा दबाव और तनाव से अधिक पीड़ित हैं। दुनिया के कई हिस्सों में, अनेक स्तरों पर, आक्रामकता और विवाद बढ़ रहे हैं। आज समाज में भय और क्रोध

जितना हावी है, वैसा पहले कभी नहीं देखा गया था। हमारी बढ़ती प्रौद्योगिकी ने भौतिक जगत् की जटिलताओं को पहले से कहीं अधिक जटिल बना दिया है। पूरे विश्व में जहाँ समाज गहराई और अच्छी तरह से एक-दूसरे से जुड़े हैं, व्यक्ति अपनी अंतरात्मा और आध्यात्मिक प्रकृति से दूर होता जा रहा है। वह अत्यंत आत्म-केंद्रित और भौतिकवादी बन गया है। अब अधिकांश लोगों के जीवन का उद्देश्य भौतिक धन और सुख-सुविधा बनकर रह गया है। आधुनिक जगत् में भौतिकवाद के उदय का मनुष्यों पर गंभीर दुष्परिणाम होनेवाला है, जिसका न केवल व्यक्तिगत जीवन पर, बल्कि पूरे समाज पर पड़नेवाला है।

इस आधुनिक युग में, पूरे विश्व में, तर्क और विवेक की तेजी से प्रगति के साथ, मानवता कट्टर धार्मिक रीतियों, उपासना, ढोंग और एक अलग देवता की उपासना से दूर जाने लगी है। विशेष तौर पर, लोग एक नियंत्रक और रक्षक के रूप में उसके अस्तित्व पर संदेह करने लगे हैं। संगठित धर्मों में, चर्च में लोगों की उपस्थिति धीरे-धीरे कम होती जा रही है, क्योंकि लोग धार्मिक ढोंग के प्रति विश्वास खोते जा रहे हैं और इसकी बजाय आध्यात्मिक पद्धतियों और उसकी सत्यता को जीवन में स्थान दे रहे हैं। हाल के सर्वेक्षणों और अध्ययनों से यह बात सिद्ध हुई है कि अधिक-से-अधिक लोग चर्च, मंदिर और उपासना के अन्य स्थलों से विमुख हुए हैं। उदाहरण के लिए, आधुनिक ब्रिटेन 'आध्यात्मिक है, न कि धार्मिक' क्योंकि एक शोध एजेंसी (Comres.co.uk) द्वारा कराए गए ओपिनियन पोल में आधे से भी अधिक (59%) लोगों ने कहा कि वे किसी-न-किसी प्रकार के आध्यात्मिक अस्तित्व या उसके सार पर विश्वास करते हैं। ध्यान और योग जैसी आध्यात्मिक पद्धतियाँ न केवल पश्चिम में, बल्कि दुनिया भर में अपनाई जा रही हैं। जैसे-जैसे संगठित धर्मों का पतन हो रहा है, वैसे-वैसे आध्यात्मिकता का उत्थान होता जा रहा है।

हमारे अंदर जब तक अपने अनेक भ्रमों पर प्रश्न करने का और मन पर पड़े अज्ञानता के परदे को उठाने का साहस नहीं होगा, तब तक हम एक सुखी और शांतिपूर्ण जीवन नहीं बिता सकते हैं। यह अज्ञानता जीवन की वास्तविक प्रकृति की अज्ञानता होती है। हम उन अनेक जटिलताओं और उलझनों को 'समझने' और उन्हें 'काबू करने' का प्रयास करते हैं, जो हमारे जीवन को निर्देशित करती हैं, जबकि जीवन की असीमित अच्छाई और अपरिमित सुंदरता का आनंद उठाने के लिए सबसे अधिक महत्त्व अपनी मौलिक प्रकृति को समझना है। मनुष्य मूल

रूप से आध्यात्मिक होता है। जीवन की चुनौतियों से घबराकर हम भले ही बुराई का प्रदर्शन करें, किंतु स्वाभाविक रूप से हम सब अच्छे हैं। यही नहीं, जब अपने अस्तित्व की सरल सच्चाई को समझ लेते हैं, तब कठिन चुनौतियों के प्रति हमारी प्रतिक्रिया में भी आश्चर्यजनक बदलाव आ सकता है।

आध्यात्मिक विकास का अर्थ अपने आप की छानबीन और अपने विषय में जागरूक होने से लगाया जाता है। हमें यह विदित होना चाहिए कि हम अपनी इच्छाओं की पूर्ति कैसे करेंगे और भौतिक वस्तुओं तथा कुछ 'विशेष' व्यक्तियों के प्रति हमारा लगाव किस प्रकार हो रहा है। प्रेम, करुणा और दूसरे लोगों के प्रति चिंता ही आध्यात्मिकता का सार है। सरल शब्दों में कहें तो यह जीने का एक तरीका है।

इसके पूर्व कि मैं इस किताब के विभिन्न अध्यायों की व्याख्या करूँ, मुझे लगता है कि इस ब्रह्मांड में मानवता कहाँ खड़ी है, उसकी एक झलक पा लेना सार्थक होगा। वैज्ञानिकों के अनुसार, इस पूरे जगत् की शुरुआत लगभग 13.7 बिलियन वर्ष पूर्व उस बिग बैंग से हुई, जब हमारा ब्रह्मांड अचानक फट पड़ा। एक सेकेंड के 10 मिलियन ट्रिलियन ट्रिलियन ट्रिलियन हिस्से में, इस पूरे ब्रह्मांड ने एक परमाणु से भी छोटे आकार से एक आकाश-गंगा से भी विशाल रूप ले लिया। अब 100 बिलियन से भी अधिक तारक-पुंज हैं और प्रत्येक तारक-पुंज में सूर्य के जैसे 100 बिलियन से अधिक तारे हैं। अब कल्पना कीजिए कि एक स्पष्ट रात में अपनी आँखों से हम केवल 3000 से 4000 तारों को ही देख पाते हैं। यह पृथ्वी और सौर मंडल आकाश-गंगा में ही शामिल हैं, जो लगभग 100,000 प्रकाश वर्ष (एक प्रकाश वर्ष लगभग 6 ट्रिलियन मील का होता है) दूर है, और इसमें 100 से लेकर 400 बिलियन तारे हैं। हम ब्रह्मांड को 10 से 23 कि.मी. तक ही देख पाते हैं, और इसमें लगभग 1050 टन सामग्री हमें दिखाई पड़ती है, जिसमें तारे, धूल और गैस शामिल हैं, और यह सभी एक शक्तिशाली गुरुत्वाकर्षण बल पैदा करते हैं। हम अनंत ब्रह्मांड के विशाल आकाश-गंगा के सौरमंडल में गोल्डीलॉक्स जोन (यानी एक तारे से उचित दूरी पर, जिससे कि हमारा जीवन चलता रहे) में रहते हैं। हमारी पृथ्वी अपने ऊपर बसे हर जीव को वह सामग्री सही रूप में (इस प्रकार का मेल अत्यंत दुर्लभ है) उपलब्ध कराती है, जिससे कि वह अपना जीवन चला सके।

लगभग 4.5 बिलियन वर्ष पूर्व सूर्य के एक और ग्रह के रूप में पृथ्वी का

जन्म हुआ। आगे चलकर, करीब 3.8 बिलियन वर्ष पूर्व, रहस्यमय तरीके से छह सरल तत्त्वों—कार्बन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, कैल्शियम और फॉस्फोरस का एक मिश्रण तैयार हुआ, जिसने जीवन की रचना करनेवाले तत्त्व का रूप लिया और अन्य जीवों के साथ मनुष्य का भी जन्म हुआ। सबसे पहले सूक्ष्म बैक्टीरिया का जन्म हुआ। फिर कई बिलियन वर्ष की अवधि में अधिक-से-अधिक जटिल जीवों का जन्म हुआ। लगभग 500 मिलियन वर्ष पूर्व समुद्र में पहली काँटेवाली मछली का जन्म हुआ। मछली के बाद उभयचरों, फिर सरीसृपों, विशाल डायनासोरों का जन्म हुआ और अंत में स्तनधारी पृथ्वी पर आए। आद्य मनुष्य इस धरती पर लगभग 2.6 मिलियन वर्ष पूर्व आए। लगभग 800,000 वर्ष पूर्व होमो सैपियन यानी हमारे पूर्वजों ने आग का आविष्कार किया। 200,000 वर्ष पूर्व आधुनिक मनुष्य अपने पूर्ण रूप में आ चुका था। हमने बोलना शुरू कर दिया था। अगले 100,000 वर्षों में हम यहाँ से वहाँ जाने लगे। लगभग 30,000 वर्ष पूर्व मानव जाति यूरोप पहुँच गई थी, और फिर, करीब 10,000 ई.पू. में, हमारी आबादी दक्षिण अमेरिका में अच्छी-खासी हो चुकी थी। अब प्राचीन मनुष्य पूरे विश्व में बसने लगा था।

प्रागैतिहासिक काल के दौरान शारीरिक रूप से क्रो-मैगन आधुनिक मनुष्य थे, जो यूरोप और मध्य-पूर्व में लगभग 40,000-30,000 वर्ष पूर्व देखे गए थे। शुरुआती निएंडरथल (सीधे खड़े होकर चलनेवाले मनुष्य) मानव अत्यंत प्राचीन थे और उनकी तुलना में क्रो-मैगन की शारीरिक बनावट आधुनिक मनुष्यों जैसी थी। इसके बाद करीब 9,000 ई.पू. नव पाषाण युग की शुरुआत हुई और उस दौरान विशेष तौर पर एक बदलाव आया, जब मनुष्य ने घुमंतू और शिकार पर आश्रित जीवन बिताने की बजाय कृषि आधारित समाज का निर्माण किया। पौधों और जानवरों को पालतू बनाने के पहले प्रमाण 9,000 ई.पू. से ही मिलते हैं। ग्रामीण समाज 6,000 ई.पू. के बाद बसने लगे और 4,000 ई.पू. तक ऐसे समाज आम होने लगे। शहरों का निर्माण 6ठी और 5वीं सदी ई.पू. से शुरू हुआ, और 4,000 ई.पू. से नगर-राज्यों की बस शुरुआत ही हुई थी। इस प्रकार, मानव इतिहास ने मनुष्य के आगमन से लेकर 1900 तक मनुष्य की आबादी के 1.6 बिलियन पहुँचने में 200,000 वर्ष का समय लिया। अगले 100 वर्षों बाद, 20वीं सदी में, यह चौगुनी होकर लगभग 6 बिलियन से अधिक हो चुकी है। आज विश्व की आबादी 7.2 बिलियन के करीब पहुँच चुकी है।

नव पाषाण युग की क्रांति के दौरान, जब मनुष्य ने पशुओं को पालतू बनाना शुरू किया और खेती करने लगा, तब स्वयं अपनी नजरों में उसकी अहमियत बहुत बढ़ चुकी थी। यहाँ तक कि आत्मा के उच्च जगत् को लेकर उसकी समझ का मानवीकरण होने लगा, यानी उसने आत्मा को मनुष्यरूपी देवी-देवताओं के तौर पर देखना आरंभ कर दिया। उसने स्वर्ग को देवों और देवियों के जगत् के रूप में देखा, जो धरती पर होनेवाली मनुष्यों की गतिविधियों में नियमित रूप से अभिरुचि लेते हैं और आवश्यक होने पर हस्तक्षेप करते हैं। भय, असुरक्षा और भयंकर खतरे को न केवल देवियों और देवताओं के रूप में देखा जाने लगा, बल्कि शारीरिक और भावनात्मक शक्ति तथा विशिष्ट आवश्यकताओं के लिए उन्हें साक्षात् स्वीकार किया गया और उन्हें प्रसन्न करने के लिए विधि-विधान भी शुरू हो गए। इस प्रकार देवताओं का सृजन हुआ और विभिन्न स्थानों पर उनकी मूर्तियाँ स्थापित की गईं, जहाँ उनकी उपासना शुरू हो गईं। नव पाषाण से ऐतिहासिक युग के बीच, मनुष्य को यह विश्वास हो गया कि देवता विशिष्ट होते हैं—सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ और अनंत। वास्तव में, यहीं से धर्म की शुरुआत हुई, क्योंकि मनुष्यों ने दैवी शक्तियों या देवताओं के लिए विधि-विधानों का आरंभ कर दिया। चूँकि मनुष्यों की एक बड़ी आबादी अत्यंत प्रतिकूल और संकटपूर्ण परिस्थिति में रह रही थी, इस कारण समय बीतने के साथ-साथ धार्मिक अनुष्ठान, पूजा-अर्चना, मिथक, अंधविश्वास आदि को व्यापक रूप से स्वीकार किया जाने लगा। मनुष्य के चित्त में, चूँकि देवता का भय गहरा हो चुका था, इस कारण धर्मों के औपचारिक संगठनों का जन्म हुआ।

800 से 200 ई.पू. की अवधि में चीन, भारत, ग्रीस और मध्य पूर्व में मानवता की आध्यात्मिक आस्था की स्थापना हुई। इस युग में वेदों, उपनिषदों, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, कनफ्यूसियस मत, ताओवाद, प्लेटोवाद आदि का जन्म और उदय हुआ। इस 600 वर्ष की अवधि को अक्षीय युग का नाम दिया जाता है, जिस शब्द का प्रयोग सबसे पहले जर्मन दार्शनिक और मनोचिकित्सक कार्ल जैस्पर्स द्वारा किया गया था। जैस्पर्स का मत है कि अक्षीय युग के दौरान पूर्व वर्णित क्षेत्रों में, ''मनुष्य की आध्यात्मिकता की बुनियाद एक ही समय पर और स्वतंत्र रूप से लग गई।'' जैस्पर्स इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि ''इन्हीं बुनियादों पर आज भी मानवता विश्वास करती है।'' अमेरिकी दार्शनिक एरिक वोगेलिन ने इस युग को 'द ग्रेट लीप ऑफ बीइंग' (अस्तित्व की महत्त्वपूर्ण छलाँग) कहा है, जिसमें एक

नई आध्यात्मिक जागृति तथा सामाजिक मूल्यों के स्थान पर व्यक्तिगत मूल्यों की ओर प्रस्थान शामिल है।

चूँकि इस किताब में क्वांटम यांत्रिकी की चर्चा कई स्थानों पर की गई है, इस कारण मुझे लगा कि संक्षेप में इस विषय की चर्चा करना उचित होगा। हम जिस पारंपरिक या लौकिक जगत् में रहते हैं, उसमें वस्तुओं की स्थिति और गति का पूर्वानुमान निश्चित रूप से लगा सकते हैं, क्योंकि उन सभी पर न्यूटन का नियम अनिवार्य रूप से लागू होता है। न्यूटन की भौतिकी हमारे भौतिक जगत् के व्यवहार का, यहाँ तक कि प्रत्यक्ष रूप से दिखनेवाले तारों और ग्रहों के जगत् का भी पूर्वानुमान लगा सकती है। हालाँकि हम प्रत्यक्ष दिखनेवाले जगत् को देखने के इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि हम यह सोच भी नहीं सकते कि सूक्ष्म या क्वांटम जगत् की गतिविधियाँ किस प्रकार की होती हैं। क्वांटम का अर्थ है तत्त्व की सबसे छोटी मौलिक इकाई, किंतु क्वांटम के कणों की प्रकृति हम अपने दैनिक जीवन में जैसा देखते हैं उससे कहीं विचित्र होती है। 'परंपरागत जगत्' में जहाँ अपेक्षित और न्यायोचित व्यवहार देखा जाता है, वहीं क्वांटम जगत् में घटनाओं का अनुमान पहले से नहीं लगाया जा सकता है। इस अदृश्य जगत् में व्यवहार विचित्र और अजीब होता है। क्वांटम जगत् में सबसे पहले वैसे कण, जो पहले एक थे और अब अलग हो चुके हैं वे दूरी और समय के अंतर के बावजूद एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं और आपस में प्रतिक्रिया करते हैं। दूसरी बात, अनेक प्रकार के कण एक एकीकृत तत्त्व में जुड़ सकते हैं। तीसरी बात, इलेक्ट्रॉन के समान कण अनेक संभव दशाओं या स्थानों में एक साथ हो सकते हैं।

क्वांटम सिद्धांत के माध्यम से ही आधुनिक विज्ञान ने एकत्व की धारणा को लागू किया है। ब्रह्मा में सबकुछ गहराई से आपस में जुड़ा (जैसे किसी होलोग्राम में देखा जाता है) होता है और कुछ भी एक-दूसरे से अलग नहीं होता। ब्रह्मांड में सबकुछ ऊर्जा के आदान-प्रदान, हस्तांतरण और रूपांतरण पर कार्य करता है। भारत के ऋषियों ने ब्रह्म यानी वास्तविकता के आधार के विषय में जो कुछ वेदों में कहा था उसकी सत्यता आधुनिक विज्ञान द्वारा स्थापित कर दी गई है। क्वांटम के स्तर पर हम अब भी 'एक' हैं। अलग-अलग अस्तित्व बस एक भ्रम है, क्योंकि हमारी इंद्रियाँ अत्यंत सीमित और गहराई से इस जगत् की वास्तविक तसवीर को समझने में अक्षम हैं। चेतना का सर्वव्यापी क्षेत्र, जो सारे जीवन का स्रोत है, वह स्थान और काल से परे है। संपूर्ण विश्व की अवधारणा, निर्माण,

शासन और नियमन चेतना के अंतर्गत होता है। वही चेतना मन, विचार, भावनाओं, और यहाँ तक कि तत्त्व का भी स्रोत है। इस किताब में जैसा कि हम देखेंगे, चेतना, वास्तविकता, भ्रम, एकत्व की अवधारणा, गहराई में जाने पर, आध्यात्मिक अभ्यास और रहस्यवाद आपस में एक-दूसरे से जुड़े हैं।

आगे के अध्यायों में मैंने निम्नलिखित जटिल विषयों पर पड़ताल के प्रयास किए हैं, जो बहुत हद तक आध्यात्मिकता के केंद्र में रहनेवाले विषय हैं।

- ज्ञान और तर्क के युग में भगवान् की प्रासंगिकता!
- गहन स्तर पर ब्रह्मांड का आपस में जुड़ाव और अवियोज्यता।
- क्या सामूहिक मानवीय चेतना उत्तरोत्तर रूप से बढ़ रही है?
- हम अपनी वास्तविकता का सृजन स्वयं करते हैं—हम अपनी वास्तविकता के सृजन में सक्रिय योगदान करते हैं।
- हमारा भौतिक शरीर हमारे विचारों और भावनाओं का प्रतिफल है।
- मन का नकारात्मक झुकाव—नकारात्मक विचारों को पसंद करने की अंतर्जात प्रवृत्ति।
- मन की रचना इस प्रकार की है कि वह जहाँ तक संभव हो स्वचालित होता है—अवचेतन मन की अप्रयुक्त क्षमता।
- हम जिस जगत् को देखते हैं, उसकी वास्तविकता का निर्माण—माया के वश में रहनेवाली वास्तविकता।
- इच्छा कितनी स्वतंत्र है? स्वच्छंद इच्छा काफी हद तक माया के वश में होती है।
- विश्व आईने के समान है—बाहरी जगत् महज आंतरिक जगत् का प्रतिबिंब होता है।
- क्या मानवीय कष्ट जीवन का अनिवार्य अंग है? हम इससे कैसे बच सकते हैं?
- हम पुराने अनुभवों के भावनात्मक बोझ को ढोते हैं, हम इस बोझ से मुक्ति कैसे पा सकते हैं?
- क्या जीवन का कोई अर्थ होता है? क्या हमारा जीवन महज अव्यवस्था और अनिश्चितता के वश में होता है?

- स्वयं का आंतरिक स्वयं से संघर्ष—अहम और स्वयं के बीच निरंतर संघर्ष।
- मनुष्य की आध्यात्मिक यात्रा—क्या हम सभी आध्यात्मिक परिपक्वता की ओर बढ़ते हैं?

मेरे लिए किसी भी अन्य व्यक्ति के समान, भगवान् भी एक पूरी तरह से वैयक्तिक धारणा हैं, जिसका विकास जीवन के अनुभवों के साथ होता है। मेरे बचपन और किशोरावस्था के दौरान, प्रमुख रूप से मेरे माता-पिता के प्रभावों के कारण, मैं सदा ही भगवान् को एक व्यक्तिगत जीव के रूप में देखता था, जो हमारे सारे कर्मों/कृत्यों को देखता है और फिर इस जीवन में या संभवत: अगले जीवन में हमें दंड देता है। मेरे मन 'उसके' विषय में अनेक मानवीकृत तसवीरें थीं, जो उसकी मौलिक प्रकृति की मेरी धारणा को मजबूत करती थीं। जैसे-जैसे मेरे सोचने की क्षमता का विकास हुआ तथा मेरी ज्ञान संबंधी प्रक्रिया में अधिक-से-अधिक तर्क का समावेश हुआ तो समय के साथ भगवान् के प्रति मेरी धारणा भी बदलने लगी। फिर मैं अनीश्वरवादी हो गया और यह मानने लगा कि ऐसे किसी सर्वोच्च जीव के बारे में जानना संभव ही नहीं कि वह हमारे जीवन को नियंत्रित कर सकता है या नहीं। किसी भी स्थिति में मैं इस बात को मान चुका था कि भगवान् उस रूप में नहीं हो सकते जैसी अवधारणा उनके विषय में पहले मेरे मन में थी। मैं जैसे-जैसे बड़ा होता गया, जीवन की जटिलताओं को देखता गया, तब मैं इस मायने में नास्तिक प्रवृत्ति का हो गया कि एक तरफ जहाँ मैं यह मानने लगा कि देवी या देवताओं का कोई व्यक्ति जैसा मानवीय स्वरूप नहीं हो सकता है, तो दूसरी ओर यह भी सोचता था कि कुछ अज्ञात शक्तियाँ हो सकती हैं जिनका पता विज्ञान अब तक नहीं लगा सका है। हालाँकि इसके साथ ही मैं ध्यान और आत्मपरीक्षण जैसे आध्यात्मिक तरीकों को अपनाने लगा।

संभवत: हम सभी इस बात से सहमत हो सकते हैं कि मनुष्य भगवान् की प्रकृति और हमारे जीवन को नियंत्रित करने में उनकी भूमिका को समझने में पूरी तरह से अक्षम है। सोचने की हमारी अथाह शक्ति और क्षमता के बावजूद, मस्तिष्क ब्रह्मांड के असीम रहस्यों और उन जटिलताओं को सुलझाना तो दूर छूने में भी सक्षम नहीं जिनसे हमारा जीवन घिरा हुआ है। आखिर हम यह आशा कैसे कर सकते हैं कि हम उस अनंतता को समझ सकते हैं जो सर्वोच्च सत्ता है? सार्वभौमिक सत्य हो सकता है, किंतु मुझे संदेह है कि हमारा मन कभी इस जगत्

की वास्तविकता को समझ सकेगा—विशेष तौर पर जहाँ सर्वोच्च जीव की वास्तविकता को समझने का प्रश्न है। भगवान् के अज्ञात गुणों के कारण, अधिकांश लोगों की भगवान् की परिभाषा और धारणा उनके धर्मों और आध्यात्मिक झुकावों पर निर्भर करती है। भगवान् की भूमिका और हमारे जीवन पर नियंत्रण करने की उनकी शक्ति के विषय में विज्ञान और धर्म की अपनी ही सीमा है। अध्याय-1 कुछ विचारों को सामने रखता है, जो बताते हैं कि समय के साथ कैसे भगवान् की अवधारणाएँ विकसित हुईं, और क्या तर्क और ज्ञान के इस युग में भी भगवान् के विचार की प्रासंगिकता है।

वेदों और उपनिषदों को हिंदुत्व की पहली दार्शनिक खोज माना जाता है और वेदों तथा उपनिषदों में अभिव्यक्त सबसे महत्त्वपूर्ण मत यह है कि सर्वोच्च वास्तविकता एक ही है और उसे 'ब्रह्म' कहते हैं यानी परमात्मा। ब्रह्म अनंत, सर्वव्यापी और अद्वैत प्रकृति के हैं। दूसरे शब्दों में, वास्तविकता एक है या संपूर्ण। बौद्ध दर्शन भी सारी चीजों की नश्वरता और अन्योन्याश्रय संबंध की बात करता है और कहता है कि सबकुछ एक निरंतर प्रवाह के समान है। बौद्ध मत का यह भी मानना है कि परम सत्य शुद्ध सहज ज्ञान है। अब आधुनिक विज्ञान और विशेष तौर पर क्वांटम के नजरिए से यह सिद्ध हो चुका है कि ऊर्जा का एक एकीकृत क्षेत्र है, जो प्रत्यक्ष रूप से ब्रह्मांड में सबको जोड़ता है। इसी सार के आधार पर, यह भी कहा जाता है कि ब्रह्मांड की हर एक चीज दूसरे से जुड़ी है। अध्याय-2 में ब्रह्म की पुन:प्राप्ति सबकुछ एक है विषय पर कुछ विचारों पर प्रकाश डाला गया है।

क्या मानवता का विकास अब भी हो रहा है? यह पता लगाने के लिए अनेक वैज्ञानिक अध्ययन किए गए हैं कि क्या सामूहिक मानवीय चेतना प्रगतिशील रूप से एक बेहतर भविष्य की ओर बढ़ रही है। यह दिखाना संभव है कि व्यक्तिगत और सामूहिक मन एक साथ मिलकर भौतिक जगत् पर अनपेक्षित और अचेतन प्रभाव डाल सकते हैं, हालाँकि अत्यंत छोटे पैमाने पर इस गतिशीलता का पता लगाया जा सकता है। इस प्रकार, व्यक्तिगत मन से सामूहिक मन में वैश्विक मन/चेतना का उदय होता है। लंबी अवधि में अनेक विकासवादी तरक्की को दस्तावेज के रूप में दर्ज किया जा सकता है। इर्विन लैस्जलो, जो हंगरी के एक विज्ञानी दार्शनिक हैं, उनका तर्क है, ''मनुष्य अहंकार के वश में आई चेतना और इंद्रियों तक सीमित चेतना से एक व्यापक वैयक्तिकता से परे की चेतना की ओर

तभी बढ़ता है, जब उसे एक-दूसरे के बीच के, जीवमंडल से और ब्रह्मांड से अपने गहरे और अभिन्न संबंध का ज्ञान हो जाता है।'' इन विषयों पर मैंने इस प्रश्न पर कि ''क्या मानवता का विकास बेहतर भविष्य के लिए हो रहा है?'' अध्याय-3 में अपने विचार रखे हैं।

अपने चारों ओर देखें तो आधुनिक विश्व की एक बड़ी आबादी के बीच असंतोष, दु:ख, निराशा, और पीड़ा दिखाई देती है। तर्क और न्याय के इस युग में भी मनुष्यों और राष्ट्रों के बीच अपराध, हिंसा और आक्रमण की घटनाएँ हो रही हैं। धन, सामाजिक प्रतिष्ठा, और भौतिक वस्तुओं पर बहुत अधिक जोर दिया जा रहा है। आत्मा[1] और मनुष्य की आध्यात्मिक प्रकृति को कहीं पीछे छोड़ दिया गया है, और मानविकी से लेकर चिकित्सा विज्ञान और जीव विज्ञान समेत प्रत्येक अध्ययन के क्षेत्र और प्रयास पर भौतिकवादी विचार हावी हो गए हैं। फलस्वरूप, हम विज्ञान द्वारा सुझाए गए अनेक गलत और आधारहीन समाधानों और उपायों को अपनाने की एक भारी कीमत चुका रहे हैं। मनुष्य की अपनी आध्यात्मिक प्रकृति की अनदेखी जब तक होती रहेगी, तब तक यह विश्व आध्यात्मिक और शारीरिक भूख से पीड़ित रहेगा। यदि हमने अपने दृष्टिकोण और अंतर्दृष्टि में परिवर्तन नहीं किया, तो भौतिकवादी मूल्यों के कारण हम अनेक शारीरिक और मानसिक बीमारियों से व्यक्तिगत और सामूहिक तौर पर कष्ट भोगते रहेंगे। 'भौतिकवादी पथ पर मानवता' शीर्षक के अंतर्गत अध्याय-4 में इस पहलू पर प्रकाश डाला गया है।

'द न्यू थॉट मूवमेंट' (नई सोच का आंदोलन) या 'न्यू थॉट' (नई सोच) एक आध्यात्मिक आंदोलन है, जिसकी शुरुआत अमेरिका में 19वीं सदी के अंत में हुई। यह आंदोलन आध्यात्मिक और तत्त्व मीमांसावादी विचारों पर पर्याप्त जोर देता है। इस आंदोलन का एक प्रमुख सिद्धांत है आकर्षण का नियम, जो कहता है कि हम अपने जीवन में आनेवाली हर वस्तु के प्रति अपने अंदर हावी विचारों और भावनाओं के कारण आकर्षित होते हैं। तथा यह हमारे मन में पहले से मौजूद सृजनात्मक या विनाशकारी दृश्यों/तसवीरों पर ध्यान केंद्रित करने के कारण स्वरूप लेता है। दूसरे शब्दों में कहें तो हमारे अंदर विभिन्न घटनाओं, परिस्थितियों, संबंधों आदि को मोड़ने और स्वरूप देने की क्षमता होती है, जिसके आधार पर हम तय करते हैं कि हमें कैसे सोचना, विश्वास करना और अनुभव करना है! क्वांटम यांत्रिकी पर हाल में किया गया शोध यह दरशाता है कि हमारे जैसे मनुष्य

इस भौतिक संसार में साधारण पर्यवेक्षक से कहीं अधिक हैं, और ब्रह्मांड की तरंगों और कणों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर सकते हैं। इस प्रकार, हम अपने आसपास के जगत् में सिर्फ निष्क्रिय पर्यवेक्षक नहीं हैं, बल्कि शक्तिशाली रचनाकार हैं। अध्याय-5 में मैंने अपने विचारों को हम अपने जीवन के रचनाकार स्वयं हैं के विषय पर सँजोया है, जो नई सोच के आंदोलन की मौलिक विशेषता है।

अधिकांश लोग अब भी अपने भौतिक शरीर और मन को अलग-अलग सत्ता के रूप में देखते हैं और मानते हैं कि दोनों प्रणालियाँ अलग-अलग कार्य करती हैं। हालाँकि चिकित्सा विज्ञान ने निस्संदेह रूप से यह स्थापित कर दिया है कि अपने गहरे और अंतरंग जुड़ाव के कारण दोनों एक ही हैं। यदि हम अपने आपको गहराई से देखें तो हम देख सकते हैं कि कैसे संवेदनाओं और भावनाओं का हमारे शरीर पर प्रभाव पड़ता है। हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली हमारी भावनाओं और विचार की प्रक्रिया से अंतरंग रूप से आपस में गुँथी है। हमारी भावनाओं और सोच में क्या चल रहा है तथा हमारे शरीर में क्या हो रहा है, इन दोनों में एक संबंध होता है। हमारे शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य पर शरीर और मन के बीच निरंतर और निर्बाध दोहरे संचार से बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। विभिन्न प्रकार के रोगों को दूर करने के लिए जब हमारा इलाज किया जाता है तो हम प्रयोगिक ओषधि और ओषधि नहीं दिए जाने का अंतर देख सकते हैं। डॉक्टर-मरीज के संबंध में मरीज का डॉक्टर पर भरोसा उसके स्वास्थ्य में जमीन-आसमान का अंतर ला सकता है। मैंने तन-मन का अंतरंग संबंध के व्यापक विषय की चर्चा अध्याय-6 में की है।

प्रागैतिहासिक काल से ही जब मनुष्य ने तर्कसंगत रूप से सोचना शुरू किया और जीवन के रहस्यों का हल ढूँढ़ने का प्रयास शुरू किया, तो मनुष्य के विचार-क्षेत्र में मस्तिष्क ने प्रमुख स्थान ले लिया। मन और आत्मा तथा दैवी शक्तियों के बीच संबंध से जुड़ी और दर्ज की गई सबसे पुरानी विचारधाराओं/अवधारणाओं को सामने रखनेवालों में बुद्ध, प्लेटो, अरस्तू, आदि शंकर तथा अनेक भारतीय, ग्रीक और (आगे चलकर) इसलामी दार्शनिकों का नाम लिया जाता है। अधिकांशत: हमारी पहचान हमारे विचारों से होती है। हम अपने मस्तिष्क को शरीर के किसी अन्य अंग के समान ध्यान से देखने में विफल रहते हैं, इस कारण, हम यह समझ नहीं पाते कि यह मस्तिष्क ही है, जो उन समस्याओं से हमें अवगत कराता है, जिन्हें हम बिना किसी मंशा के (चेतन) स्वयं अपनी (अचेतन) गलतियों से पैदा

करते हैं। यह वजह है कि हम जब तक अपनी विचार की प्रक्रिया के प्रति जागरूक नहीं होते, तब तक हम अपने दिमाग पर नियंत्रण प्राप्त नहीं कर सकते, और यही कारण है कि हम इसके मालिक बनने की बजाय इसके शिकार बन जाते हैं। बिना सोचे-समझे कदम उठाने के कारण ही हम उन तरीकों को अपनाते हैं जो अधिकतर प्रतिक्रियावादी, आदतन, और कुछ हद तक स्वत:स्फूर्त होती हैं। अध्याय-7 में मस्तिष्क की कार्य-शैली पर 'हमारी विचार-शैली' शीर्षक के अंतर्गत मैंने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं।

नकारात्मकता की अपनी अंतर्निहित (या कुछ लोग कहेंगे की उसका अनुकूलन) प्रवृत्ति के कारण ऐसा लगता है जैसे हमारे मन को कष्ट सहने के लिए कार्यक्रमबद्ध कर दिया गया है। मस्तिष्क की सर्पाकार संरचनाएँ (ब्रेनस्टेम और सेरिबैलम) इस प्रकार की हैं कि वह सदा ही बचाव की मुद्रा में या भयभीत रहता है। हालाँकि उस पर शरीर के महत्त्वपूर्ण कार्यों, जैसे—हृदयगति, श्वसन, शरीर के तापमान और संतुलन को बनाए रखने के लिए भरोसा किया जा सकता है, लेकिन सर्पाकार मस्तिष्क कमजोर और प्रतिक्रियाशील भी है। यह सदा ही पागलों के समान भटकता रहता है और 'कहीं से भी आनेवाले' विचारों का स्वागत करता है और फिर वे अचानक कहीं लुप्त हो जाते हैं। हमारा सबसे खतरनाक शत्रु हमारा मन ही हो सकता है, विशेष तौर पर जब हम नकारात्मक और भयभीत करनेवाली घटनाओं तथा अतीत के अनुभवों को बड़े चाव से स्वीकार करने की आदत पर नियंत्रण नहीं रख पाते हैं। विशेष तौर पर जब हम तनाव में होते हैं, तब हम नकारात्मक विचारों को ऊपर आने से रोकने के लिए जितना ही दबाने का प्रयास करते हैं, ये विचार उतनी ही ताकत से अभिव्यक्ति प्राप्त करने के लिए ऊपर आते हैं, जिसके चलते हमारा तनाव और बढ़ जाता है। हम जब तक ध्यान, चिंतन, प्रार्थना जैसे आध्यात्मिक प्रयासों से शांति पाने की कोशिश नहीं करेंगे, तब तक हमारा मस्तिष्क एक बोझ बना रहेगा। अध्याय-8 में इस तथ्य पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है, जिसे 'नकारात्मकता के प्रति मन की प्रवृत्ति' के रूप में देखा जाता है।

यदि हम ध्यान से देखें तो अकसर हमें अपना मन एक शांत दशा में दिखता है, जो अपने आप से ही बात करने में खोया रहता है। उस समय, अवचेतन मन सारी भावनाओं, विचारों पर नियंत्रण करता हुआ सर्वोच्च स्थिति में होता है तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया को अमल में लाता है। न्यूरोसाइंटिस्ट इस बात को सिद्ध

कर चुके हैं कि यह अचेतन स्थिति चेतना की स्थिति से कहीं अधिक सक्रिय होती है, और इस स्थिति में ही हम 90 प्रतिशत से अधिक गतिविधियाँ और निर्णय लेते हैं। हमारे अधिकांश विचार और क्रियाएँ आवेगशील होती हैं, और विचार अपने आप ही आते हैं, चूँकि हम पूरी चेतना के साथ चुनाव नहीं करते हैं। यह देखा जा सकता है कि हमारा अवचेतन मन पर बिलकुल भी नियंत्रण नहीं या है भी तो थोड़ा-बहुत, हालाँकि यह हमारे दैनिक जीवन में एक निर्णायक और केंद्रीय भूमिका निभाता है। अध्याय-9 में मैंने उस तरीके की खोज की है, जिसमें दिमाग को जहाँ तक संभव हो स्वचालित बनाया जा सके, तथा अवचेतन की भूमिका और प्रकृति पर 'अचेतन मन की अप्रयुक्त क्षमता' के रूप में जोर दिया जा सके।

हममें से अधिकांश लोगों के मन पर अतीत और वर्तमान के नकारात्मक तथा अप्रिय स्मृतियों का एक बड़ा बोझ होता है, जिन्हें हम सामान्य तौर पर भावनात्मक बोझ कहते हैं। भावनात्मक बोझ की एक पहचान यह है कि यह ट्रिगर्स से भरा होता है। ट्रिगर एक ऐसी चीज है जो हमें अतीत की याद दिलाता है, जिसके साथ पुरानी अप्रिय बातें, यादें और प्रतिक्रिया सामने आ जाती हैं। बोझ को कम करने की बजाय हम इसकी नकारात्मक ऊर्जा को जमा करते जाते हैं और उसे शक्तिशाली बनाते हैं। हमारा प्रतिक्रियावादी व्यवहार का रवैया अधिकतर इसे दोहरानेवाला होता है, और इस दौरान वह नकारात्मक ऊर्जा को लगातार बढ़ाता जाता है। उदाहरण के लिए, तनावपूर्ण संबंधों में हम देखते हैं कि अकसर भावनाओं का बोझ फटकर सामने आ जाता है, जिससे संबंध और भी नाजुक हो जाते हैं। ऐसे मामलों में हमारे सामने विकल्प यह होता है कि हम इस बोझ को और बढ़ाएँ तथा स्वचालित और बिना सोच-विचार के व्यवहार से असहनीय बना लें या फिर पूर्ण जागरूकता के साथ उभरनेवाले विचारों को देखें और समझें तथा इस बोझ को हलका करें। अध्याय-10 में मैंने 'भावनात्मक बोझ क्यों बढ़ाएँ' विषय पर अपने विचार रखे हैं।

हम चाहे इस पर विश्वास करें या नहीं, लेकिन हम अपने आसपास की दुनिया की वास्तविकता को समझ पाने में सक्षम नहीं हैं। हम जिन इंद्रियों की मदद से अपने दिमाग में वास्तविकता का निर्माण करते हैं वे छवि की रचना (दृष्टि), गंध, स्वाद, और स्पर्श से जुड़े तमाम आँकड़ों को प्राप्त करने, समझने और उनकी व्याख्या करने में अनुपयुक्त हैं। यही नहीं, अतीत में सीखे गए सबक,

औपचारिक शिक्षा तथा मन में बैठी धारणाएँ मन में वास्तविकता के निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। और इस कारण ही हम जिसे वास्तविकता समझते हैं वह छलावा होता है, जो अकसर काफी भ्रामक तथा महज वैसा नहीं होता है। किसी भी प्रकार यह नहीं लगता कि हम वास्तविकता को जान पाएँगे, लेकिन हम कम-से-कम अपनी व्यक्तिगत सीमाओं को समझते हैं, जिसके चलते हम वहम के शिकार इस प्रकार नहीं हो सकते कि हमें कष्ट झेलना पड़े। अध्याय-11 दुनिया को हम जिस रूप में देखकर उसकी वास्तविकता का निर्माण करते हैं उसके प्रति समर्पित हैं—'भ्रम की दुनिया'।

सदियों से दार्शनिकों, विचारकों और हाल में न्यूरो साइंटिस्टों के बीच स्वतंत्र इच्छा के प्रश्न पर एक विवादास्पद बहस छिड़ी है। सन् 1970 में जाने-माने न्यूरोफिजियोलॉजिस्ट बेंजामिन लिबेट ने बताया था कि जिस कार्य को करने का निर्णय हम चेतन रूप से लेते हैं वह हमारे मस्तिष्क में उस निर्णय से एक सेकेंड पहले उत्पन्न होती है। इस अप्रत्याशित क्रम की जाँच-परख अनेक शोधकर्ताओं ने की है। इसके अतिरिक्त, हम यह भी नहीं जानते कि हमारे मन में वह मंशा (किसी कार्य को करने की) कहाँ उत्पन्न होती है, यानी उसकी उत्पत्ति पूरी तरह रहस्यमयी है। इन सबसे परे स्वचालित सी दिखनेवाली प्रक्रिया, मन में उत्पन्न होनेवाले विचारों की व्याख्या हमारा अनुकूलित मन करता है, जो ठोस धारणाओं, भावनाओं, अतीत के सबक और अनुभवों से ग्रस्त होता है। यह अभेद्य सी दिखनेवाली बाधा किसी चेतन निर्णय और/या काररवाई से पहले हमारे विचारों को परिशोधित कर देती है। इन परिस्थितियों में हम देखते हैं कि जिस स्वतंत्र इच्छा को हमारा मन कहता है कि वह अस्तित्व में है, दरअसल काफी हद तक अस्तित्व में नहीं होता है। अध्याय-12 में मैंने इस प्रश्न पर चर्चा की है कि क्या स्वतंत्र इच्छा एक भ्रम है।

इस संसार में आध्यात्मिकता का सार अपने वास्तविक अहम को जानना तथा अपने जीवन के वास्तविक अर्थ की खोज करना है। हम जिस व्यक्तिगत अहम को जानते हैं वह पहचान का एक अत्यंत सीमित रूप है। अपने वास्तविक अहम से अनभिज्ञ होने के कारण हम एक गलत धारणा बना लेते हैं कि हमारे पास क्या है, या दूसरे हमें किस रूप में देखते हैं, या हम इस संसार में क्या करते हैं। चूँकि इस संसार के सारे तत्त्व निरंतर रूप से बदल रहे हैं, इस कारण पहचान की यह धारणा सदा संकट में रहती है, और इस कारण अहंकार हमारे अनेक

'आत्म-केंद्रित' व्यवहारों के लिए जिम्मेदार होता है। हम जब इस गहन अहम का सच जान लेते हैं, तब हम ऐसे अनेक भय से मुक्ति पा लेते हैं, जो व्यर्थ हमारे मन को घेरे रहते हैं। हम एक वृहत् आंतरिक शांति, आंतरिक सुरक्षा की खोज करते हैं जो दूसरों के व्यवहारों और कार्यों पर या हमारे आसपास के जगत् में होनेवाली घटनाओं पर निर्भर नहीं होता। हालाँकि हम अकसर अहम का आंतरिक अहम/आत्मा से टकराव देखते हैं, क्योंकि हमारे मन की इन बाधाओं का आपस में टकराव होता है, तथा इसी की व्याख्या 13वें अध्याय में की गई है।

इस संसार में हम जो कुछ देखते हैं वह हमारे मन की आंतरिक दशा का वास्तविक प्रतिबिंब होता है। हमारे भय, चिंताएँ तथा अन्य नकारात्मकता बाहरी संसार में पूरी सच्चाई से प्रतिबिंबित होती है। दूसरे शब्दों में, हम अपने आसपास जो कुछ देखते हैं, वह हमारी आंतरिक भावनाओं के विषय में बहुत कुछ कहता है। यदि कोई सफलता के लिए संघर्ष कर रहा है या किसी क्षेत्र में दूसरे लोगों से अपने आपको श्रेष्ठ साबित करने के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहा है, तो अपने आसपास का यह संसार उसे संघर्ष और प्रतिस्पर्धा से भरा नजर आएगा। यद्यपि यह इस जगत् का एक सरलीकृत दृष्टिकोण प्रतीत हो सकता है, किंतु सत्य यही है कि हमारा दिमाग एक निश्चित तरीके से सोचने लगता है और इस संसार के प्रति अपने दृष्टिकोण और विश्वास के अनुरूप प्रतिक्रिया करने लगता है। मन की शांति और स्थिरता से यह संसार अद्‌भुत और अनुकूल दिखने लगता है। इसके विपरीत, यदि हम अंदर से संकट और अशांति की दशा में रहते हैं तो निश्चित है कि यह विश्व हमें उथल-पुथल से भरा नजर आएगा। 14वें अध्याय में यह व्याख्या की गई है कि कैसे 'यह संसार भीतर की दुनिया के एक दर्पण-प्रतिबिंब की तरह है।'

हर किसी के जीवन में, उसके व्यवहार में तथा विशेष रूप से सोचने की प्रवृत्ति में धीरे-धीरे परिवर्तन आता है, लेकिन यह प्रक्रिया चूँकि धीमी और क्रमिक होती है इस कारण हम उसका अहसास नहीं कर पाते हैं। खुशी को प्राप्त करने और उसे भोगने के सारे साधन होने के बावजूद हममें से कई लोग निरुद्‌देश्य भटकते रहते हैं और खुद को कष्ट पहुँचाते हैं, जैसा कि मनुष्य के स्वभाव में निहित होता है। सामान्य तौर पर लोग इस बात को लेकर निश्चित नहीं रहते कि उन्हें जीवन से क्या चाहिए, उनके जीवन का उद्‌देश्य और अर्थ क्या है? जीवन की सभी अच्छी चीजों का आनंद लेने की बजाय हम दूसरों के द्वारा या उन

परिस्थितियों के द्वारा सताया गया महसूस करते हैं, जिन पर हमारा नियंत्रण नहीं होता। हमारा जीवन अधिकतर मैं और मेरे के चारों ओर घूमता रहता है, और उससे आगे हमें कुछ नहीं दिखता। हम मैं और मेरे में इतने उलझ जाते हैं कि हम मैं और मेरे परिवार तथा अंदरूनी दायरे से बाहर ही नहीं निकल पाते। मैं पर अत्यधिक जोर देना ही सारे दुःखों, असंतोष और विवादों का कारण है। सिर्फ अपने वास्तविक स्वभाव को पहचानने के बाद ही इस चक्र से निकल पाते हैं। जागरूकता ही हमारा वास्तविक स्वभाव है। 15वें अध्याय में 'मनुष्य की अंतर्निहित प्रकृति' के अंतर्गत इस विषय से जुड़े विचारों का सार प्रस्तुत किया गया है।

जीवन चुनौतियों से भरा है। कभी-कभी जब हम उतार और चढ़ाव तथा दुःख एवं कष्ट का अनुभव करते हैं तो हमें लगता है कि यह एक रोलर कोस्टर की सवारी के समान है। एक प्रकार से हम अपने जीवन की अग्नि परीक्षा का सामना तब करते हैं जब इस प्रकार के उथल-पुथल और संकट से भरे क्षणों से गुजरते हैं। ऐसे समय में आध्यात्मिक अनुकूलन से हमें अपने मन को शांत करने, तथा साहस, सामर्थ्य और धैर्य प्राप्त करने में मदद मिलती है, जिससे कि हम जीवन की समस्याओं को आसानी से सुलझा पाते हैं। यही समय होता है जब हम विश्वास, प्रेम, संवेदना और सहानुभूति के महत्त्वपूर्ण सबक को सीख सकते हैं। संक्षेप में कहूँ तो मेरे लिए आध्यात्मिकता का अर्थ यही है। अपने अनुभवों, विशेषकर विफलताओं और भयंकर कष्ट के दौर से गुजरते हुए हम सभी अपनी आध्यात्मिक यात्रा तय करते हैं। 16वाँ अध्याय मनुष्य की आध्यात्मिक यात्रा पर चलते हुए, 'हम सभी का आध्यात्मिक विकास निश्चित है' का संदेश देता है।

17वें अध्याय में मैंने 'मानवीय वेदना परिहार्य है' के विषय को संक्षेप में रखा है। इस जीवन में कोई भी इससे बच नहीं सकता। हम सभी को कभी-न-कभी कष्ट सहना ही पड़ता है। बौद्ध धर्म का पहला चरम सत्य है, ''जीवन में दुःख है।'' दुःख को शारीरिक या मानसिक माना जा सकता है। यह तीव्रता के दृष्टिकोण से कम से लेकर असहनीय तक हो सकता है। कष्ट के प्रति दृष्टिकोण भी इस मायने में अलग-अलग होता है कि हम इसे कितना परिहार्य या अपरिहार्य, हकदार या नाहक, अर्थवान या अर्थहीन मानते हैं। हमें जिसकी इच्छा होती है, वह नहीं मिलता तो कष्ट निश्चित रूप से उत्पन्न हो जाता है। असंतोष मुख्य रूप से खुशी और सुख के पीछे भागने से उत्पन्न होता है और प्रमुख रूप से जब हम इसे बाहरी जगत् में ढूँढ़ते हैं और इस सत्य को अनदेखा कर देते हैं कि सुख का

स्रोत हमारे ही अंदर है। यह परिस्थिति तब और विकट हो जाती है जब हमें अपने दु:ख के कारण का भी ज्ञान नहीं होता है। यदि हम बदलावों को और विशेष रूप से प्रतिकूल परिवर्तनों को समझें और कठिन तथा अप्रिय परिस्थितियों को खुले दिल से स्वीकर करें, तथा इन सबसे भी कहीं अधिक, यदि हम वर्तमान में जिएँ तो हम कष्ट के प्रभावों को कम-से-कम कर सकेंगे।

□

अनुक्रम

	आभार	*7*
	परिचय	*9*
1.	ज्ञान और तर्क के युग में भगवान् की प्रासंगिकता	29
2.	ब्रह्म की पुन:प्राप्ति 'सबकुछ एक है'	36
3.	क्या मानवता का विकास बेहतर भविष्य के लिए हो रहा है	39
4.	भौतिकवादी पथ पर मानवता	46
5.	हम अपने जीवन के रचनाकार स्वयं हैं	54
6.	तन-मन का अंतरंग संबंध	61
7.	हमारी विचार-शैली	68
8.	नकारात्मकता के प्रति मन की अंतर्निर्मित प्रवृत्ति	73
9.	अचेतन मन की अप्रयुक्त क्षमता	78
10.	भावनात्मक बोझ क्यों बढ़ाएँ?	82
11.	भ्रम की दुनिया	85
12.	क्या स्वतंत्र इच्छा एक भ्रम है?	93
13.	अहम का आंतरिक आत्मा से टकराव	97

14. यह संसार एक आईना है आंतरिक जगत् का प्रतिबिंब 103
15. मनुष्य की अंतर्निहित प्रकृति 106
16. हम सभी का आध्यात्मिक विकास निश्चित है 122
17. मानवीय कष्ट से बचा जा सकता है 134

1

ज्ञान और तर्क के युग में भगवान् की प्रासंगिकता!

हमारा अपने जीवन पर पूर्ण नियंत्रण नहीं होता। अराजकता हावी रहती है। हर अनपेक्षित संभावना¨संभव होती है! अनिश्चितता के साथ असुरक्षा हमें भावनात्मक समर्थन के लिए उस परमात्मा की ओर प्रेरित कर देती है।

1

क्या भगवान् हैं? यह अब तक का सबसे हैरान करनेवाला सवाल है, जिससे मनुष्य सदियों से जूझ रहा है, किंतु न तो विज्ञान और न ही धर्म अपने मत को अब तक सिद्ध कर पाया है। इसका अर्थ यह है कि न तो विज्ञान सिद्ध कर पाया कि भगवान् नहीं हैं और न ही धर्म यह सिद्ध कर पाया कि भगवान् हैं। यद्यपि विज्ञान ने इस गुत्थी को सुलझाने के क्रम में भयंकर पहेलियों को भी सुलझा लिया है, जैसे, बिग बैंग से पहले क्या चल रहा था? चेतना का उदय कैसे हुआ? डार्क एनर्जी (ऊर्जा की काल्पनिक रूप/तत्त्व) क्या है, जिसके विषय में कहा जाता है कि 96 प्रतिशत ब्रह्मांड उसी से बना है? हालाँकि हम ज्ञान और तर्क के आधार पर पूरे विश्वास के साथ यह कह सकते हैं कि ऐसी कोई परम शक्ति/सत्ता नहीं है, जो हम सभी को दूर से देख रही है, और हमारे आचार, विचार और नैतिकता को नियंत्रित और भावनात्मक रूप से अभिव्यक्त कर रही है। दूसरी तरफ, धर्म पूर्ण रूप से आस्था (विश्वास, जिसके पास कोई प्रमाण नहीं) पर आधारित है, जो

अनेक धार्मिक मतों और परंपराओं से संबद्ध एक बड़ी आबादी को उम्मीद, समर्थन और सांत्वना देता है। इस प्रकार, जब तक विभिन्न धर्मों में भगवान् के प्रति गहरी आस्था है, और विज्ञान जीवन के रहस्यों को सुलझाने में सफल नहीं होता, तब तक मनुष्य के चित्त में भगवान् का अस्तित्व बना रहेगा।

2

भगवान् हैं या नहीं, इससे इतर हममें से अधिकांश लोगों को एक दैवी शक्ति, या परमात्मा के संरक्षण की आवश्यकता पड़ती है, और विशेष तौर पर तब जब हम अपने जीवन में संकट से घिर जाते हैं। इसके अतिरिक्त, हममें से कई लोगों को अपनी भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उस परमात्मा के समर्थन की आवश्यकता होती है। आस्था हमें अपने समाज के नैतिक और आचारसम्मत मूल्यों को अपनाने की प्रेरणा भी देती है। सर्वोच्च सत्ता की अनुपस्थिति में समाज में घृणा, आक्रामकता और हिंसा का राज कायम हो सकता है। एक प्रबुद्ध फ्रांसीसी दार्शनिक, फ्राँस्वा मारी ऑरोएट (1694–1778), जिन्हें 'वोल्तेयर' के नाम से भी जाना जाता है, उन्होंने ठीक ही कहा है कि यदि भगवान् नहीं हैं, तो हमें अपने हित के लिए उनका आविष्कार करना होगा। सार्वभौमिक भय, अंतर्निहित असुरक्षा और भविष्य को लेकर अनिश्चितता मनुष्यों को अत्यंत दुर्बल बना देती है। यही कारण है कि आधुनिक युग में तर्क और विवेक पर बढ़ते विश्वास के बावजूद मनुष्य में किसी-न-किसी रूप में परमात्मा के प्रति आस्था है।

3

मनुष्य का स्वभाव मूल रूप से दुर्बल और असुरक्षित होता है, तथा जीवन भर हममें से अधिकांश लोग इच्छा और भय के द्वंद्व में फँसे रहते हैं! शिशु जब आठ महीने का हो जाता है, तभी से अपने आपको अपनी माता से अलग समझने लगता है, और यह क्रम पंद्रहवें महीने तक चलता है, जब तक कि बच्चा अपने स्वयं को व्यक्ति रूप यानी मैं का रूप नहीं दे देता। उसके बाद से ही स्वयं के अहंकार के रूप में बदलने की यात्रा शुरू हो जाती है, जिसमें कि बढ़ता हुआ मैं अब केंद्रीय भूमिका में आ जाता है। व्यक्ति भय/इच्छा के द्वंद्व में फँस जाता है, जिसका परिणाम अंतत: संकट, कष्ट, दु:ख और पीड़ा के रूप में सामने आता है। अहम के प्रभुत्व को नियंत्रित किए बिना, कष्ट भोगनेवाले शांति और खुशी की तलाश करने लग जाते हैं। यही कारण है कि मनुष्य पहले परमात्मा या भगवान् की

तलाश करता है, और ऐसा वह अपने भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को ही पूरा करने के लिए नहीं करता, बल्कि उसे अपनी विशेष इच्छा की पूर्ति करनी होती है, दैनिक समस्याओं को सुलझाना होता है, और वह अपनी तकलीफ और कष्ट को कम करना चाहता है।

4

चूँकि भगवान् के गुणों को जान पाना संभव नहीं, इस कारण हर कोई भगवान् की एक अनोखी और अत्यंत व्यक्तिगत व्याख्या करता है, जो व्यक्ति विशेष के धार्मिक रुझान और माता-पिता के प्रभावों समेत स्वयं उस व्यक्ति की आध्यात्मिक प्रवृत्ति पर निर्भर करता है। भगवान् द्वारा हमारे जीवन पर नियंत्रण करने के विषय पर विज्ञान और धर्म दोनों की अवधारणा निस्संदेह अत्यंत सीमित है। भगवान् को जान लेना व्यक्ति की कल्पना से परे है। हममें से हर एक के मन में भगवान् की एक अलग या अनोखी अवधारणा होती है। फिर भी, यदि हम जीवन के रहस्यों और रहस्यवाद को समझने का प्रयास करते हैं, तो धीरे-धीरे भगवान् या परमात्मा के सार का पता लगाते हैं और तब अंत में हम अपने आपको, अपनी अनोखी आत्मा को समझ पाते हैं। परम सत्ता को जानने की यह इच्छा ही हमारे जीवन में परिवर्तन ला सकती है।

5

ऐसा क्यों होता है कि हम अकसर उन धारणाओं पर विश्वास करते हैं, जो अतार्किक और बिना साक्ष्य/सबूत के होते हैं? यदि हमारे पास किसी धारणा (जैसे भगवान् का अस्तित्व) के विरुद्ध कोई प्रमाण है भी, तो हम उस प्रमाण या साक्ष्य को नहीं मानते, क्योंकि उससे इनकार करने से असहज भावनाएँ पैदा होंगी, जिनसे हम असुरक्षित और खतरा महसूस करने लगेंगे। मनोविज्ञान में इस प्रवृत्ति को संज्ञानात्मक मतभेद कहते हैं। किसी महत्त्वपूर्ण धारणा को सुरक्षित रखने के लिए हम उस विचार को तर्कसंगत बनाने, नकार देने या खारिज कर देने का काम करते हैं, जो उस धारणा का समर्थन नहीं करता है। यह मनुष्य के सबसे बड़े शत्रुओं में से एक है, क्योंकि यह सीखने और जीवन की नई परिस्थितियों और बदलावों में खुद को ढालने में बाधा उत्पन्न करता है। हम किसी भी प्रमाण का विरोध करते हैं, जो हमारी गहरी भावना, जैसे भगवान् के अस्तित्व को चुनौती देता है। चूँकि भगवान् में विश्वास संज्ञानात्मक मतभेद और उससे जुड़े तनाव को दूर कर देता है,

इस कारण ही यह अधिकांश मनुष्यों के लिए एक आवश्कता बन जाता है। जैसे-जैसे मानवता का विकास हो रहा है और वह उच्चतर तर्क को अपना रहा है, वैसे-वैसे अधिक-से-अधिक लोगों ने भगवान् के अस्तित्व पर प्रश्न उठाना शुरू कर दिया है (ब्लॉग-न्यू-ए/बीइंग कॉगनिटिव डोसोनेंस से उद्धृत)।

6

सिर्फ बीसवीं सदी में ही, एक अनुमान के अनुसार, 167-175 मिलियन लोगों का जीवन (अमेरिका के कार्टर प्रशासन के पूर्व सुरक्षा सलाहकार जिबिगनी ब्रेजिंस्की के अनुसार) मनुष्य की अमानवीयता के कारण नष्ट हो गया। यही कारण है कि इस अवधि को इतिहास की सबसे रक्त-रंजित सदी (एरिक हॉब्सवॉन) माना जाता है। मनुष्य की भयंकर निर्दयता और कष्ट के बीच भगवान् और भगवान् की योजना की अच्छाई को कैसे सही ठहराया जा सकता है? जर्मन दार्शनिक जॉर्ज डब्ल्यू.एफ. हेगेल (1770-1831) के अनुसार, ''परमात्मा जिस तबाही या मानवीय त्रासदी को जन्म देता है, उसका एक व्यापक अच्छाई को लाने में योगदान होता है।'' बुराई वह औजार है, जिसका इस्तेमाल भगवान् द्वारा अच्छाई और करुणा को बढ़ाने और बेहतर बनाने में किया जाता है। इस कारण स्वतंत्रता के प्रति जागरूकता समय के साथ बढ़ती जा रही है। यही वजह है कि भगवान् को इस आरोप से मुक्त कर दिया जाता है कि उन्होंने ही जगत् में अपने अस्तित्व के लिए बुराई, कष्ट, और दु:ख को जारी रहने दिया है!

7

जीवन में कभी भी हमारे साथ कुछ भी हो सकता है। क्या हमारा उन पर थोड़ा सा भी वश होता है? हम संभावनाओं के संसार में रहते हैं। यह संभावना की ही बात है कि मैं ऑफिस पहुँच जाऊँ और रास्ते में कहीं कोई कार मुझे टक्कर न मार दे। फिर भी, जब अज्ञात शक्ति में आस्था रखने की बात आती है, तब हम इसे सुदूर की संभावना कतई नहीं मानते। किंतु सत्य यही है या कम-से-कम मेरे लिए यही है कि जीवन पर हमारा पूर्ण नियंत्रण नहीं होता है। अनिश्चितता हावी रहती है। प्रत्येक सुदूर की संभावना भी···संभव होती है! यह अनिश्चितता जब असुरक्षा के साथ मिल जाती है, तब हम भावनात्मक आधार के लिए परमात्मा की खोज शुरू कर देते हैं। यही वजह है कि महान् धर्मगुरुओं ने हमें सिखाया है कि अपने जीवन पर नियंत्रण का अभाव वास्तव में उस परम शक्ति या भगवान् की किसी अज्ञात योजना का संकेत होता है!

8

हममें से अधिकांश लोग सोच-समझकर या अनायास ही भगवान् को स्थिर, बिना बदलाववाला और पूर्ण मान लेते हैं। किंतु जब ब्रह्मांड में मनुष्यों समेत सभी तत्त्व परिवर्तनशील और अस्थिर हैं तो भगवान् कैसे स्थिर और गैर-विकासशील हो सकते हैं ? इसका उत्तर हो सकता है कि इस तथ्य में छिपा हो कि हम असुरक्षित, अपूर्ण होते हैं और हमारे अंदर कष्ट सहने की प्रवृत्ति होती है, इस कारण हम भगवान् को भी उसी दृष्टिकोण से देखते हैं, और इस कारण सुरक्षा तथा अन्य साथी मनुष्यों से सुरक्षा के लिए हमें भगवान् की आवश्यकता पड़ती है, जो पूर्ण, सर्वशक्तिमान और स्थिर हैं। यही कारण हो सकता है कि हम भगवान् को विकासशील रूप में देखने से डरते हैं, जबकि हम स्वयं उत्पत्ति के कारण अस्तित्व में आए हैं। इस कारण मनुष्यों को अब भगवान् को मनुष्य रूप में देखना बंद कर देना चाहिए और भगवान् को चेतना के उस सतत-विकासशील क्षेत्र के रूप में देखना शुरू कर देना चाहिए, जो स्वयं के विषय में अधिक जागरूकता और एकीकरण (बेथ ग्रीन, नव-आध्यात्मवाद के एक प्रसिद्ध गुरु) की दिशा में बढ़ रहा है। हम तभी न केवल दूसरे मनुष्यों, बल्कि परमात्मा के साथ भी एक होने का वास्तविक अनुभव कर सकेंगे।

9

ऐसा कहा जाता है कि भगवान् वास्तविक घटना से पहले ही चेतावनी के संकेत दे देते हैं, फिर भी यह हम पर निर्भर करता है कि हम भगवान् के संकेतों से आने वाले खतरे या मुसीबत को समझ पाते हैं या नहीं। यह जगत् एक आईने के समान है, जिसमें न केवल हमारी आंतरिक भावनाओं का बल्कि हम जिस मार्ग पर चल रहे हैं उसका भी प्रतिबिंब दिखता है। हमें उस दर्पण से लगातार सूचना मिलती रहती है, किंतु हम अपने दैनिक कार्यों में अकसर इतने व्यस्त रहते हैं कि हम उन संकेतों पर ध्यान नहीं देते। इतिहास साक्षी है कि भगवान् ने हमें हमारे अचेतन स्थिति में संकेत दिए हैं, फिर भी आँख मूँदकर चलते जाते हैं। जीवन जब अच्छा बीत रहा होता है, तब हम चेतावनियों को अनदेखा कर देते हैं और अपने खतरनाक रास्ते को नहीं बदलते, और जब हम सीखते हैं, तब तक बहुत देर हो जाती है। जीवन जब अच्छा चल रहा होता है, तब भी हम गलत रास्ते पर हो सकते हैं। यह समझने के लिए कि रास्ता सही है या गलत, हमें यह सीखना होगा कि भगवान् हमसे किस प्रकार संपर्क साधते हैं।

10

हममें से हर किसी के पास परमात्मा या भगवान् की वह अनुपम भेंट उसी समय से होती है, जब हम इस धरती पर कदम रखते हैं। उस भेंट की अभिव्यक्ति अधिकतम क्षमता के अनुसार करना ही व्यक्तिगत जीवन का उद्देश्य होता है। हम सभी में विशेष गुण और क्षमता होती है, साथ ही क्षमता का एक ऐसा भंडार होता है, जिसकी मदद से उन गुणों को अभिव्यक्त किया जा सकता है। विशेष गुण की अभिव्यक्ति होनी चाहिए। सुंदरता इसी में है कि हम उन विशेष क्षणों को कितने खुले मन से स्वीकार करते हैं। उन अवसरों के प्रति हमें निर्देशित करने में भगवान् हमेशा दयालु और स्पष्ट होते हैं, किंतु वह अपेक्षा करते हैं कि हम अपने जीवन में आनेवाले उन सही अवसरों का लाभ उठाने के लिए तत्पर और सूझ-बूझ का प्रयोग करें। इस प्रकार, हम अपनी सुविधा के अनुसार वास्तविकता के सृजन और परिवर्तन में सक्रिय भागीदारी निभा सकते हैं।

11

प्रागैतिहासिक काल से ही मनुष्य एक संतोषजनक सिद्धांत की तलाश कर रहा है, यानी उस उलझन का उत्तर तलाश रहा है कि यदि भगवान् सबसे प्रेम करनेवाले, सबकुछ जाननेवाले और सर्वशक्तिमान हैं, तो भी इस जगत् में इतना कष्ट और दु:ख क्यों है? मनुष्यों के बीच चारों तरफ बुराई के रहते हम भगवान् की अच्छाई का बचाव कैसे कर सकते हैं? मैं समझता हूँ कि जिस सबसे उचित उत्तर पर हमें विचार करना चाहिए उसके मुताबिक दैवी योजना में कष्ट और दु:ख का अनिवार्य स्थान है, जिसका निर्माण अंतत: सारे मनुष्यों की भलाई के लिए किया गया है। कई मामलों में कष्ट, दु:ख, शोक और परेशानी व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास के लिए अनिवार्य या प्रेरक तत्त्व साबित होते हैं। अकसर मनुष्य भगवान् से भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक सहारे की उम्मीद करता है। जीवन में कष्ट, दु:ख और अमानवीयता के बिना अधिकांश मनुष्य अपने जीवन के अर्थ और उद्देश्य तथा ब्रह्मांड में भगवान् की सृजनात्मकता की खोज कभी नहीं करेंगे।

12

एक प्रसिद्ध दृष्टांत है कि भगवान् जब मनुष्य की रचना कर रहे थे और वह उसे अंतिम रूप दे रहे थे, तब वे चाहते थे कि अपने सृजन का सारा रहस्य वह किसी ऐसी जगह पर छिपा दें, जहाँ पहुँचने का साहस मनुष्य कभी न करें। उन्हें

समझ में नहीं आ रहा था कि उसे कहाँ छिपाएँ। बहुत सोच-विचार के बाद उनके मन में विचार आया कि उसे चेतना की सबसे गहरी परत, यानी मनुष्य के आंतरिक मन में छिपा दें। वे जानते थे कि मनुष्य का मन इतना बेचैन रहेगा कि वह सामान्य तौर पर कभी अंदर झाँककर नहीं देखेगा। ''और मनुष्य का चालाक और क्षुद्र दिमाग आज भी भगवान् और उस रहस्य को ढूँढ़ रहा है। वह सबसे बड़ा रहस्य आज भी मन की गहराई में छिपा है।'' (कार्तिकेय सिंह, फिजिक्स ऑफ गॉड, 2009) इस कारण भगवान् को ढूँढ़ने के लिए बाहरी दुनिया की बजाय मन के अंदर की यात्रा करनी चाहिए।

□

2

ब्रह्म की पुनःप्राप्ति 'सबकुछ एक है'

संपूर्ण स्थान, काल, तत्त्व और ऊर्जा आपस में जुड़ी और गुँथी हुई है, जो सबकुछ एक है कहने का दूसरा तरीका है।

1

दुनिया भर के सभी प्रमुख धर्मों में 'एकत्व के सिद्धांत' की शिक्षा दी जाती है। अब विज्ञान ने इस शिक्षा को इस तथ्य की स्थापना के साथ उचित ठहराया है कि हमारे जीवन में, इस धरती पर, और ब्रह्मांड में जो कुछ है उन सबका आपस में एक संबंध है। विश्वप्रसिद्ध सैद्धांतिक भौतिक-विज्ञानी डेविड बोलिन ने सबकुछ एक है का समर्थन किया है। उन्होंने कहा कि यह 'उलझानेवाला क्रम' अस्तित्व की पूर्णता का अटूट क्रम, जो निर्बाध गति से बिना किसी दायरे के चलता है, वही इस संसार का चरम सत्य है, जिसके तत्त्व विभक्त, अलग और ठोस प्रतीत होते हैं। किंतु तत्त्व हमें चाहे जैसे भी दिखते हैं, वास्तव में उनका अस्तित्व नहीं होता। बोलिन ने कहा, ''हम जिसे खाली स्थान कहते हैं वहाँ ऊर्जा का बहुत बड़ा भंडार होता है।'' मानवता विश्व में अलगाव के भ्रम में जी रही है और यही भ्रम मनुष्य को न केवल अपने साथियों से बल्कि प्रकृति से भी अलग कर देता है।

2

सामान्य रूप से हम अपने आपको अलग और स्वायत्त संस्था मानते हैं, अपने साथी मनुष्यों से पूरी तरह अलग, क्योंकि हम अपनी इंद्रियों की मदद से यही देखते-देखते समझते हैं और इस भौतिक वास्तविकता में अलगाव का वैश्विक

दृष्टिकोण रखते हैं। हालाँकि प्राचीन काल में, विशेष तौर पर भारत में, मनुष्य का दृष्टिकोण अनिवार्य रूप से सम्यक् था। वेदों और उपनिषदों में सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्धांत यही प्रतिपादित किया गया था कि वास्तविक एक या परम है, अपरिवर्तनीय और शाश्वत है, और वह ब्रह्म है। और हमारा दिमाग इंद्रियों की मदद से सामान्य मानवीय जगत् को जिस प्रकार भिन्न और अलग (सीमित) दृष्टिकोण से देखता है, वह मात्र एक भ्रम है। इस प्रकार वेदों में 'विशुद्ध चेतना' का वर्णन किया गया है, जो संपूर्ण सृष्टि में व्याप्त है। अब आधुनिक भौतिकविज्ञानियों ने यह स्थापित कर दिया है कि एक एकीकृत ऊर्जा का क्षेत्र है, जो अणुओं से लेकर पौधों, जानवरों, ग्रहों और ब्रह्मांड की जितनी आकाश-गंगा हैं, सबको एक-दूसरे से जोड़ता है।

3

20वीं सदी में, पहली बार, भारतीय आध्यात्मिक गुरु 19वीं सदी के संत रामकृष्ण के प्रमुख शिष्य स्वामी विवेकानंद ने आकाश की अवधारणा प्रस्तुत की—यह ब्रह्मांड का सर्वव्यापी और सर्वमर्मज्ञ सार है। आकाश से ही किसी भी चीज की उत्पत्ति हुई है, जिसमें मनुष्यों से लेकर चाँद, तारे, उपग्रह और हमारे आसपास का जीवन शामिल है। आकाश से ही हर किसी की उत्पत्ति होती है और वह वहीं समाप्त भी हो जाता है। आगे चलकर डेविड बोम समेत अनेक वैज्ञानिकों ने आकाशीय क्षेत्र की अवधारणा की नए सिरे से खोज की, जो पूरे विश्व को एकजुट रखता है। यह ब्रह्मांड के सारे तत्त्वों और सारी शक्तियों का गर्भ है। इस कारण ब्रह्मांड-विज्ञानी और भौतिकविदों ने विवेकानंद तथा अन्य संतों द्वारा किए गए दावे की पुष्टि कर दी। ब्रह्मांड में एक गहन सत्य है, एक वास्तविकता है, जिसे उस आकाशीय क्षेत्र में देखा या अभिव्यक्त किया जाता है जो सबको जोड़ता और एकजुट रखता है (इर्विन लैजलो, ग्लोबल शिफ्ट इन द वर्ल्ड माइंड)।

4

बौद्ध धर्म तथा अन्य अनेक रहस्यवादी परंपराओं में ऐसा माना जाता है कि मन वास्तविकता का केंद्र है। इसका अर्थ यह हुआ कि वास्तविकता में सबकुछ मन में ही है। मन से बाहर कोई सत्य नहीं है। अब, उस विचार के सामने आने के 2500 वर्षों बाद, क्वांटम भौतिकी ने उस सत्य की खोज फिर से की है। क्वांटम या उपपरमाण्विक जगत् में जब दो कण एक-दूसरे पर प्रतिक्रिया करते हैं और एक-

दूसरे से अलग हो जाते हैं, यहाँ तक कि करोड़ों मील दूर चले जाते हैं, तब भी दोनों कण एक-दूसरे से संपर्क में रहते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि वे इस प्रकार व्यवहार करते हैं मानो एक ही हैं। 13.7 बिलियन वर्ष पूर्व जब बिग बैंग हुआ, जब एक अणु से भी छोटे बिंदु से ब्रह्मांड अस्तित्व में आया, तब से ही पूरा ब्रह्मांड क्वांटम के माध्यम से आपस में जुड़ा है और संपर्क में है। संपूर्ण स्थान, काल, तत्त्व और ऊर्जा का आपस में जुड़ाव और संपर्क है। और इसे ही दूसरे शब्दों में कहा जाता है कि सब एक है। वास्तविकता को समझने का हमारे पास एक ही स्रोत है, और वह है हमारा मन या ब्रह्म। वास्तविकता और कुछ नहीं, बल्कि हमारे मन की कल्पना है।

5

परम सत्य एक ही, एक वास्तविकता जिसे 'ब्रह्म' या 'परमात्मा' कहते हैं। इस कारण ब्रह्म, जो अद्वैत है, वही एकमात्र सत्य है। ब्रह्म के बाहर कुछ भी सत्य नहीं है। अद्वैतवाद के इस अद्वैत सत्य के मत को आदि शंकर (788-820 ई.) ने प्रतिपादित किया था। उन्होंने अद्वैत वेदांत की रचना की, जो उन वैदिक ग्रंथों की व्याख्या है, जिसका अनुसरण कुछ उपनिषदों के ज्ञाताओं ने भी किया। आगे चलकर समस्त वेदांतवादी मतों ने उनके मत को स्वीकार कर लिया। बौद्ध मत भी कहता है कि विशुद्ध चेतना (ब्रह्म) ही परम सत्य है। अब हाल में की गई कुछ वैज्ञानिक अन्वेषणों से पता चला है कि ब्रह्मांड के सारे तत्त्व और सारी ऊर्जा आपस में गहराई से जुड़े हैं, सब एक है। इस प्रकार, विश्व जैसा दिखता है वह सत्य नहीं है, यह सब माया है, भ्रम की दुनिया है, और एकमात्र सत्य है ब्रह्म।

□

3

क्या मानवता का विकास बेहतर भविष्य के लिए हो रहा है?

कभी-कभी ऐसा देखा गया है कि सामूहिक रूप से धीरे-धीरे ही सही, लेकिन भय का स्थान प्रेम ले लेता है। इस पर गौर करना कठिन है, लेकिन अध्ययनों से इस बात की पुष्टि होती है। मनुष्य के मन से भय आसानी से नहीं निकलेगा, लेकिन प्रेम एक बार आगे बढ़ जाए तो भय अपने आप धीरे-धीरे पीछे हटने लगेगा।

1

ब्रह्मांड वैज्ञानिकों के सामने एक कठिन प्रश्न है कि जीवन क्या मात्र प्रकृति की एक घटना है या फिर गूढ़ ब्रह्मांडीय कहानी का हिस्सा है। सशक्त मानवशास्त्र संबंधी सिद्धांत कहता है कि ब्रह्मांड का सृजन हमारे कारण ही हुआ है, यानी ब्रह्मांड की उत्पत्ति जीवन और चेतना को स्वरूप देने के लिए हुई। यह सिद्धांत अनिवार्य है, क्योंकि यदि जीवन असंभव होता, तो कोई इसके विषय में जान ही नहीं पाता। यह अवधारणा अनेक ब्रह्मांडीय संयोगों पर आधारित है, जिसकी पुष्टि ब्रह्मांड वैज्ञानिकों ने की है और जिसने उनकी धारणा को पुष्ट किया है कि उन असंभव घटनाओं के पीछे एक सरल कारण यही था कि जीवन को स्वरूप लेना ही था अन्यथा इस प्रकार की घटनाएँ होती ही नहीं। द गोल्डीलॉक्स एनिग्मा में पॉल डेविस ने बताया है कि भौतिक के नियम और ब्रह्मांड की उत्पत्ति ने एक अनिर्दिष्ट

रूप से निश्चित कर दिया कि जीवन और मन का उदय होना ही था। ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रह्मांड को पहले से ही पता था कि मनुष्यों की उत्पत्ति होनी ही है।

2

यदि यह सत्य है कि मनुष्यों समेत सारे जीव और कुछ नहीं, बल्कि सितारों का हिस्सा हैं तो हम अपने इतिहास/वंश की खोज सितारों की पीढ़ियों से कर सकते हैं। हमारे शरीर के प्रत्येक अणु की उत्पत्ति सितारों के गर्भ से हुई है। हाइड्रोजन के अतिरिक्त सारे तत्त्व करोड़ों वर्ष पूर्व अस्तित्व में आ गए थे, और उनसे ही अंतत: हम मनुष्यों की उत्पत्ति हुई। अमेरिकी सैद्धांतिक भौतिक विज्ञानी और ब्रह्मांड विज्ञानी लॉरेंस एम. क्रॉउस ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा, ''यदि सितारों का विस्फोट नहीं होता तो आप यहाँ नहीं होते, क्योंकि कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, लोहा, और ऐसा सारे तत्त्व जिनका संबंध उत्पत्ति से है, उनका सृजन काल की शुरुआत में नहीं हुआ था। उनका सृजन सितारों की परमाणु भट्ठियों में हुआ, और आपके शरीर में उनके प्रवेश का एकमात्र रास्ता यही था कि उन सितारों ने धमाके करने की कृपा की···सितारों ने मौत को गले लगाया, ताकि आप आज यहाँ आ सकें।''

3

क्या जीवन बिना सोच-समझ के अस्तित्व में आया, और यह लंबे समय से चली आ रही उत्पत्ति की प्रक्रिया का एक साधारण प्रतिफल है, या हम यहाँ किसी सार्थक उद्देश्य से आए हैं? मनुष्यों के बीच जहाँ इस प्रश्न पर कई पीढ़ियों से बहस जारी है, वहीं इसके पक्ष और विपक्ष में विचार रखनेवालों को अपनी बात साबित करने के लिए कोई ठोस प्रमाण नहीं मिला है। हालाँकि सारे जीवों के अस्तित्व के संबंध में देनेवाला चेतना का एक क्रांतिकारी विचार भी है, जिसके मुताबिक व्यक्तिगत और वस्तुनिष्ठ, दोनों ही सत्य का अस्तित्व एक साथ हुआ (दीपक चोपड़ा) और इसने ही विश्व के प्रति हमारे नजरिए में क्रांतिकारी परिवर्तन किया। क्वांटम सिद्धांत ने यह प्रमाणित किया है कि चेतना से ही वास्तविकता का निर्माण होता है। चेतना मस्तिष्क की जटिलताओं का अंतिम परिणाम नहीं है, जैसा कि मन का अध्ययन करनेवाले अनेक वैज्ञानिक मानते हैं, बल्कि इसके उलट यही ब्रह्मांड की रचना करता है। इस कारण जीवन की संपूर्ण अवधारणा बदलाव के एक दौर से गुजर रही है। इस पर विश्वास करना कठिन हो सकता है, किंतु

वैज्ञानिक भी धीरे-धीरे इस बात को मानते जा रहे हैं। यदि ऐसा है तो फिर जीवन का एक उद्देश्य या अनेक उद्देश्य हैं, और हम यहाँ इस कारण नहीं हैं, क्योंकि हमें ब्रह्मांड ने नचाकर यहाँ पहुँचा दिया है, बल्कि यह ब्रह्मांड हमारी वजह से यहाँ आया, यानी हमारी चेतना की वजह से अस्तित्व में आया।

4

हमारा जीवन अधिक-से-अधिक जटिल और आपस में जुड़ता दिखाई दे रहा है। अनेक सामाजिक और पर्यावरण संबंधी चुनौतियों का सामना करने के बाद समाज अब आपस में अधिक जुड़ रहे हैं। स्थानीय तौर पर और अल्पकालिक दृष्टि से वे भले ही प्रतिगामी प्रतीत हो रहे हों, लेकिन इन परिवर्तनों का परिणाम निश्चित रूप से प्रगतिशील होगा। मानवता चरणों में विकसित हो रही है। मनोविज्ञान के एक अमेरिकी प्राध्यापक डॉ. क्लेयर डब्ल्यू. ग्रेव्स के अनुसार, ''चेतना के क्षेत्र में मानवता निश्चित रूप से महत्त्वपूर्ण छलाँग लगा रही है।'' उन्होंने मनुष्य के विकास की व्याख्या इस प्रकार की है कि वह जटिल चरणों में उत्तरोत्तर प्रगति पथ पर बढ़ रहा है। ऊपर की ओर की जा रही यह प्रगति हमारे जीवन में आ रहे परिवर्तनों को अपनाने का सूचक है। डॉ. ग्रेव्स के शोध के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि हम एक महत्त्वपूर्ण समय और तेजी से होनेवाले वैश्विक परिवर्तन की दिशा में बढ़ रहे हैं। इसमें इंटरनेट और पर्यावरण संबंधी घटनाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान है। मानवता जिस प्रकार सिकुड़ रही है और जुड़ रही है, उससे कहा जा सकता है कि यह अंततः एक ग्लोबल ट्यूब (वैश्विक गाँव) बन जाएगा, जो अस्तित्व का एक नया स्तर होगा, जिसमें अस्तित्व संबंधी समस्याओं को सुलझाने में नए जीव-मनो-सामाजिक वैज्ञानिक प्रणाली मदद करेगी और सद्भाव कायम होगा।

5

वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चलता है कि मानवता का विकास अब भी हो रहा है, और निश्चित रूप से यह बेहतर नस्ल की ओर हो रहा है, क्योंकि क्रमिक विकास सदैव प्रगतिशील होता है। हम अपने आसपास जिन परिवर्तनों को देखते हैं, उनमें से अधिकांश हमारे जीवन के साथ-साथ पूरे समाज की भलाई के लिए हो रहे हैं। नील डोनाल्ड वॉल्श ने अपनी किताब 'व्हेन एवरीथिंग चेंजेज, चेंज एवरीथिंग' में तर्क दिया है कि जीवन मूल रूप से केवल एक ही दिशा में परिवर्तित हो सकता है : वह दिशा जिसकी विकास को आवश्यकता होती है, वह दिशा जो विस्तार की अपेक्षा

करता है, वह दिशा जो उसे समृद्ध बनाती है। हमारा सामूहिक लक्ष्य बेहतर आत्मचेतना और नैतिक जिम्मेदारी के प्रति होना चाहिए, अच्छाई और सुंदरता के प्रति प्रेम स्वाभाविक रूप से बढ़ेगा। हमें हर हाल में अपने अहम की तलाश करनी चाहिए तथा जीवन में अर्थ और उद्देश्य को ढूँढ़ना चाहिए। इस प्रकार हमारी सामूहिक चेतना पूरी मानव जाति की बेहतरी के लिए विकसित हो सकेगी।

6

हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वजों का भय हम तक चला आया है, और वह इस आधुनिक युग में भी कायम है। यह भय मनुष्यों के चित्त की गहराई में बैठ चुका है। सार्वभौमिक भय ने एक पद्धति का रूप ले लिया है, जो हमारी सामूहिक चेतना के ताना-बाना में समा चुका है, और उसकी व्याख्या हमारे मूल के रूप में की जा सकती है। अचेतन शब्द का प्रयोग स्विस मनोचिकित्सक कार्ल जंग द्वारा मनुष्य के मन में जमा आनुवंशिक और अतीत के अनुभवों के भंडार की व्याख्या के लिए किया गया था, जो हममें से हर एक के अचेतन मन में व्याप्त है। प्रागैतिहासिक मनुष्य के मन में व्याप्त अंतर्निहित भय आधुनिक मनुष्यों की सामूहिक चेतना में भी इकट्ठा है। हालाँकि कभी-कभी क्रमिक तो कभी-कभी सामूहिक अचेतना में भय की बजाय प्रेम की ओर होनेवाला बदलाव गौर करने लायक दिखता है। इसे देख पाना हालाँकि कठिन है, किंतु अध्ययनों से इसकी पुष्टि होती है। मनुष्य के चित्त से भय आसानी से नहीं निकलेगा, लेकिन एक बार प्रेम आगे बढ़ा तो भय अपने आप धीरे-धीरे पीछे हटने लगेगा।

7

अध्ययनों ने दरशाया है कि यदि आबादी का एक छोटा हिस्सा भी शांति प्राप्त कर लेता है, तो यह उनके आसपास के माहौल में प्रतिबिंबित होता दिखाई पड़ता है। हालाँकि समस्या यह है कि इनमें से अधिकांश लोग एकांत में रहते हैं और उनका प्रभाव उन तक ही सीमित रहता है, जबकि वे लोग जो अपने साथी मनुष्यों पर आक्रमण और अपराध में लिप्त रहते हैं उनका प्रभाव दूसरों पर कहीं अधिक होता है! यहाँ तक कि महर्षि महेश योगी ने भी कहा है कि यदि कुल आबादी के एक प्रतिशत हिस्सा का वर्गमूल भी यदि ट्रांसेंडैंटल ध्यान यानी सिद्धि कार्यक्रम को अपना ले तो समाज में जीवन की गुणवत्ता, सद्भाव और व्यवस्था में देखने लायक सुधार होगा। इसे 'महर्षि इफेक्ट' के नाम से जाना जाता है। जब

शांतिप्रिय और आध्यात्मिक लोग पूरी आबादी का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन जाते हैं, तब हम एक छोर का एक बिंदु देखते हैं (वह स्तर जहाँ बदलाव की गति को रोका नहीं जा सकता) जहाँ से हम अपनी सामूहिक सोच/चेतना में मौलिक परिवर्तन देख सकते हैं।

8

वैश्विक चेतना और भौतिक जगत् के बीच एक प्रत्यक्ष सह-संबंध होता है, विशेष तौर पर असाधारण मानवीय घटनाओं के दौरान। वैश्विक चेतना परियोजना द्वारा किए गए प्रयोगों ने दिखाया है कि मानवीय चेतना से अव्यवस्थित लोगों की संख्या कम अव्यवस्थित दिखने लगती है या अधिक व्यवस्थित दिखने लगती है, जब लोग ऐसा करने की समान मंशा रखते हैं, या जब सुसंगत सामूहिक चेतना का एक विशेष स्तर प्राप्त हो जाता है। दूसरे शब्दों में, हम सभी के मन भौतिक जगत् को क्वांटम के स्तर पर संगठित कर सकते हैं। इस प्रकार व्यक्तिगत अणुओं से व्यक्तिगत मस्तिष्क और उससे वैश्विक मस्तिष्क या वैश्विक चेतना का उदय होता है। अब चेतना यदि निश्चित रूप से सार्वभौमिक और सर्वव्यापी है तो ब्रह्मांड में जिसका भी अस्तित्व है वह अंततः आपस में जुड़ा होगा और चेतना के माध्यम से उसे एकजुट कर दिया जाएगा।

9

इसमें कोई शक नहीं कि पिछली कुछ सदियों में नरसंहारों, युद्धों, प्रताड़नाओं, अंधविश्वास और बलि के लिए की जानेवाली हत्याओं में कमी से सकल हिंसा में गिरावट आई है, लेकिन साथी मनुष्यों पर किए जानेवाले व्यक्तिगत अपराध और हिंसा में कमी नहीं देखी गई है। अब तक के इतिहास में यह अपेक्षाकृत सबसे शांतिपूर्ण युग रहा हो, फिर भी हमारे सामूहिक चित्त में आज भी हिंसा और निर्दयता जैसी मौलिक मानवीय लालसा की जड़ें गहरी हैं। हालाँकि हमारे बेहतर दूतों (हमारी प्रकृति के बेहतर दूत) का धन्यवाद, जिनके कारण हिंसा के इन आवेगों को बढ़ने से रोका जा रहा है, क्योंकि अधिक-से-अधिक लोग अब मानवीय मामलों में तर्क, सूझ-बूझ और न्यायसंगत व्यवहार को अपना रहे हैं। यह बात वैश्विक स्तर और दूरगामी तौर पर सही हो सकती है, लेकिन मौजूदा समय में, जब मनुष्य अधिक असुरक्षित और असहिष्णु हो रहे हैं, तब हमलों, अपराधों और हिंसा में तेजी आने का खतरा बना हुआ है।

10

दूसरी तरफ कुछ विकासवादी मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि मनुष्यों के विकास की 50,000 वर्षों से भी अधिक की अवधि में मनुष्यों के मन और शरीर में गौर करने लायक परिवर्तन कम ही हुए हैं, जबकि वैज्ञानिकों के अनुसार मनुष्य की चेतना में विकासवादी बदलाव आए हैं। भारतीय संत श्रीअरविंदो के अनुसार विकास प्रमुख रूप से चेतना का क्रमिक उदय है और वह मानते हैं कि मनुष्य का मन प्रकृति में अंतिम रूप से वास करने के लिए पूर्ण नहीं है, जिस प्रकार जीवन तत्त्व से विकसित हुआ, और मन जीवन से पैदा हुआ, उसी प्रकार मन से चेतना के एक उच्च स्तर का विकास होना अभी बाकी है। इसी प्रकार हंगरी के एक प्रसिद्ध विज्ञानी दार्शनिक इर्विन लैजलो का कहना है कि एक-दूसरे से, जीवन-मंडल से तथा ब्रह्मांड से अपने गहरे और अखंड संबंध को समझ लेने के बाद मनुष्य अहंकार और इंद्रियों की सीमा में बँधी चेतना से एक व्यापक परस्पर चेतना की ओर बढ़ रहा है।

11

अच्छाई और बुराई, दोनों ही, सामूहिक मानव मन की गहराई में रहते हैं। क्या हम मौलिक रूप से अच्छे हैं, जैसा कि कई लोग मानते हैं, लेकिन हमारी अच्छाई पर बुराई हावी हो जाती है? या हमारे अंदर मूल रूप से बुराई होती है, जिसे अच्छाई ढँक देती है? दार्शनिक और प्रकृतिवादी फ्रांसिस बेकन (1561-1626) ने कहा था, ''मनुष्य के स्वभाव में अच्छाई की ओर झुकाव की एक गहरी छाप होती है···यह एक जाति के रूप में हमारा अनोखापन है, जिसमें अच्छाई से भरा हमारा मौलिक आचरण चार चाँद लगाता है, तथा जो हमारे जीवन में वास्तविक और स्थायी बदलावों को लानेवाले संदेशों के द्वार खुला रखता है।'' बीसवीं सदी के सबसे महान् मनोवैज्ञानिकों में से एक अब्राहम मासलॉ का मानना था, ''अंदर से सारे लोग शालीन होते हैं।'' अपने जीवन के अंत तक उनके मन में हमारी अच्छाई की अटूट भावना थी, जब उन्होंने लिखा कि मनुष्यों के गुणों की 'एक उच्च प्रकृति' होती है, और हमारी जाति अपने मानवीय स्वभाव और जैविक प्रकृति के कारण शानदार हो सकती है।''

12

क्या मनुष्य मूल रूप से अच्छा होता है और बुराई एक पथभ्रष्टता है? हम इस प्रश्न पर सदियों से बहस करते आ रहे हैं। मनुष्य का स्वभाव एक अत्यधिक

जटिल विषय है, क्योंकि यह अनेक मनोवैज्ञानिक-सामाजिक तत्त्वों से गहराई से जुड़ा होता है। बेशक हममें से अधिकांश लोग अच्छाई और बुराई की अति के बीच आते हैं। सामान्य तौर पर मनुष्य के स्वभाव में क्रूरता और निर्दयता प्रमुख रूप से आनुवंशिक त्रुटियों और/या माहौल से जुड़े कारकों जैसे बचपन में दुर्व्यवहार आदि के कारण देखी जाती है। इसके बावजूद जब हम दूसरों के साथ जुड़ते हैं, एक-दूसरे के साथ सहानुभूति और करुणा को साझा करते हैं तो मनुष्यों में पाई जानेवाली अच्छाई के कारण स्वभाव में अच्छाई अभिव्यक्त होती है, भले ही कभी-कभी इसे देख पाना कठिन होता है। दूसरी तरफ, बुराई तब सामने आती है, जब हम सबसे टूटकर अलग हो जाते हैं और हमारा संपर्क कट जाता है (स्टीव टेलर द्वारा साइकोलॉजी टुडे में पोस्टेड, द रीयल मीनिंग ऑफ गुड ऐंड इविल से)। □

4

भौतिकवादी पथ पर मानवता

असुरक्षा और भय के कारण ही भौतिक वस्तुओं को जुटाया जाता है''और यही इस यंत्रवत और न्यूटोनियन दुनिया में हो रहा है, जहाँ मनुष्य के ''वास्तविक आध्यात्मिक स्वभाव पर उसके ही अंदर से उठती जीवन में किसी भी तरीके से सुरक्षित और सफल होने की इच्छा हावी हो जाती है।''

1

1543 तक मनुष्य अपने आपको भगवान् की प्रिय संतान मानकर ब्रह्मांड का केंद्र समझता था और उसकी सुरक्षा की विरासत में जीवन व्यतीत कर रहा था। फिर निकोलस कोपरनिकस (1473–1543) ने सूर्य केंद्रीय मॉडल पेश किया और यह सिद्ध किया कि पृथ्वी नहीं, बल्कि सूर्य हमारे सौरमंडल का केंद्र है। तभी से एक के बाद एक जिस प्रकार वैज्ञानिक आविष्कार होते चले गए, मनुष्य की अपनी छवि का धीरे–धीरे अवमूल्यन होता गया। सबसे बड़ा सदमा तो तब लगा, जब चार्ल्स डार्विन (1809–1882) ने विकास के अपने सिद्धांत को साबित किया। कई लोगों के लिए यह विश्वास करना कठिन था''! मनुष्य एक तुच्छ बंदर का वंशज है! मनुष्य 'सर्वेश्रेष्ठ ही जीवित रहेगा' की स्पर्धा का एक प्रतियोगी रह गया था, जिसकी रचना सितारों के केंद्र में संलग्न से हुई थी। कई वैज्ञानिकों ने तो यहाँ तक कह दिया कि हम जिसका सम्मान जीवन के रूप में करते हैं वह सिर्फ मनुष्य का अस्तित्व है।

2

ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार हमारे अंदर जड़ें जमा चुकी अलगाव की भावना व्यक्तिगत आध्यात्मिक विकास की राह का सबसे बड़ा रोड़ा है, जहाँ मैं को दूसरों के मैं से पूरी तरह अलग माना जाता है, उसी प्रकार मानव जाति जीवमंडल/प्राकृतिक विश्व से अलगाव के भ्रम के कारण कष्ट भोगता है। अलगाव की यह भावना, जो अज्ञान और हमारे जीवन में कष्ट का मौलिक कारण है, मानव जाति को भी वैश्विक जलवायु के परिवर्तनों से कष्ट पहुँचा रही है। हाल के दिनों तक हमें पता भी नहीं था कि हम प्रकृति की देवी से कितनी गहराई और अंतरंग रूप से जुड़े हैं। इसकी बजाय मानवता अपने संकीर्ण हितों के लिए उसका दोहन और उस पर विजय प्राप्त करने के पीछे मतवाला था। बर्कले स्थित प्रिंसटन और कैलिफॉर्निया यूनिवर्सिटी के अर्थशास्त्रियों ने एक दिलचस्प वैज्ञानिक अध्ययन किया है, जिसमें वैश्विक हिंसा और मनुष्यों के बीच विवाद को वैश्विक जलवायु में परिवर्तन से जोड़ा गया है। इस कारण, अहम की तरह ही, उसका पालन करनेवाली मानव सभ्यता और पारिस्थितिकी भी इस मौलिक भ्रम से प्रभावित है (डेविड लॉय द्वारा पोस्टेड अवेकनिंग फ्रॉम द इल्यूजन ऑफ ऑन)।

3

इस आधुनिक दुनिया में आत्मा और मनुष्य की आध्यात्मिक प्रकृति की पारंपरिक अवधारणा पीछे रह गई है, जबकि भौतिकवादी विचारों ने मानव शास्त्र से लेकर चिकित्सा विज्ञान और जीव विज्ञान समेत प्रत्येक अध्ययन के क्षेत्र और प्रयास का मूल स्थान ले लिया है। नतीजा यह हुआ है कि हमने यंत्रवत अवधारणाओं और सिद्धांतों पर आधारित वैज्ञानिक उपायों से मिलनेवाले निदानों से जुड़ी गलत धारणाओं की एवज में एक भारी कीमत चुकाई है। हम अपने जीवन में भौतिक वस्तुएँ जुटाने पर अत्यधिक जोर देते हैं, जिससे भौतिक समृद्धि तो मिल जाती है, लेकिन आध्यात्मिक रूप से हम भुखमरी के शिकार हो जाते हैं। मनुष्य की अपनी आध्यात्मिक प्रकृति की अनदेखी करने से इस दुनिया ने घोर कष्ट झेला है।

4

मनुष्य की प्रकृति और स्वभाव को आखिर क्या हुआ है, और क्यों ऐसा होता है कि वही मनुष्य जिसमें विचार करने और तर्क और समझदारी से कार्य करने की क्षमता और अपेक्षा होती है वह दूसरों के प्रति इतना आक्रामक और शत्रुतापूर्ण क्यों

होता जा रहा है ? क्यों हम अपने आंतरिक अहम से दूर होते जा रहे हैं, और कैसे हम अपने ही साथी मनुष्यों के प्रति प्रेम, करुणा और सहानुभूति को लेकर इतने अज्ञानी हो सकते हैं ? हमारी सोच, विचार और कार्य करने के तरीके में कोई बहुत बड़ी गड़बड़ी आ गई है। इन प्रश्नों के उत्तर आसानी से नहीं दिए जा सकते हैं! फिर भी, मुझे लगता है कि सबसे महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि मनुष्य ने कुल मिलाकर एक भौतिकवादी जीवन को अपना लिया है। सभ्यता के विकास के साथ हममें से अधिकांश लोगों ने जीवन के अनिवार्य तत्त्व के रूप में आध्यात्मिकता को नहीं अपनाया और कहीं-न-कहीं हमारा संपर्क अपनी अंतर्निहित आध्यात्मिक प्रकृति से टूट चुका है। यह विचार इस तथ्य से भी पुख्ता होता है, क्योंकि भौतिकवाद के उदय से पहले जो समस्याएँ थीं उन्हें भौतिकवादी उपायों से सुलझाने के प्रयासों के कारण हालात और बिगड़ गए हैं।

5

इस तथ्य के सामने आने के बावजूद कि कष्ट, असंतोष और हिंसा हमारे दैनिक जीवन का अभिन्न अंग बन चुके हैं, इस बात को बिलकुल भी महसूस नहीं किया जा रहा है कि हमें अपने सोचने और जीवन के तरीके में सुधार करने की आवश्यकता है। कष्ट झेलनेवाले कुछ ही लोग उन धारणाओं को त्यागने का गंभीर प्रयास करते हैं, जिनके कारण उनमें असंतोष की भावना पैदा होती है। आखिर क्यों हम उन तरीकों और धारणाओं से चिपके रहते हैं जिनसे हमारे जीवन में अवरोध उत्पन्न होता है ? क्वांटम यांत्रिकी की खोज के बाद लगभग एक सदी गुजर चुकी है, जिसने उस प्राचीन धारणा को पुख्ता किया कि हमारे आसपास का भौतिक जगत् आपस में गहराई से जुड़ा है, और हम सारे मनुष्य (तथा पेड़, जानवर, चट्टान आदि) मौलिक रूप से दूसरे मनुष्यों से जुड़े हैं। फिर भी हम इन अनिवार्य निष्कर्षों की शिक्षा कभी अपने बच्चों को नहीं देते, क्योंकि हम स्वयं इससे सहमत नहीं हैं। अधिकांश लोग उस पर ही विश्वास करते हैं, जिसे वह देखते हैं—यानी जो देखो उस पर ही विश्वास करो—न कि वास्तविकता क्या है। इसका परिणाम यह है कि हम अकसर अकेला और परित्यक्त, एक निराश इनसान के जैसा महसूस करते हैं, और हमारे साथ सात बिलियन एकाकी और असहाय लोग भी इस जगत् में हैं! हम जब तक भौतिकवादी जीवन-पद्धति के कारण उत्पन्न अपने तौर-तरीके, शारीरिक और मानसिक दुर्गुणों को दूर नहीं करते तब तक मानव जाति कष्ट भोगती रहेगी।

6

मनुष्य जाति की सबसे बड़ी समस्या एक-दूसरे से अलग होने की भावना है, जो गहराई तक जड़ें जमा चुकी है। हमें लगता है कि हम अकेले, गुप्त, असंबद्ध हैं, और दूसरों से संभवत: महज रक्त से जुड़े हैं और गहनतम स्तर पर भी किसी से जुड़े नहीं हैं। सदियों से हमें यही सिखाया गया है कि ऐसा ही होता है और अनुभव भी इसकी पुष्टि करता आया है। इस विचार को प्रतिदिन हमारे मन में पुख्ता किया जाता है, चाहे हम शाम को समाचार देख रहे हों या महज अपने छोटे से दायरे में होनेवाली गतिविधियों को देख रहे हों, यह विचार सामूहिक मानव चित्त में जड़ें जमाता रहता है। वैदिक युग में, सबसे मौलिक स्तर पर भी आपस में जुड़े होने की अनेक धारणाएँ थीं, लेकिन धीरे-धीरे मनुष्य उससे भटकता हुआ भौतिकवाद की ओर चला आया। जब तक मानवता में अभिन्नता और आपस में जुड़े होने की एक सशक्त भावना नहीं होगी, तब तक मनुष्य का मनुष्य के प्रति अमानवीय व्यवहार निर्बाध रूप से जारी रहेगा।

7

हम इस दुनिया में बंद मुट्ठी लेकर आते हैं, और अंतत: खाली हाथ ही जाएँगे। फिर भी हम दौलत तथा अन्य सांसारिक सुविधाएँ इस प्रकार जुटाते रहते हैं मानो हमारी मृत्यु कभी होगी ही नहीं। इसी सार्वभौमिक भ्रम के कारण भौतिकवादी जीवन हावी हो गया है। यह न्यूटोनियन विचार पर आधारित सांसारिक विचार है, और यह हमारे जीवन के हर पहलू में दिखता है। यह मान लेता है कि विश्व उदासीन और यांत्रिक है, जहाँ आत्मा और भावना के लिए कोई स्थान नहीं होता। ऐसे अनेक लोग जो मानते हैं कि वे धार्मिक पथ पर चल रहे हैं, उनमें दूसरों के प्रति न प्रेम होता है और न करुणा, जबकि सबसे अधिक आवश्यकता उसी की होती है। कई लोगों का अच्छाई और प्रकृति की सुंदरता से संपर्क कट चुका है। अपवित्र प्रतीत होनेवाले इस पथ पर चलते हुए मनुष्य खुद भी दु:ख भोगता है और दूसरों को भी कष्ट देता है। हम इस प्रकार व्यवहार करते हैं, मानो इस संसार और प्रकृति के स्वामी हम ही हैं। हम यह मानते हैं कि हम इस ब्रह्मांड के केंद्र में हैं।

मनुष्य में अपने आसपास के जगत् के वास्तविक सत्य को देखते और समझने की अत्यंत सीमित क्षमता होती है। निश्चित रूप से अपने आनुवंशिक गुणों और जिन सामाजिक परिवेशों में वे पले-बढ़े हैं, उसके कारण दो व्यक्ति विश्व की व्याख्या बिलकुल एक जैसा नहीं कर सकते हैं। आदि मानव युग से ही सामूहिक

चित्त में भय, असुरक्षा और चिंता की गहन भावनाओं ने मामले को और भी उलझा दिया है। किंतु सबसे बुरा तो आज से लगभग 300 वर्ष पूर्व हुआ, जब हमने न्यूटन के युग के बाद न्यूनकारी तरीकों को अपनाते हुए आध्यात्मिक और धर्मपरायण जीवन का त्याग कर दिया। हालाँकि आध्यात्मिक अज्ञानता के प्रति धीरे-धीरे जागरूक होने के बाद, हम ध्यानपूर्वक जीवन के नए तरीके की ओर बढ़ रहे हैं, जहाँ हम उन आध्यात्मिक मूल्यों और व्यवहारों को अपना रहे हैं, जिन्हें सदियों पहले छोड़ दिया था।

चूँकि इस विश्व में सबकुछ निरंतर बदल रहा है, इस कारण हमारा अहम, जो हमें अपनी पहचान प्रतीत होता है, वह सदैव असुरक्षित महसूस करता है। अपनी हैसियत/स्थिति को हमेशा बढ़ाने या बनाए रखने के लिए यह संघर्ष करता है और इस वजह से हमारा अहम ही हमारे आत्म-केंद्रित व्यवहार के लिए तथा उससे जीवन में पैदा होनेवाली हताशा और कष्ट के लिए जिम्मेदार है। इन सबसे कहीं अधिक, सार्वभौमिक भय एक ऐसी लहर बन जाता है, जो हमारे चित्त की गहराई में समा जाता है और अकसर हमारी भावनाओं और व्यवहार को अपने वश में रखता है। समाज में सत्ता, हैसियत और अधिकार के लिए संघर्ष के अलावा, असुरक्षा और भय के कारण हम भौतिक वस्तुओं को इकट्ठा करते रहते हैं। ऐसा करने से हम और भी असुरक्षित और इस बात को लेकर चिंतित हो जाते हैं कि हमने जीवन में जो पाया उसे और विस्तार कैसे दें। सुरक्षित और संतुष्ट महसूस करने की अपेक्षा हम इस कुचक्र में और फँसते चले जाते हैं। यही इस यांत्रिक और न्यूटनवादी संसार में हो रहा है, जहाँ मनुष्य के आध्यात्मिक स्वभाव पर जीवन में किसी भी प्रकार सुरक्षित और सफल होने की प्रबल भावना हावी हो गई है।

10

सबसे मौलिक स्तर पर मनुष्य के अंदर इस जगत् में असुरक्षित और चिंतित होने की तथा अपने अंतर्मन से कट जाने की एक प्रवृत्ति होती है। इस अंदरूनी कमजोरी से निपटने की बजाय हम इसके प्रति अचेतन हो गए हैं और हमने अपनी असुरक्षा की वास्तविकता को कहीं दूर धकेल दिया है। एक समृद्ध संस्कृति में अनेकानेक गतिविधियों और भटकावों (द सेलेसियल विजन, जेम्स रेडफील्ड) के कारण इस समस्या पर किसी का ध्यान नहीं जाता। असुरक्षा की समस्या पर विजय प्राप्त करने के लिए हमने एक-दूसरे के साथ खेल खेलना शुरू कर दिया, जिससे कि हम ऊर्जा के स्तर का पता लगा सकें और फायदा उठा सकें। इस कारण हमारे

बीच संघर्ष और झगड़े बढ़ने लगे। अपने शाश्वत और आध्यात्मिक स्वभाव का आनंद उठाने की बजाय हम संघर्ष और विवाद की ओर जाने लगे, जो भौतिकवादी जीवन के अनिवार्य तत्त्व हैं।

11

मीडिया का धन्यवाद कि हम चाहे किसी भी कोने में क्यों न रह रहे हों, हम सभी मनुष्य का मनुष्य के विरुद्ध किए जानेवाले भयंकर कृत्यों को देखने-सुनने के अभ्यस्त हो चुके हैं, जिनमें बलात्कार और कत्ल शामिल हैं। किंतु बड़ी आसानी से इस प्रकार की भयंकर घटनाएँ हमारे मन से थोड़े ही समय में निकल भी जाती हैं। हम ऐसे व्यवहार करते हैं मानो कुछ हुआ ही न हो। ऐसा प्रतीत होता है जैसे हम इतने कठोर हो गए हैं कि हम उदासीन, सनकी, और छिछला सोच रखते हैं। हालिया विज्ञान ने दिखाया है कि हमारे अंदर छिपा शत्रु है ईर्ष्या (माइकल शम्स द्वारा पोर्ट किया गया, व्हाई आर ह्यूमन्स सो क्रुएल?)। यह वैसा ही जैसे एम.आर.आई. स्कैल में दिख रहा हो कि हम जिनसे ईर्ष्या करते हैं, उनकी बदकिस्मती को देखते ही हमारे मन के कुछ खास केंद्र हलचल करने लगते हैं। यह दुर्भावना तथाकथित नुकसान की खुशी में अभिव्यक्त होती है। सहानुभूति, करुणा और दूसरों की भलाई को लेकर चिंता जैसे अनिवार्य गुण हमें सच्चा इनसान बनाते हैं, लेकिन हमारे आज के जीवन में यह सब कहीं नहीं दिखता। क्या यह अपने स्वार्थ के प्रति केंद्रित रहना और दूसरों के प्रति उदासीन हो जाना भौतिकवादी और यांत्रिक जीवन का परिणाम है? क्या मनुष्य की दैवी प्रकृति की कोई भूमिका नहीं रह गई है? इन प्रश्नों के उत्तर देने की नहीं, इन पर विचार की आवश्यकता है।

12

अनुभवजन्य आँकड़े बताते हैं कि इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि एक लंबी अवधि में मनुष्यों की हत्या कम हुई है। 15वीं सदी में प्रति 100,000 व्यक्ति पर प्रतिवर्ष 41 नरसंहार की घटना हुई, जिसमें आनेवाली सदियों में गिरावट दर्ज की गई और जो 21.9, 11, 3.2, 2.6, और 20वीं सदी में 1.4 पर आ गई। किंतु ऐसा मुख्य रूप से नरसंहार, राजनीतिक हत्या और राष्ट्रों के बीच युद्ध में तेजी से कमी आने के कारण हुआ। जहाँ तक व्यक्तिगत अपराधों का मुद्दा है तो दुनिया के अधिकांश हिस्सों में शायद ही कोई अंतर आया है। दरअसल, कुछ हिस्सों में, अपराध और हिंसा में पर्याप्त गिरावट आई है। मानवीय चेतना का विकास नहीं

हुआ है, और हममें से अधिकांश आदिम मन के साथ जी रहे हैं जो स्वभाव से ईर्ष्यालु, असहिष्णु और स्वार्थी होता है तथा जब भी हमारे अहम को चुनौती मिलती है तो हम दूसरों को चोट पहुँचाते हैं। इन प्रवृत्तियों के कारण हम उन लोगों के खिलाफ क्रोध, नफरत और रोष का प्रदर्शन करते हैं, जो हमारे दायरे से बाहर प्रतीत होते हैं और इस कारण ही आधुनिक समाज में भी व्यक्तिगत अपराध और अमानवीय व्यवहार देखा जाता है।

13

यह संसार संकट की स्थिति में है। मानवता अपने सबसे बुरे दौर से गुजर रही है और संकट विभिन्न मोरचों पर है। चारों तरफ कुछ-न-कुछ गड़बड़ है। कोई मौलिक गड़बड़ी है! एक बेहतर विश्व बनाने के लिए हमारे सबसे अच्छे प्रयास भी विफल हो गए हैं या कुछ क्षेत्रों में उनका उल्टा असर भी हुआ है। यह विश्वास जैसे-जैसे मन की गहराई में बैठता जाता है, हम निराशा, सनक, स्तब्ध हो जाना या अलगाव (चार्ल्स आइंस्टीन, द एसेंट ऑफ ह्यूमिनिटी) की भावना से प्रतिक्रिया करते हैं। मनुष्य के स्वभाव से इनकार ही प्रमुख रूप से सारे संकट का वास्तविक कारण है। हम जो हैं उसके अतिरिक्त हमने अपने आपको भी नकार दिया है, और यह मान लिया है कि हम एक-दूसरे से तथा प्रकृति और आसपास के जगत् से भी अलग हैं। चार्ल्स आइंस्टीन ने मूल कारण का पता लगाया है—यह मानवता का प्रकृति तथा अपने आप से, भावना तथा प्रकृति से अलगाव के कारण है। इसका एकमात्र हल यही दिखता है कि हम अपने साथी मनुष्यों और प्रकृति के विषय में सोचने और देखने के नजरिए को बदलें।

14

मानवता का विकास असामान्य रूप से हो रहा है। विकास संतुलित नहीं है। विज्ञान और तकनीक में प्रगति के साथ-साथ तर्क और तर्कसंगत सोच में विकास नहीं हो रहा है। तकनीकी तरक्की ने जीवन को अधिक आरामदेह, सुरक्षित और सुविधाजनक बना दिया है। हालाँकि सोचने का तरीका जस-का-तस रहने के कारण मनुष्य के कष्ट कम नहीं हुए हैं। मूल रूप से हम अपने साथी मनुष्यों से और अधिक अलग-थलग और कटा हुआ महसूस करते हैं। अलबर्ट आइंस्टीन ने खुलकर कहा था, ''हम अपने आपको, अपने विचारों को इस प्रकार महसूस करते हैं, जैसे हम दूसरों से अलग हैं। यह हमारी चेतना का एक दृष्टिभ्रम है। यह भ्रम ही हमारे लिए

कैद के समान है, जो हमारी व्यक्तिगत इच्छाओं तथा अपने गिने-चुने प्रिय लोगों के लिए ही लगाव को सीमित कर देती है। हमारा उद्देश्य अपने दायरे को बढ़ाते हुए सारे जीवों और प्रकृति की सुंदरता को गले लगाकर इस कैद से अपने आपको आजाद कराने का होना चाहिए।'' हम जब तक अपने साथी मनुष्यों के विषय में सोचने का तरीका नहीं बदलेंगे, तब तक मानवता कष्ट झेलती रहेगी।

15

यदि हम किसी ब्रह्मांड विज्ञानी से अणुओं और परमाणुओं की उत्पत्ति के बारे में पूछेंगे, जो हमारे शरीर के मौलिक कण हैं, तो उनका कहना होगा कि कैसे हम एक लिहाज से सितारों से बने हैं। इन अणुओं का निर्माण करोड़ों वर्ष पूर्व तारों के गर्भ में हुआ था। शुरुआत में ये तारे और कुछ नहीं केवल हाइड्रोजन थे, लेकिन जैसे-जैसे गुरुत्वाकर्षण ने मूल में हाइड्रोजन पर दबाव डाला, अन्य तत्त्व जैसे हीलियम, कार्बन, नाइट्रोजन और ऑक्सीजन का निर्माण हुआ। इस प्रकार हमारा शरीर और कुछ नहीं बस ब्रह्मांड का हिस्सा है। जैसा कि विश्वप्रसिद्ध सैद्धांतिक भौतिक विज्ञानी और लेखक मारसेलो ग्लीसर ने लिखा है, ''यदि हम तारों के धूल कण हैं, जैसा कि अंतरिक्ष में कोई भी अन्य पदार्थ है, तो हम ब्रह्मांड से अलग नहीं हैं : हम ब्रह्मांड में हैं और ब्रह्मांड हममें है।'' हम ब्रह्मांडीय विकास के प्रतिफल हैं, जिसकी शुरुआत 13.7 बिलियन वर्ष पूर्व बिग बैंग से हुई। जीवन एक-दूसरे से जुड़ी चौंकानेवाले संयोगों का परिणाम भी दिखती है। यदि ऐसा है तो, हमारा एक मकसद होना चाहिए। यहाँ आने का हमारा एक गहन उद्देश्य है।

□

5

हम अपने जीवन के रचनाकार स्वयं हैं

विश्व से अपने संबंध को लेकर एक संपूर्ण क्रांतिकारी व्याख्या के तहत हमें उन सबमें एक सक्रिय योगदान देनेवाले के रूप में देखा जाता है, जिन्हें हम देखते हैं, ठीक वैसे ही जैसा कि अतीत की आध्यात्मिक परंपराओं में कहा गया था। एक लिहाज से हमारी दुनिया इस कारण अस्तित्व में है, क्योंकि हम इसे देखते हैं और हमने इसका निर्माण किया है।

1

हमारा मन जिस किसी की अवधारणा बना लेता है, उसे जीवन में हासिल किया जा सकता है। हम सभी की अंदरूनी सोच की एक निश्चित पद्धति होती है और वही पद्धति जीवन में होनेवाली हर घटना को प्रभावित करती है। यह ठीक ही कहा गया है, ''एक बार आपने अपने लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित कर दिया और उसके साथ-साथ अपेक्षित कदम उठाने को तैयार हैं, तो यह संसार आपके लिए सहायक बनने लगेगा।'' उदाहरण के लिए, सृजनात्मक कल्पना, अपनी कल्पना से जीवन में होनेवाले विशिष्ट व्यवहारों या घटनाओं की कल्पना करने की एक तकनीक है। कई लोग ऐसा कहते हैं कि व्यक्ति जिसकी इच्छा करता है उसकी पूर्ण योजना बनाने के बाद उसके प्राप्त करने की कल्पना बार-बार की जाए तो वह व्यक्ति अपनी इच्छा को प्राप्त कर सकता है। दूसरे शब्दों में, हम जो करना या पाना चाहते हैं उस पर अपने दिमाग को केंद्रित कर दें और उसे हासिल करने का दृढ़ निश्चय

कर लें, तथा उसकी दिशा में कदम उठाते हुए अपनी छोटी-मोटी गलतियों में सुधार कर आगे बढ़ें, तो हम निश्चित और सकारात्मक रूप से जो चाहें उसे प्राप्त कर सकते हैं।

2

आधुनिक वैज्ञानिक अध्ययनों ने 'आकर्षण के नियम' की पुष्टि की है, जो न्यू थॉट मूवमेंट का प्रमुख सिद्धांत है, और जिसकी मान्यता पूरे विश्व में है। यह 'दुनिया का एक समग्र दृष्टिकोण' है, जो यह कहता है कि मन, शरीर और भावनाओं का आपस में संबंध होता है। मुख्य बात यह है कि ''आप जिस पर ध्यान केंद्रित करते हैं, उसे आकर्षित करते हैं।'' यह पूरी तरह सिद्ध हो चुका है कि जीवन में जो होता है उसका आधार हमारी सोच होती है। क्वांटम भौतिक के पीछे के सिद्धांतों का सार अल्बर्ट आइंस्टीन की एक उक्ति से व्यक्त किया जा सकता है, ''एक पदार्थ ऊर्जा है।'' चूँकि भौतिक जगत् में सबकुछ अदृश्य ऊर्जा क्षेत्रों द्वारा आपस में जुड़ा है, इस कारण हमारी मंशा और केंद्रित विचार-पद्धति हमारे आसपास की वास्तविकता का निर्माण करते हैं। यही वजह है कि जब हम किसी के विषय में सोचते हैं, तब न केवल हमारे शरीर में, बल्कि हमारे व्यक्तिगत दायरे में भी ऊर्जा का सृजन होता है, जहाँ उस वास्तविकता को देखा जा सकता है।

3

हमारे मन में अपने आसपास के विश्व को बदल देने की एक अगाध क्षमता होती है, लेकिन उस शक्ति पर विश्वास न करने के कारण ही अकसर हम अपने इरादे को छोड़ देते हैं। हम अपनी क्षमता पर संदेह करते रहते हैं। भौतिकी के क्षेत्र में हुए आविष्कारों ने जीवन में क्वांटम का समावेश किया और आध्यात्म, उपचार और वास्तविकता के नए दृष्टिकोणों का उद्‌भव हुआ। क्वांटम यांत्रिकी ने यह सिद्ध किया है कि अवलोकनकर्ता होने के कारण वास्तविकता की प्रकृति पर हमारा सीधा और वास्तविक प्रभाव पड़ता है। हमारे अंदर निश्चित रूप से अपने जीवन में परिवर्तन लाने की अद्‌भुत क्षमता है। फिर भी उन इच्छाओं को अमल में लाने के लिए हमें निरंतर ध्यान लगाकर केंद्रित और सकारात्मक रूप से विचार करने की आवश्यकता है। फिर हम परिणामों को खुद-ब-खुद देख सकेंगे। इस प्रकार हम उन घटनाओं के निर्माता बन सकते हैं, जो हमारे जीवन को प्रभावित करती हैं।

4

सामान्य तौर पर हम प्रति मिनट 6–10 सेकेंड से अधिक अपना ध्यान केंद्रित रख पाने में सफल नहीं रहते! यही कारण है कि किसी भी चीज पर ध्यान केंद्रित करना इतना कठिन होता है, चाहे वह हमें कितना ही आकर्षक क्यों न लगे। आकर्षण का नियम (हम अपने विषय में आनेवाले विचारों और तसवीरों को आकर्षित करते हैं, जिनमें हमारी अवचेतन इच्छाएँ, चाहे सकारात्मक हों या नकारात्मक, शामिल होती हैं) अच्छे और बुरे विचारों में भेद नहीं करता है। यदि दिमाग दैनिक जीवन और सामान्य बातों पर सरसरी तौर पर विचार करते हैं तो इन पर हमारा ध्यान केंद्रित नहीं हो सकता है। अधिकांश लोग यह मान लेते हैं कि उनके पास अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं के अतिरिक्त दूसरे विषय पर विचार के लिए पर्याप्त समय नहीं है। वे लोग तब हताश हो जाते हैं, जब उनकी इच्छा स्वरूप नहीं ले पाती है। इसका कारण बस इतना है कि उन्होंने 'आकर्षण के नियम' का अपने हक में इस्तेमाल करना नहीं सीखा है जिससे कि वे अपनी इच्छा को परिणाम में बदल सकें।

5

हाल के अध्ययनों से पता चला है कि हम हमेशा ही सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों प्रकार की ऊर्जा का संचार करते हैं, और हमारे संपर्क में आनेवाले लोग उस ऊर्जा को सूक्ष्म रूप को महसूस करते हैं और उसके अनुरूप ही व्यवहार करते हैं। सकारात्मक लोग उत्साहित करेंगे और सहयोग देंगे, जबकि नकारात्मक लोग हमें हतोत्साहित करेंगे और मनोबल गिराएँगे। हम हमेशा ही मनभावन किस्म के लोगों से मिलने के लिए उत्सुक रहते हैं। यदि हम आज सुखदायक व्यक्ति बन गए तो कल हमें जीवन में अधिक सकारात्मक व्यक्तियों/ऊर्जा को आकर्षित करने का मौका मिलेगा! यही नहीं, ब्रह्मांड भी हमारी ऊर्जा के तरंगों के प्रति प्रतिक्रिया करेगा, इस कारण हमें हताशा, असंतोष, और नकारात्मक भावनाओं की अपेक्षा वैसे ही भावों का संचार करना चाहिए, जिनका हमारी इच्छा और अपेक्षा से सामंजस्य हो।

6

यदि अपने विचारों, अनुभवों पर गौर करें तो हम पाएँगे कि वे निर्बाध रूप से आते और जाते रहते हैं। यदि हम अपने मन (चेतना) पर ध्यान लगाएँ, तो हम

देखते हैं कि असल में यह जागरूकता तथा अपनी इच्छा से अभिव्यक्ति का एक केंद्र है। हम वैचारिक आदान-प्रदान करनेवाले विश्व में रहते हैं, जहाँ विचारों और मंशाओं का हमारे आसपास की वास्तविकता के निर्माण में एक अहम भूमिका होती है। हमें यह महसूस करना चाहिए कि अपने स्वभाव के अनुसार ही प्रत्येक विचार का सृजन होता है। हम उन विचारों का चयन कर सकते हैं, जो हमें वहाँ ले जा सकते हैं, जहाँ हम जाना चाहते हैं। अपने सपनों और अपनी लालसा को पूरा करनेवाले विचारों को चुनने और उन्हें पुख्ता करने की हमें पूरी स्वतंत्रता होती है। तब जाकर ही हम अपने विचार की पद्धति से नियंत्रित होने की बजाय उस पर नियंत्रण कर सकेंगे। इस प्रकार ही हम आदान-प्रदान वाले विश्व में सक्रिय भागीदारी निभाकर अपने जीवन को बदल सकते हैं।

7

हमारे विचारों से ही हमारी वास्तविकता तय होती है। हम जब उन बातों पर सोचना बंद कर देते हैं, जो हम नहीं चाहते और हम जो चाहते और हासिल करना चाहते हैं, उसका विचार करने लगते हैं, तब हमारे जीवन में सुधार आने लगता है। वैज्ञानिक अध्ययनों ने इस बात की पुष्टि की है कि विचारों की सक्रिय भागीदारी का हमारे आसपास की वास्तविकता के निर्माण में अहम भूमिका होती है। 'द स्पॉनटेनियस हीलिंग ऑफ बिलीफ' (2008) में ग्रेग ब्रैडेन ने इस तथ्य की विस्तार से व्याख्या करते हुए लिखा है कि हम दुनिया के बारे में, अपने और अपनी क्षमताओं, तथा अपनी सीमाओं के बारे में जैसा सोचते हैं, वैसे ही अनुभवों से गुजरते हैं। अपनी इच्छाओं और मंशाओं के विपरीत कार्य करने की बजाय, हमें उनके सदृश ही सद्भाव के साथ विचार और कार्य करना चाहिए। गौतम बुद्ध ने सही कहा था, ''हम जो हैं वह हमारी सोच का परिणाम है। मन ही सबकुछ है। हम जैसा सोचते हैं, वैसा बन जाते हैं।''

8

संपूर्ण भौतिक वास्तविकता ऊर्जा के तरंगों से बनी है। उसी प्रकार हमारे विचार भी ऊर्जा के तरंग हैं। विज्ञान ने इसी अकाट्य सत्य को उजागर किया है। यह बताता है कि कैसे हमारे विचारों का इतना प्रबल प्रभाव पड़ता है। हमारे साथ जो कुछ होता है उसे निर्धारित करने में उनकी ही भूमिका होती है। एक जापानी आध्यात्मिक गुरु मासामी साइनोजी ने कहा, ''प्रत्येक विचार, शब्द, और भावना में एक अनोखा भाव होता है। और जिनमें समान आवृत्ति होती है वे एक सृजनात्मक

क्षेत्र का निर्माण करते हैं। जब किसी विशेष सृजनात्मक क्षेत्र की ऊर्जा एक चरम सीमा तक पहुँच जाती है, तब वह किसी-न-किसी रूप में दृश्य जगत् में प्रकट हो जाती है। एक सृजनात्मक क्षेत्र जैसे-जैसे आकार में बढ़ता जाता है, यह समान प्रकार के विचारों को अभिव्यक्त करनेवाले व्यक्तियों पर प्रबल से प्रबल प्रभाव डालता है। इस प्रकार यह लोगों के निर्णयों, संबंधों, और शारीरिक स्थितियों को प्रभावित करता है।''

9

प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी फ्रेड एलन वोल्फ समेत कई अन्य ने 1970 के दशक में कहा, ''हम अपनी वास्तविकता का सृजन स्वयं करते हैं।'' उस समय से ही इस विषय पर दुनिया भर में अनेक शोध हुए, जिन्होंने इसका पता लगाया कि कैसे हमारे विचार उस भौतिक वास्तविकता को प्रभावित करते हैं, जिन्हें हम अपने ध्यान और विचारों के कारण उनके स्वरूप में देखते हैं। हालाँकि यहाँ यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है : यदि हमारे विचार भौतिक वास्तविकता को प्रभावित कर सकते हैं, तो फिर हम अपने जीवन में इस मौलिक घटना के परिणामों के प्रति पर्याप्त रूप से जागरूक क्यों नहीं होते या क्यों नहीं देखते, तथा क्यों हम इस सरल सूत्र को अपने फायदे के लिए इस्तेमाल नहीं कर पाते? इसका उत्तर यह है कि अकसर हमारा मन इस पर अपना ध्यान स्थिर नहीं रख पाता है। दैनिक जीवन में हम जब एक से अधिक बातों पर ध्यान केंद्रित करते हैं तब हमारा ध्यान अकसर बँटा रहता है। शायद ही किसी के लिए यह संभव है कि वह एक बार में एक ही विषय पर ध्यान लगा सके। हम आमतौर पर अनेक कार्यों में उलझे रहते हैं। यही कारण है कि आकर्षण के अकाट्य सिद्धांत के बावजूद हम अपने विचारों पर भरोसा नहीं कर पाते।

10

यदि हम अपने आपको बदलना चाहते हैं, तो सबसे पहले अपने मन पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है। यह मन की दशा और स्वास्थ्य ही है, जो जीवन के विस्तार और प्रकृति को निर्धारित करता है। शुरुआत करनेवालों के लिए हमें विचार की पद्धति पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। हमारे मन में अनेकानेक विचार आते हैं, जो अनायास आते हैं और रहस्यमयी तरीके से लुप्त हो जाते हैं। सारे विचार और कुछ नहीं, बल्कि उपपरमाण्विक स्तर पर ऊर्जा और सूचना हैं। और

इसी ऊर्जा को जब मंशा के साथ केंद्रित और सशक्त किया जाता है, तब यह मानसिक तरंगों का रूप ले लेता है, जिनमें हमारे आसपास के जगत् में परिवर्तन लाने की प्रबल क्षमता होती है। सकारात्मक विचार और भावनाओं में शक्ति होती है, क्योंकि वे भगवान् से हमारे जुड़ाव की जागरूकता को पुख्ता करते हैं! (बियोंड द सीक्रेट, ब्रेंडा बार्नबी) इस प्रकार हम अपने विचारों के माध्यम से जिनकी कल्पना करते हैं वैसा ही अनुभव करते हैं।

11

हम जिस ब्रह्मांड और विश्व का अनुभव करते हैं, वह सतत परिवर्तनशील ऊर्जा से बना है, जो एक-दूसरे से प्रतिक्रिया कर उस जगत् का निर्माण करते हैं, जो हमें दिखाई देता है। हम इसे संभावनाओं और आकांक्षाओं का जगत् कह सकते हैं। क्वांटम यांत्रिकी ने हमारी चेतन भूमिका को निष्क्रिय दर्शक से सक्रिय अंशदाता में या फिर पूरे ब्रह्मांड में ऊर्जा के क्षेत्रों से प्रतिक्रिया के माध्यम से बदलाव के सक्रिय तत्त्व में तब्दील कर दिया है। वे सारे तत्त्व जो वास्तविकता का निर्माण करते हैं वे प्रासंगिक होते हैं। वे अवलोकन की क्रियाओं पर निर्भर करते हैं। क्वांटम सिद्धांत ने एक दिमागी, मस्तिष्क-आधारित ब्रह्मांड के दरवाजे खोल दिए हैं। हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि वास्तविकता मन पर आधारित होती है (द मिस्ट्रीज ऑफ रिएलिटी, दीपक चोपड़ा, मेनस काफ्टोस, और रुडॉल्फ तांजी)। विश्व से अपने संबंध को लेकर एक संपूर्ण क्रांतिकारी व्याख्या के तहत, हमें उन सबमें एक सक्रिय योगदान देनेवाले के रूप में देखा जाता है, जिन्हें हम देखते हैं, ठीक वैसे ही जैसा कि अतीत की आध्यात्मिक परंपराओं में कहा गया था। एक लिहाज से, हमारी दुनिया इस कारण अस्तित्व में है, क्योंकि हम इसे देखते हैं और हमने इसका निर्माण किया है।

12

इस भौतिक जगत् में हम मनुष्य महज दर्शक से कहीं अधिक हैं और जैसा कि भौतिक विज्ञानी हमें बताते हैं, हम ब्रह्मांड के तरंगों और कणों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर सकते हैं। न्यू एज साहित्य के अमेरिकी लेखक ग्रेग ब्रैंडन का तर्क है कि मानवीय भावनाओं का डी.एन.ए. और सामूहिक प्रार्थना पर प्रभाव पड़ता है, और संभव है कि उनका शारीरिक उपचार पर भी प्रभाव हो। उन्होंने आगे व्याख्या की है, ''अपने डी.एन.एस. के द्वारा निभाई जानेवाली भूमिका के अलावा हमारे

संबंधों की सफलता और मन की शांति का आधार हमारी धारणा और अपने बारे में हमारा सोचना का तरीका होता है। ब्रह्मांड हमारे विचारों के प्रति प्रतिक्रिया करता है। हमारे विचार करने के तरीके का यही अंतर हमें महज निष्क्रिय दर्शक की अपेक्षा शक्तिशाली सर्जक बनाता है—यह दावा हाल के दिनों में कुछ बड़े विद्वानों के बीच सबसे बड़े विवाद का विषय भी बन गया है।'' संक्षेप में, हमारी धारणाओं में इस भौतिक जगत् के घटनाक्रम को बदलने की शक्ति होती है। आप इस पर विश्वास करें या नहीं, एक सहभागी वास्तविकता में, हम अपनी धारणाओं से अपने अनुभवों का सृजन करते हैं, साथ ही, हमने जिसकी रचना की है उसका अनुभव भी करते हैं।

13

भारतीय-अमेरिकी समग्र स्वास्थ्य और नव युग के गुरु दीपक चोपड़ा कहते हैं कि सभी जीवों के समान ही ब्रह्मांड भी चेतन और अपने प्रति जागरूक है। ब्रह्मांड विज्ञान और क्वांटम यांत्रिकी के क्षेत्र में हाल में किए गए अध्ययनों ने इस अद्‌भुत तथ्य का रहस्योद्‌घाटन किया है। क्वांटम के अध्ययन बताते हैं कि यदि जंगल में गिरते पेड़ को देखने के लिए हम मौजूद नहीं रहते तो उसकी कोई ध्वनि नहीं होती है। इसी प्रकार हमारे बिना कोई ब्रह्मांड नहीं है। तारे वहाँ तब हैं जब हम उन्हें देखते हैं। इस कारण दर्शक के रूप में हम वास्तविकता का निर्माण करते हैं। जब कोई दर्शक (चेतना) वहाँ नहीं होता, तो वास्तविकता भी नहीं होती, क्योंकि तरंगों की क्रिया का कोई पतन नहीं होता, और सबकुछ शुद्ध संभावनाओं में होता है। इस प्रकार चेतना से परे कोई जागरूकता नहीं होती है।

□

6

तन-मन का अंतरंग संबंध

मन और तन 'एक ही सिक्के के दो पहलू हैं'... हम जिसका विचार करते हैं और जिस पर विश्वास करते हैं, उसमें तन-मन के परस्पर प्रभाव से मनोरोगों को दूर करने की क्षमता होती है।

1

इस पर विश्वास करना कठिन है, लेकिन यह सच है कि इस दुनिया में कम-से-कम 95% लोग सही आनुवंशिक खाका लेकर आते हैं, लेकिन समय के साथ-साथ, इन लोगों में माहौल तथा बाहर से ग्रहण की गई बातों के कारण शारीरिक और मानसिक विकृतियाँ आ जाती हैं। हर सेल के बाहर कोशिका झिल्ली पर रिसेप्टर्स हैं और इन रिसेप्टर्स द्वारा संकेतों/सूचनाओं को ग्रहण किया जाता है तथा कोशिकाओं में परिवर्तन होता है। अपने आसपास के माहौल का हमारे ऊपर सबसे महत्त्वपूर्ण प्रभाव विचारों के कारण होता है, जो रोगों को जन्म देते हैं। सर्दी-जुकाम से लेकर हार्ट अटैक, मधुमेह, और कैंसर तक की जड़ में हमारे नकारात्मक विचार और उनसे जुड़ी भावनाएँ छिपी होती हैं। मनोवैज्ञानिकों का अनुमान है कि हमारे लगभग 70 प्रतिशत विचार नकारात्मक और व्यर्थ होते हैं। सकारात्मक विचार और धारणाओं से हमारे स्वास्थ्य बेहतर होता है, जबकि नकारात्मक विचारों और धारणाओं से रोग बढ़ता है। वर्तमान में मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु उसका मन है, वह भी तब जब उसे निर्बाध छोड़ दिया जाता है।

2

मनुष्य का शरीर एक अत्यधिक जटिल तंत्र के समान है, जिसमें अरबों अणु रासायनिक तथा अन्य शारीरिक प्रक्रियाओं के माध्यम से लगातार क्रिया और प्रतिक्रिया करते रहते हैं। नवीनतम निष्कर्ष बताते हैं कि वास्तव में सारे जीवों के बीच काफी हद तक एक संबद्धता होती है। वर्ल्ड शिफ्ट इंटरनेशनल के सह-संस्थापक डॉ. किंग्सले एल. डेनिस का कहना है, ''हममें से हर एक व्यक्ति से अदृश्य क्वांटम तरंगें निकल रही हैं और अन्य सभी जीवों में प्रविष्ट हो रही हैं। यह आश्चर्यजनक नई खोज असल में प्रत्येक जीव को एक अस्थानिक क्वांटम क्षेत्र में रखती है जहाँ आदान-प्रदान (शरीर मिलते हैं) की तरंगें विद्यमान होती हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति का न केवल एक-दूसरे के साथ सहानुभूति रखने का संबंध होता है, बल्कि ये व्यक्ति आपस में एक-दूसरे के साथ संबद्ध भी होते हैं।'' यही कारण है कि एक सबसे गहरे स्तर पर सार्वभौमिक मन/सर्वोच्च चेतना हमें आपस में जोड़ रही है।

3

निर्णय लेने या चुनाव करने में इस यंत्रवत और भौतिकवादी संसार में हम अकसर अपने दिल की बजाय अपने दिमाग पर भरोसा करते हैं। अकसर हम अपने दिल की आवाज को अनसुना कर देते हैं, जबकि हम जानते हैं कि वह अधिक भरोसेमंद होता है, क्योंकि यह स्वार्थ और अहंकार के भय के वश में नहीं होता है। अब वैज्ञानिकों ने हृदय और भावनाओं के बीच एक निकटवर्ती संबंध की पुष्टि कर दी है, तथा यह पता लगाया है कि हृदय द्वारा सबसे शक्तिशाली लयबद्ध विद्युत् चुंबकीय क्षेत्र का निर्माण होता है, जिसका पता संवेदनशील उपकरणों द्वारा कुछ फीट की दूरी से ही लगाया जा सकता है। यही नहीं, हृदय का ऊर्जा क्षेत्र भावनात्मक सूचनाओं का भी वाहक होता है। इस कारण, इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि अधिकांश धार्मिक और आध्यात्मिक परंपराओं ने लंबे समय से हृदय की अनुभूतियों के अनुभव तथा अभिव्यक्तियों, जैसे प्यार, देखभाल, करुणा, सहिष्णुता, और क्षमा के मूल्यों पर बल दिया है।

4

हम सभी में अपने मन की तरंगों को और इस प्रकार अपने मन की दशा को नियंत्रित करने की अपार क्षमता होती है। अपने मन की तरंगों को बढ़ाकर या घटाकर, हम बड़ी आसानी से अपने विचार करने, अनुभव करने और कार्य करने की प्रक्रिया

को परिवर्तित कर सकते हैं, तथा मन की तरंगों की चार भिन्न आवृत्तियों (अल्फा, बीटा, डेल्टा और थीटा) को नियंत्रित करना सीख लें तो हम अपने शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य समेत पूरे शरीर को बेहतर बना सकते हैं। जागते और सोते समय, मन की तरंगें चार चरणों से होकर गुजरती हैं। किसी भी समय मन की तरंगों की एक सीमा होती है, जो यह तय करती है कि हम उस विशेष स्थिति में कितनी गहराई तक पहुँच चुके हैं। यह जान लें कि यह स्थितियाँ किस प्रकार कार्य करती हैं, तो किसी विशेष स्थिति में प्रवेश कर सकते हैं और अपने विचार की प्रक्रियाओं को नियंत्रित कर सकते हैं। इस प्रकार, चेतना की गहन स्थितियों को सीखकर, हम अपने अवचेतन मन को खोल सकते हैं और अपनी इच्छा से अपनी वास्तविकता का निर्माण पूरी दक्षता के साथ कर सकते हैं। इससे निश्चित रूप से हमें अधिक प्रसन्न रहने तथा अच्छा आध्यात्मिक व्यक्ति बनने में मदद मिलेगी।

5

हमारी कोशिकाओं में सतत रूप से लाखों रासायनिक प्रतिक्रिया चलती रहती है, और इस कारण हम मनुष्य मूल रूप से रासायनिक जीव हैं। हमारी भावनाओं, विचारों, अनुभूतियों तथा अन्य प्रतिक्रियाओं से मन में जैव रसायन उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक स्मृति के साथ एक विशेष भावना और अनुभूति जुड़ी होती है, जो किसी विशेष रसायन या रसायनों के मेल से उत्पन्न होती है। अब हम जान चुके हैं कि हमारा मन तंत्रिका तंत्र द्वारा यंत्रस्थ होने के साथ-साथ रासायनिक तौर पर हमारी भावनाओं पर निर्भर रहता है। यदि हमारी वर्तमान परिस्थितियाँ या माहौल उस रासायनिक संतुलन की इजाजत नहीं देता, तो हम शारीरिक और/या मानसिक रूप से इस प्रकार की स्थिति पैदा करना चाहते हैं, जिससे कि मन में उस विशेष प्रकार का रासायनिक संतुलन बना रहे। इस प्रकार हम अपनी स्वाभाविक भावनात्मक दशाओं या परिस्थितियों (जो डिस्पांजा, इवॉल्व योर ब्रेन) के आदि हो जाते हैं। यही कारण है कि हम या तो इस प्रकार की भावनात्मक स्थिति में बने रहते हैं या फिर ऐसी भावनात्मक स्थिति पैदा करते हैं जिसके हम अभ्यस्त होते हैं।

6

हम जब नकारात्मक विचारों के आदी हो जाते हैं, तो विडंबना है कि हमें उन परिस्थितियों में ही अच्छा महसूस होता है जो उस प्रकार की भावनाएँ प्रदान करते हैं। किसी लत से उबरने के लिए हमें सबसे पहले उन विशेष भावनाओं का पता

लगा लेना चाहिए, जो उस लत को पैदा करती हैं और उसकी ओर हमें ले जाती हैं। इसके बाद हमें सोच-समझकर उन अनुभूतियों से अपने आपको अलग करने के गंभीर प्रयास करने पड़ते हैं, जो उस प्रकार की भावना पैदा करते हैं। ऐसा करना कठिन होता है, लेकिन एक स्वस्थ मन और तन के लिए यह आवश्यक है कि हम इस लत को पूरी तरह समाप्त कर दें। और जड़ें जम चुकीं लत की बजाय, पुरानी लत को नई लत से बदलना सरल होता है। इस कारण हमें जागरूकता और जिम्मेदारी के साथ, धीरे-धीरे नकारात्मक भावनाओं के स्थान पर सकारात्मक भावनाओं को स्थान देने का प्रयास करना चाहिए।

7

जब मन नकारात्मक विचारों और भावनाओं में फँसा होता है, तब उपचार पर नकारात्मक प्रभाव दिखता है। यहाँ तक कि दवाओं और अन्य उपायों का असर नहीं होता है। इसे 'गैर-प्रायोगिक ओषध' कहा जाता है, जो प्रायोगिक ओषध का उल्टा होता है। विज्ञान हमें बताता है कि नकारात्मक विचारों का प्रभाव न केवल हमारे स्वास्थ्य और तन-मन की प्रसन्नता पर, बल्कि हमारे जीवन के सभी पहलुओं पर पड़ता है। ऐसे अनेक मामले हैं, जिनमें मरीज की मौत इस कारण हो जाती है क्योंकि नकारात्मक विचारों के साथ-साथ उसके मन में यह बात बैठ चुकी होती है कि डॉक्टरों ने उसका गलत इलाज किया है। इसी प्रकार, जब मरीज को महज मीठी गोलियाँ या कोई प्रायोगिक ओषध दी जाती है, तब यह पद्धति उन्हें स्वस्थ बनाने में काम कर जाती है। हमें यह समझना होगा कि तन और मन 'एक ही सिक्के के दो पहलू' हैं, तथा हम जिस प्रकार सोचते और महसूस करते हैं, उसका हमारे स्वास्थ्य पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। संक्षेप में कहें तो हम जो सोचते और मानते हैं उसमें तन-मन की प्रतिक्रियाओं के कारण हमारे मनोरोगों का इलाज करने की अद्‌भुत क्षमता होती है।

8

हम अब जान चुके हैं कि बुद्धि दिमाग/मन में नहीं बल्कि पूरे शरीर में स्थित होती है। तन-मन को अलग करनेवाली सदियों पुरानी अवधारणाओं को पूरी तरह निराधार साबित किया जा चुका है। दिमाग में विभिन्न प्रकार के रासायनिक ट्रांसमीटर होते हैं, उनमें से ही एक है न्यूरोपेप्टाइड। डॉ. कैंडेस पर्ट के अनुसार, ''न्यूरोपेप्टाइड हमारे पूरे शरीर में भी संकेत भेजता है। यदि कोई खुश, उदास या नाराज है तो कुछ

न्यूरोपेप्टाइड उस प्रकार की भावना को पूरे शरीर में ले जाएँगे। भावनाओं और रिसेप्टर्स को जोड़नेवाले इसी प्रकार के रसायन हमारे शरीर की सभी कोशिकाओं में मौजूद रहते हैं।'' डॉ. पर्ट इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि चूँकि न्यूरोपेप्टाइड (सूचना के अणु) और उनके रिसेप्टर शरीर में भी रहते हैं, इस कारण मन उसी प्रकार शरीर से जुड़ा होता है जिस प्रकार वह मस्तिष्क से जुड़ा रहता है।

9

यद्यपि हम इस संसार में आनुवंशिक रूप से पूर्वनिर्धारित शरीर के साथ आए, फिर भी हमारे अंदर सोच, व्यवहार और क्रियाओं को न्यूरोप्लास्टिसिटी (तंत्रिका मार्ग और सूत्रयुग्मन के मार्ग में परिवर्तन जो व्यवहार, माहौल आदि में परिवर्तन से आता है) की मदद से दिमाग में परिवर्तित करने की असीम क्षमता होती है। मन-मस्तिष्क की संरचना को बदल सकता है। हम जब किसी वस्तु पर ध्यान को गहन रूप से केंद्रित करने के लिए चेतना का प्रयोग करते हैं तब हम न केवल मस्तिष्क में ही परिवर्तन करते हैं, बल्कि हम उसकी संरचना को भी परिवर्तित करते हैं। असल में हम जब ध्यान लगाते हैं या जागरूकता की तकनीक का प्रयोग करते हैं या ध्यान केंद्रित करते हैं, तब मस्तिष्क पुन: अपनी रचना कर रहा होता है। दूसरे शब्दों में, हमारा मस्तिष्क लचीला है और हमारे अंदर उसे संरचनात्मक और क्रियात्मक रूप से साँचे में ढालने की शक्ति है। फिर भी हममें से अधिकांश लोग अपने ही सुविधाजनक माहौल में रहना चाहते हैं, इस कारण हम मस्तिष्क की इस अपार शक्ति का प्रयोग नहीं करते।

10

न्यूरोसाइंटिस्ट बताते हैं कि जब हम दूसरों के प्रति प्रेम और करुणा के भाव से सोचते हैं या मानते हैं कि भगवान् एक उदार बल के समान हैं, तब मस्तिष्क के अग्र भाग का एक बहुत छोटा सा हिस्सा (प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स), जिसे 'एंटेरियर सिंगुलेट कॉर्टेक्स' कहा जाता है, वह जागृत हो जाता है। एंड्र्यू न्यूबर्ग और मार्क वाल्डमैन ने अपनी किताब 'हाई गॉड चेंजेस योर ब्रेन' (2010) में यह कहा है कि इस हिस्से की मदद से उन लोगों के प्रति मन में समानुभूति पैदा होती है, जिन्हें कष्ट पहुँचा है। साथ ही यह भी माना है कि यही सच्चे दिल से किया गया आध्यात्मिक अभ्यास है। इस प्रकार दूसरों के प्रति प्यार, करुणा, चिंता और सहिष्णुता को हमारे मन में यंत्रस्थ कर दिया गया है। हम सभी के अंदर भगवान् हैं।

11

आप मानें या न मानें, लेकिन हमारा भौतिक शरीर हमारे विचारों और भावनाओं का ही परिणाम है। हमारे शरीर में होनेवाली अधिकांश शारीरिक क्रियाओं को हमारे विचार, भावनाएँ और अनुभूतियाँ ही तय करती हैं। तन-मन का संबंध इतना गहरा और अंतरंग होता है कि हमारे सोचने के तरीके का हमारे मानसिक-भौतिक शरीर पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। जीवन-शैली से जुड़ी अपने बीमारियों का कारण होता है दबाव, तनाव और हमारी विचार-शैली की नकारात्मकता। वहीं दूसरी तरफ, सकारात्मकता से सेहत अच्छी रहती है। यदि रोका नहीं गया तो एक नकारात्मक विचार-शैली ही बीमार करने के लिए काफी होती है। इसके विपरीत, प्यार, आभार और क्षमा एक जीवनकाल में संचित सभी नकारात्मकता को भंग कर सकते हैं।

12

नई खोज से यह बात सामने आ रही है कि धारणाओं का हमारे तन-मन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। असल में आस्था, विज्ञान, और आध्यात्मिकता सभी अंतत: एक ही धरातल पर घुल-मिल जाते हैं। उदाहरण के लिए, यदि मरीजों में केवल दवा या डॉक्टर पर दृढ़ विश्वास हो तो उन्हें केवल मीठी गोली (प्रायोगिक ओषध प्रभाव) से ठीक किया जा सकता है। यह आश्चर्यजनक हो सकता है, लेकिन एक तिहाई मरीज लगभग इसी प्रभाव से ठीक हो जाते हैं। जीवन के प्रति आस्था जगानेवाले विश्वास जहाँ हमें ठीक कर सकते हैं, वहीं सदमा और आघात लगने से पैदा हुई नकारात्मक सोच हमें चोट भी पहुँचा सकती है (ग्रेग ब्रैडन, द स्पॉनटैनियस हीलिंग ऑफ बिलीफ)। यह धारणा इलाज के परिणाम में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है कि इलाज काम नहीं करनेवाला है। यही वजह है कि हमें अपने जीवन को सँवारने के लिए विश्वास की शक्ति को स्वीकार करना ही होगा।

13

कष्ट विशेषकर शारीरिक कष्ट एक ऐसा कल-पुरजा है, जो प्राकृतिक चयन और योग्यतम के अस्तित्व के सिद्धांत पर पूरी तरह फिट बैठता है। यदि हमारे शरीर और मस्तिष्क में कष्ट की कोई प्रणाली नहीं होती, तो संभावित आयु बहुत ही कम होती। वास्तव में शारीरिक कष्ट मनुष्य के जीने के लिए एक अनिवार्य शर्त है। विकासवादी जीवविज्ञानी और मुखर नास्तिक रिचर्ड डॉकिंस इस निष्कर्ष पर

पहुँचे हैं कि जीवन में जिस प्रकार अन्य बातों के समान ही शारीरिक कष्ट भी डार्विनवादी यंत्र है, जो कष्ट भोगनेवाले व्यक्ति के अस्तित्व को बेहतर बनाने का काम करता है। कष्ट व्यक्ति को नुकसानदेह परिस्थितियों से हट जाने की प्रेरणा देता है, जिससे शरीर का क्षतिग्रस्त अंग स्वस्थ होने तक सुरक्षित रहता है, और वह भविष्य में ऐसे कष्ट से बचना सीख लेता है। मस्तिष्क में एक पूर्वनिर्मित प्रणाली होती है जो आदेश देती है : ''यदि तुम्हें कष्ट की अनुभूति होती है, तो जो कुछ कर रहे हो उसे छोड़ देना और दोबारा मत करना।''

□

7

हमारी विचार-शैली

भौतिक जगत् के सार्वभौमिक नियमों के समान ही मन का भी एक नियम होता है, मन जैसा सोचता है, हम वैसे ही बन जाते हैं। हम जैसा सोचते हैं, वैसा ही जीवन जीते हैं।

1

हमारी पहचान अधिकांशतया हमारे मन और विचारों से होती है। उन पलों में हम अपने ही विचारों की सतत प्रक्रिया में पूरी तरह खोए रहते हैं। बुलबुलों के समान ही मन में विचार न जाने कहाँ से उठते हैं और न जाने अपने आप ही कहाँ खो जाते हैं। इस पर ध्यान दीजिए तो आप पाएँगे कि आपका मन अपना नहीं है। अवचेतन विचार तब चेतन होते हैं, जब जागरूकता पैदा होती है। हम जब तक चेतना के साथ जागरूक नहीं रहते हैं, तब तक हमारे अंदर मन को नियंत्रित करने की क्षमता नहीं पैदा हो पाती है। यदि नियंत्रित न हो तो मन भी शरीर के दूसरे अंगों के समान होता है, और उसका उपचार उसमें समस्या आने पर किया जा सकता है। हमारे बाहर की कोई भी चीज हमें परेशान नहीं कर सकती है। यदि हम अपने मन को जस का तस छोड़ दें, तो यह शांत हो जाता है। इसमें आंतरिक शांति और शाश्वत कृपा प्रदान करने की अथाह क्षमता होती है, जिसे सक्रिय बनाने की अहम भूमिका निभाती है जागरूकता।

2

मानवता के कष्ट का एक मुख्य कारण है नासमझी। मन जब मूलभूत मोड में

रहता है, जिसे 'ऑटोपायलट मोड' भी कहते हैं, तब हम अनेक क्रियाओं में शामिल हो सकते हैं, किंतु उनमें से एक के प्रति भी हम जागरूक नहीं हो पाते। हम न अपने आसपास की घटनाओं पर ध्यान देते हैं और न ही अपने अंदर चल रही गतिविधियों पर। सोच-समझ के अभाव में हम अकसर इस तरीके से प्रतिक्रिया करते हैं, जिसके हम अधिकांशत: अभ्यस्त होते हैं और कुछ हद तक हमारी प्रतिक्रिया यंत्रवत होती है। यह स्थिति अत्यंत सामान्य रूप से देखी जाती है। एक तरफ, जब हम सोच-समझकर जीते हैं, तब हम संसार को जैसा है, वैसा ही प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करते हैं। इस स्थिति में हम अपने-अपने अतीत, गहराई तक बैठ चुकी आदतों और उम्मीदों से मुक्त रहते हैं। हम घटनाओं के प्रति वैसी ही प्रतिक्रिया करते हैं, जैसा कि वह होती हैं। हम जब वर्तमान में जीते हैं, तब हमारी सारी इंद्रियाँ जागृत हो उठती हैं। सोच-समझ कठिन नहीं है, लेकिन समस्या यह है कि हमें समझदारी से जीना याद नहीं रहता। अभ्यास करते रहने से ही हमें समझदार बने रहने की बात याद आती रहती है।

3

मौलिक रूप से हमारी चेतना भी सदैव एक धारणा से दूसरी धारणा पर, भावना और विचारों पर भटकती रहती है। हम इसे न स्थिर रख सकते हैं और न ही किसी एक बिंदु पर अधिक देर तक एकाग्र रख सकते हैं। उपपरमाण्विक स्तर पर क्वांटम दुनिया की तरह ही, हम अपनी चेतना को एक निश्चित बिंदु पर, जितना ही स्थिर रखने का प्रयास करते हैं, हमें उतनी ही अधिक अनिश्चितता का अनुभव होता है। इस कारण, हम जब एक बिंदु पर अपनी चेतना को केंद्रित और संकीर्ण कर देते हैं, तब ऐसी आशंका होती है कि यह अचानक जबरदस्त ऊर्जा के साथ हमारे आंतरिक जीवन के किसी असंबद्ध पहलू पर उछलकर चला जाए। दिन भर हम सभी इस प्रकार के अनुभव करते हैं। हम किसी एक समस्या पर अपना ध्यान केंद्रित करने का प्रयास करते हैं, लेकिन अचानक हमें लगता है कि वह हमारी किसी अन्य पहलू की ओर चला गया है, जहाँ एक और तसवीर या भावनात्मक आवेग का हस्तक्षेप होता है और फिर वह लुप्त हो जाता है।

4

मन की रहस्मयी और जटिल संरचना, साथ ही उसकी कार्यप्रणाली, प्राचीन काल से ही वैज्ञानिकों और दार्शनिकों के लिए एक पहेली बनी हुई है। मन में पैदा होनेवाले सभी प्रकार के संभावित विचार महज संभावनाओं की तरंगें हैं, और जब

किसी विचार की तरंग को चेतना द्वारा ध्वस्त किया जाता है, तब वह विशेष प्रकार का विचार मन में (वास्तव में) उत्पन्न होता है। इस प्रकार, मन एक सदा चलते रहनेवाली घटना है, जिसमें विचार एक अनंत क्रम में उत्पन्न और लुप्त होते रहते हैं। इस कारण, मन हमें विचारों के सतत प्रवाह में उलझाकर रखता है, जिसे चेतना इतना करीब से देखती है कि उसे अपने होने का भी अहसास नहीं होता। आंतरिक अहम में सूझबूझ/स्थिरता का होना ही सबसे बड़ी खूबसूरत बात होती है। इसकी मदद से हम अपनी चेतना के केंद्र से ही विचारों का प्रयोग कर सूचनाओं के निर्बाध प्रवाह को रोक सकते हैं।

5

आधुनिक विज्ञान ने इस तथ्य की पुष्टि कर दी है कि ध्यान ही क्वांटम भौतिकी का एक सशक्त आधार है। 'द योगा ऑफ टाइम ट्रैवल' में फ्रेड एलन वुल्फ ने बताया है कि चेतन जीवन में केंद्रित और विकेंद्रित गतिविधियों का एक क्रम होता है, और इस क्रम से ही अहम या तन-मन का उदय होता है, जो विकास के दौरान ही अस्तित्व के लिए एक तंत्र के रूप में सामने आया। ध्यान की मदद से ही हम सीखते हैं कि हमें अपने मन को कैसे केंद्रित और विकेंद्रित करना है। हम जब ध्यान केंद्रित और विकेंद्रित करते हैं, तब हम अपने शरीर और माहौल पर नियंत्रण प्राप्त करते हैं या खोते हैं तथा यह सीखते हैं कि हम किस सीमा तक उनमें फेरबदल कर सकते हैं। ध्यान की क्रिया में ध्यान लगाने के दौरान, हम अपने मन/चेतना को अपने तन-मन के प्रति जागरूक न होने देकर अपने अहम को या तो समर्पित कर सकते हैं या उसे समाप्त कर सकते हैं।

6

इस धरती पर एक भौतिक जगत् है, जिसमें करोड़ों विभिन्न आंतरिक जगत् (मन) हैं। हम सभी अपने-अपने निजी थिएटर में बैठकर दो एकदम अलग-अलग तमाशों को देखते हैं, फिर भी हम यह समझते हैं कि हम उन दर्शकों के बीच बैठे हैं, और उसी घटना को देख रहे हैं, जिसे हम जीवन कहते हैं (नैंसी कोलियर का पोर्स्ट—व्हाई आवर थॉट्स आर नॉट रीयल)। विचार महज मन में आ जाते हैं, हम उनका चयन नहीं करते। हम जब विचारों की जारी प्रक्रिया के प्रति जागरूक नहीं रहते, तो हमें पता भी नहीं चलता कि विचार हमारे मन में कैसे आए। हमें उनका पता तब चलता है, जब हम उन पर ध्यान देते हैं। अन्यथा वे

कुछ भी नहीं होते और कहीं भी नहीं होते। इस प्रकार, जागरूकता के माध्यम से, हम ध्यान देकर विचारों को चुन सकते हैं।

7

जीवन स्वाभाविक रूप से अच्छा है, फिर भी यह हमें चुनना है कि हम स्वर्ग में जीना चाहते हैं या नरक में। अनेक अच्छे लोग और अच्छी चीजें हमेशा हमारे आसपास रहते हैं और मन में हम सभी को शांतिपूर्ण और संतोषजनक महसूस कराने की अद्‌भुत क्षमता होती है। भौतिक संसार के सार्वभौमिक नियम के समान ही मन का भी नियम होता है, यानी जैसा कि मन सोचता है, वैसा ही जीवन हम जीते हैं। हम जैसा सोचते हैं, वैसा ही जीवन जीते हैं। यदि हम अपने मन में अच्छे विचारों और सकारात्मक भावनाओं का समावेश करते हैं तो हम अपने अंदर अद्‌भुत संतुष्टि और अच्छाई का अनुभव करेंगे। हमें किसी बाहरी एजेंट की आवश्यकता नहीं होती, सूझबूझ भरी जागरूकता के साथ हम स्वयं इसे अपना सकते हैं। मनुष्य के समान ही उसका मन और आसपास की प्रकृति भी महान् है।

8

मनुष्य स्वाभाविक रूप से अपूर्ण होता है, उसके निर्णय अधिकतर दोषपूर्ण होते हैं। सबसे पहले, मन निर्णय लेने की जल्दी में रहता है और वह अधूरी तथा अपूर्ण जानकारी के आधार पर निष्कर्षों पर पहुँच जाता है। दूसरा, हमारे सोचने की प्रक्रिया या बोधन तंत्र भी मस्तिष्क के सौंदर्य और आश्चर्य के बावजूद सिद्ध नहीं है, जबकि मस्तिष्क को अन्य स्नायु से पूरी तरह भरा हुआ मानते हैं, जहाँ प्रति सेकेंड करोड़ों गणनाओं की प्रक्रिया पूरी होती है। बोध से जुड़े कई और भी भेदभाव और त्रुटियाँ होती हैं, जैसे भीड़ की मानसिकता, जुआरी का भ्रम, आभामंडल का प्रभाव और प्रायोगिक ओषध जो हमारे सोचने की प्रक्रिया को विकृत कर देते हैं। लिहाजा निर्णय लेने में हमारी और गलतियाँ होना तय हो जाता है। हम जब गलती करते हैं, जैसा कि करना निश्चित होता है, और हम जब अपनी जिम्मेदारी लेते हैं, तो सभी प्रकार की समस्याओं का अनुभव होता है। जीवन के उलझे तौर-तरीकों को बेहतर ढंग से समझने के लिए हमें बस एक सरल अनुभूति करनी है और वह यह है कि हम जो निर्णय लेते हैं उसके निष्कर्षों के मालिक और रचयिता हम नहीं हैं।

9

न्यूरोसाइंस ने इस बात को सिद्ध कर दिया है कि मन लचीला होता है और

वह पल-पल बदलता रहता है। सरल सोच से न केवल हमारे मन की कार्य-शैली में, बल्कि उसके आकार में भी परिवर्तन आ सकता है। हम इसे एम.आर.आई. में भी स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। हम जब भी सोचते, कार्य या व्यवहार करते हैं, तब दिमाग के विभिन्न इलाके रोमांचित और स्नायु की प्रज्वलन से पुनः प्रकाशित हो जाते हैं। हमारे मन में उठनेवाले प्रत्येक विचार और उसके अनुभव हमारे दिमाग की संरचना और कार्य-प्रणाली में सूक्ष्म स्तर पर स्नायु के संपर्कों में फेरबदल से परिवर्तन लाते हैं। इस कारण दिमागी कसरत, जैसे—पियानो या गिटार बजाने का अभ्यास तथा क्रॉसवर्ड की गुत्थी को सुलझाने से मस्तिष्क में परिवर्तन आ सकता है। एक प्रयोग में शोधकर्ताओं ने पाया कि केवल व्यायाम की बात सोचने से भी मांसपेशियों में शक्ति बढ़ गई, क्योंकि शारीरिक क्रिया के लिए उत्तरदायी न्यूरॉन को विचारों से भी सक्रिय किया गया और उन्होंने मांसपेशियों को शक्ति प्रदान की। डॉ. एंड्र्यू न्यूबर्ग का मानना है, ''आध्यात्म और चेतना का एक सहविकास होता है, जिसमें उस सर्किट का प्रयोग होता है, जो हमें ब्रह्मांड, भगवान् और अपने बीच एक उदार संबंध की कल्पना करने की प्रेरणा देता है।''

□

8

नकारात्मकता के प्रति मन की अंतर्निर्मित प्रवृत्ति

मन पर मौन और अवैयक्तिक रूप से, नतीजे पर पहुँचे बिना नजर रखकर उसके अंदर उठनेवाली नकारात्मक उथल-पुथल का मुकाबला कर मन को आंतरिक रूप से स्थिर रखा जा सकता है।

1

हम सभी के मस्तिष्क की रचना इस प्रकार की है कि हम सकारात्मक अनुभवों की अपेक्षा नकारात्मक अनुभवों को तुरंत और गहराई के साथ देखते, समझते और याद रखते हैं। इसकी पुष्टि न्यूरोसाइंटिस्टों द्वारा किए गए हाल के एक शोध से हो गई है। न्यूरोसायकोलॉजिस्ट रिक हैनसन ने इसे मस्तिष्क का नकारात्मक भेदभाव नाम दिया है। उनका कहना है कि मनुष्य का स्नायु तंत्र अपने और अपनी दुनिया के विषय में नकारात्मक सूचना को परखता है, उस पर प्रतिक्रिया देता है, उसे सहेजता और याद करता है। मनुष्यों के आगमन के युग से पहले ही हमारा विकास एक भयभीत रहनेवाले प्राणी के रूप में होने लगा था। उस युग में हमारे ऊपर खतरों से भयभीत हो जाने और उसके दबाव में आने की असुरक्षा बनी हुई थी। सदियों बाद हमारा मन न जाने क्यों लेकिन सभ्य परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको ढाल नहीं सका और कुछ सरीसृप मस्तिष्क (हमारे मस्तिष्क में सरीसृपों के दिमाग में पाया जानेवाला एक हिस्सा होता है, जिसे 'ब्रेन स्टेम' और 'सरिबैलम' कहते हैं)

उसी प्रकार का व्यवहार करते हैं जैसा अनुकूलन अनुभवों के आधार पर हो चुका होता है। दिमाग के नकारात्मक भेदभाव में सुधार करने का सबसे अच्छा उपाय मंशा और ध्यान का प्रयोग एक सतत तथा केंद्रित रूप से करना है। ऐसा करने से हम मन की अंतर्निहित विकृति को काफी हद तक दुरुस्त कर सकते हैं।

2

हम सभी नकारात्मक विचारों के कारण अपनी ऊर्जा नष्ट करते हैं और कष्ट भोगते हैं। यह दिलचस्प है कि उनमें से 80 प्रतिशत विचार पुराने दिनों के और बार-बार मन में उठनेवाले होते हैं। मन अकसर व्यर्थ और अनायास ही भटकता रहता है। यही नहीं, इनमें से अधिकांश व्यर्थ विचार अपने और दूसरों के जीवन से जुड़ी धारणाओं, मनोवृत्तियों, विश्वासों, और मत के रूप में होते हैं। इस वजह से ही अपने स्वास्थ्य और भलाई के लिए आवश्यक है कि हम अपने मन की ऊर्जा को सकारात्मक, जीवनदायी विचारों की ओर ले जाएँ, तथा सदा ही विद्यमान रहनेवाली और दुर्बल बनानेवाले नकारात्मक विचारों को नष्ट कर दें (डॉ. ब्रूस लिप्टन, द बायोलॉजी ऑफ बिलीफ)। योग, ध्यान और प्रार्थना के नियमित अभ्यास से हम मन की इस मौलिक प्रकृति को सकारात्मक विचारों की पद्धति से समाप्त कर सकते हैं, जिससे कि मन स्थिरता की ओर चला जाए।

3

हमारे अंदर अंतर्निर्मित निराशावादी सोच होती है, जिसके कारण हमारा मन स्वाभाविक रूप से नकारात्मक या सनसनीखेज घटनाओं/पलों से जुड़ी बातों पर विचार करता है जो उस युग में मनुष्यों के मन में 'चिनगारी' के समान उठते थे, जब उसे हिंसक जानवरों के कारण एक भयपूर्ण और खतरनाक जीवन व्यतीत करना पड़ता था। वही भय और चिंता, जो हमारे मन के लिंबिक सिस्टम / प्रमस्तिष्कखंड की गहराई में बैठ चुकी है, हमारे व्यक्तिगत और सामूहिक चित्त पर हावी रहती है, जिससे हमारे अंदर अंतर्निहित नकारात्मक मनोवृत्ति को बढ़ावा मिलता है।

4

नकारात्मकता के प्रति इस अंतर्निहित मनोवृत्ति के कारण ही, मन न केवल अपने बल्कि दूसरों के अनुभवों के संबंध में भी नकारात्मक घटनाओं/पलों पर विचार करने में व्यस्त रहता है। तनाव में रहने पर, हम जितना ही नकारात्मक विचारों को उभरने से रोकने का प्रयास करते हैं, वे अधिक-से-अधिक और बार-

बार सामने आते हैं (इसका वर्णन मानसिक नियंत्रण की विडंबनात्मक प्रक्रिया के एक सिद्धांत में किया गया है)। इसे मन का सबसे बड़ा दुर्गुण माना जाता है, जिस पर नियंत्रण करना लगभग असंभव होता है। तन-मन के अंतरंग संबंधों के कारण मन की इस प्रकृति से जीवन-शैली से जुड़ी अनेक बीमारियाँ पैदा होती हैं, जिनमें हृदय रोग, मधुमेह और कैंसर जैसे रोग शामिल हैं। असुरक्षा और चिंता के रूप में भय की अभिव्यक्ति नकारात्मकता के प्रति मन के झुकाव का ही प्रतिफल है। मन की नकारात्मक प्रवृत्ति का मुकाबला कर मन पर मौन और अवैयक्तिक रूप से नजर रखकर आंतरिक स्थिरता को प्राप्त किया जा सकता है।

5

हम सभी में अपार अच्छाई है। फिर भी, मन में अंतर्निहित नकारात्मक संवेदनशीलता के कारण, अकसर इस अच्छाई पर नकारात्मक विचार और अनुभव/स्मृतियाँ हावी हो जाती हैं। यदि हम दूसरों के कार्यों एवं व्यवहारों पर प्रतिक्रिया करना बंद कर दें और यदि अतीत की कड़वी यादों से मुक्त हो सकें तो निश्चित रूप से मन में उन नकारात्मक विचारों का प्रवाह कम-से-कम हो जाएगा। इस कारण हम सभी को उन अनुभवों के विषय में सजगता से विचार करना चाहिए, जो मन में एकत्र अप्रिय और नकारात्मक विचारों को मिटाकर सकारात्मकता का निर्माण कर सकें और मन के अंदर नकारात्मकता का आनंद उठाने की प्रवृत्ति को दबाया (जागरूकता के माध्यम से और वर्तमान पल में जीकर) जा सके। इससे निश्चित रूप से एक निर्मल और सुखद मन का निर्माण होगा।

6

जीवन मूल रूप से अच्छा होता है और संभावनाओं का एक सागर प्रस्तुत करता है, जिससे हम सीख लेकर अपना विकास कर सकते हैं। फिर भी, चूँकि हमारे मन का झुकाव अप्रिय विचारों की ओर होता है, इस कारण हम बार-बार उन्हें याद कर उन्हें प्रबल बनाते चले जाते हैं। यदि हमारे विचार, चाहे वे अवचेतन विचार ही क्यों न हों, नकारात्मक भावनाओं और धारणाओं पर केंद्रित हो जाते हैं, तब हम अनिवार्य रूप से अपने और अपने सामने उपस्थित असीम संभावनाओं के बीच एक रुकावट पैदा कर देते हैं। इस रुकावट को समाप्त करने के लिए हमें अपने अंदर संचित नकारात्मकता का मुकाबला करने के लिए पूरे मन से सकारात्मक अनुभवों पर गौर करना चाहिए। एक बार हम जागरूक हो गए और मन के अंदर

अंतर्निहित कार्यप्रणाली/आदत पर धीरे-धीरे नियंत्रण (आध्यात्मिक अभ्यासों जैसे ध्यान और प्रार्थना से) करने लग गए, तो हम उन अवसरों का लाभ उठाने लग जाएँगे, जिन्हें हम अन्यथा नजरअंदाज कर दिया करते थे।

7

हम अब यह जान गए हैं कि वास्तविकता का सबसे मूलभूत स्तर ऊर्जा है, तथा अन्य लोगों के साथ निरंतर ऊर्जा का एक आदान-प्रदान होता रहता है। सारे मनुष्य कुछ और नहीं, बल्कि क्वांटम ऊर्जा का पुलिंदा हैं, जो लगातार कंपन और स्पंदन करता रहता है। हम जब कभी क्रोध, घृणा, हिंसा, भय आदि की नकारात्मक ऊर्जा से ओत-प्रोत हो जाते हैं, तो हमें अधिक-से-अधिक नकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है। हम जिस नकारात्मकता को महसूस करते हैं वह वही नकारात्मकता है, जिसे हम किसी-न-किसी रूप में इस ब्रह्मांड को वापस लौटा रहे होते हैं। इसी प्रकार, सकारात्मक के मामले में भी ऐसा ही होता है। चूँकि सबकुछ एक युग्म के एक अंग के रूप में होता है, लिहाजा प्रत्येक पहलू को दूसरे से जुड़ने के लिए बनाया गया है। यह बात लेन-देन से मानव समाज के साथ-साथ प्राकृतिक जगत् पर लागू होती है।

8

मेरी बात को मानिए कि जीवन में हमें जिन बातों का डर रहता है (कि यह तो होना ही है) उनमें से 80-90 प्रतिशत बातें कभी होती ही नहीं हैं। आनुवंशिक रूप से हमें इस प्रकार बनाया गया है कि बातों को अत्यधिक गंभीरता से लेते हैं, विशेष तौर पर जब वह स्वभाव से प्रतिकूल या नकारात्मक होता है। किसी वजह से हमारा मन नकारात्मकता के प्रति अति-संवेदनशील और भारी झुकाव रखता है। किसी भी घटना/दुर्घटना की बहुत थोड़ी सी आशंका पर भी मन हमें सचेत (निस्संदेह यह एक अच्छा गुण है) कर देता है, लेकिन मन खतरे की भयावहता को उसके असल आकार से कई गुना बढ़ा देता है और इस कारण हमें कष्ट होता है। अब मन की सबसे बुरी बात करते हैं, हम जितना ही नकारात्मक विचार को दबाते हैं, उतनी ही ताकत से वह विचार उभरकर आता है (विडंबनात्मक प्रक्रिया)। ऐसे में वास्तविक स्थिति का आकलन कर तुरंत उस भय/विचार(विचारों) का मुकाबला सकारात्मक विचारों से किया जाना चाहिए। मन की प्रवृत्ति की महज अनुभूति और सजगता से हमारा जीवन काफी हद तक सरल और शांतिपूर्ण हो सकता है तथा हमें इन घटनाओं से बहुत हद तक छुटकारा मिल सकता है।

9

हमारा दिमाग आसपास की नकारात्मक खबरों और घटनाओं के प्रति अतिसंवेदनशील होता है। हमारे अंदर सकारात्मक सूचनाओं के बनिस्बत नकारात्मक सूचनाओं का अंदाजा लगाने की अत्यधिक क्षमता होती है। दरअसल, संतुष्ट दंपतियों और भयंकर वैवाहिक झगड़े से जूझ रहे दंपतियों को जो बात अलग करती है, वह है एक-दूसरे के प्रति सकारात्मक और नकारात्मक भावनाओं और क्रियाओं का एक स्वस्थ संतुलन (हारा एस्ट्रॉफ मेरानो, ऑवर ब्रेन ऐंड निगेटिव बायस)। शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि पति और पत्नी, दोनों के लिए ही वैवाहिक जीवन को सुखी बनाने में नकारात्मकता और सकारात्मकता का एक अति विशिष्ट अनुपात जिम्मेदार होता है। यह जादुई अनुपात पाँच बटा एक है। जब तक एक नकारात्मक विचार के बदले पति-पत्नी के बीच पाँच सकारात्मक विचार रहते हैं, तब तक शादी का एक लंबे समय तक सुखी रहना निश्चित होता है। खुशियों की ओर संतुलन को झुकाते रहने के लिए बस कुछ छोटे-छोटे सकारात्मक कार्यों की बारंबारता को बढ़ाना पड़ता है।

□

9

अचेतन मन की अप्रयुक्त क्षमता

वह अचेतन मन, जिस पर हमें लगता है कि हमारा नियंत्रण नहीं के बराबर है, वही महत्त्वपूर्ण क्षणों में फैसले करता है, जिनसे हमारे जीवन की दिशा बदल सकती है।

1

हममें से अधिकांश लोग, एक तरीके से आंशिक रूप से ही सही, लेकिन एक रुटीन और घिसी-पिटी जिंदगी जीने के अभ्यस्त हैं। अचेतन और अनुकूलित प्रतिक्रिया देने की हमारी मनोवृत्ति और हमारा अप्रशिक्षित मन हमें अपना पूरा जीवन एक सुखदायी दायरे के भीतर बिताने पर मजबूर कर देता है। हम शायद ही कभी उस सुरक्षित, किंतु घिसी-पिटी जिंदगी से बाहर आने का प्रयास करते हैं। ऐसे में हम कभी यह जान ही नहीं सकते कि उस दायरे से बाहर न आने के कारण कितना नुकसान हो रहा है। हम उस रास्ते को कैसे जान सकते हैं, जिस पर कभी सफर ही नहीं किया हो? रूस के प्रभावशाली आध्यात्मिक शिक्षक जॉर्ज गर्डजेफ जैसे कुछ दार्शनिक और विचारकों ने तो यहाँ तक कह दिया है कि हम पूरी तौर पर नींद में हैं और अपने दैनिक जीवन में पूरी तरह खोए रहने के कारण वास्तविकता से अनभिज्ञ हैं।

2

हम सामान्य तौर पर उस मूल चरण में हैं, जब मन आंतरिक बातचीत में खोया रहता है। वह अचेतन अवस्था और मस्तिष्क अपने ही विचारों में इतना

खोया रहता है कि हमें उस अवस्था का पता तक नहीं चलता है। यह कमोबेश सोए रहने की अवस्था होती है। अहम लगातार काम करता रहता है और भावनाएँ, इच्छाएँ और भय इसके प्रभावी उपकरण की भूमिका निभाते हैं। इसके बावजूद, हम जब ध्यान लगाते हैं, तब आंतरिक बातचीत बंद हो जाती है और हम मूल अवस्था से बाहर आ जाते हैं। अपने साथ उत्पन्न होनेवाली भावनाओं के साथ ही विचार भी लौट जाते हैं और हम दिमाग को एक शांत क्षेत्र में ले जाते हैं, जिससे कि हमारा मन शांत और निर्मल हो जाता है। यह स्थिति कुछ ऐसी होती है, जिसे दीपक चोपड़ा ने अपने मन को फिर से चालू करना कहा है और तब आप अपने मन को इस प्रकार खिलने देते हैं, जिसके विषय में कई लोग कहते हैं कि वह विकास के अगले चरण में उसी प्रकार जाता है जैसे मन और मस्तिष्क एक सूत्र में बँध गए हों (यू-ट्यूब पर ताँजी और दीपक चोपड़ा)।

3

हम जब जागरूक नहीं होते, तब हमारे अधिकांश विचार और कर्म आवेगी और स्वत: होते हैं, क्योंकि हम चेतन मन से चुनाव नहीं करते। हालाँकि मन बाद में हमारी भावनाओं और व्यवहार का एक बहाना ढूँढ़ लेता है, जिससे कि वह हमें समझाता है कि तार्किक और न्यायपूर्ण तरीके से सही हैं और पूरी तरह से सबकुछ हमारे नियंत्रण में है। इसे 'प्रतिगामी युक्तीकरण' कहते हैं। यह एक अचेतन प्रतिरक्षा प्रणाली है, जिसमें पूर्वनिर्धारित विवादित व्यवहार या भावनाएँ तार्किक रूप से सही ठहराई जाती हैं और न्योचित या तर्कसंगत रूप से उसकी व्याख्या की जाती है, ताकि किसी भी वास्तविक व्याख्या से बचा जा सके (विकिपीडिया)। एक प्रकार से यह तर्कहीन और बेहद स्वार्थी व्यवहार को सही ठहराने का हमारी बहानेबाजी ही होती है। इस कारण, प्रत्यक्ष रूप से एक गलत कार्य करने के बावजूद, हम अपने आप से और दूसरों से अपने कार्यों और भावनाओं को सही ठहराने की बहस पूरी ताकत से करते हैं। यह बात निश्चित रूप से बेहद आम है!

4

हम जो कुछ सोचते हैं, वह क्यों और कैसे सोचते हैं? हम इस बात से लगभग अनभिज्ञ हैं कि हमारे अधिकांश फैसले (करीब 90 प्रतिशत) या हमारे व्यवहार का तरीका अचेतन मन के द्वारा तय किया जाता है, हालाँकि उसकी जिम्मेदारी पूरी तरह से हमारी ही होती है। हमारे मन की रचना इस प्रकार हुई है

कि वह जीवन में जहाँ तक संभव हो स्वचालित रहे। इसका परिणाम यह होता है कि हमारे फैसले और काररवाई हमारे मन-संचालित कार्यक्रम के आधार पर होते हैं, जो हमारे मस्तिष्क में मौजूद एक सॉफ्टवेयर होता है (बेबेल ब्राउन द्वारा पोस्ट किया गया व्हाई न्यूरोसाइंस मैटर्स टू यू)। हम इसकी प्रोग्रामिंग अतीत के अनुभवों, धारणाओं और पृष्ठभूमि के आधार पर करते हैं। यद्यपि ऐसे अनेक प्रोग्राम हैं, जो हमारे जीवन को संचालित करते हैं, लेकिन हमारे कार्य और व्यवहार पर इसका प्रभाव सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। जीवन वास्तव में हमारा मन ही है, लेकिन यह विडंबना है कि इसके प्रमुख (अवचेतन) भाग पर हमारा नियंत्रण नहीं है।

5

प्रारब्ध संयोग की बात नहीं होती, बल्कि यह हमारे निर्णयों और विकल्पों को चुनने पर निर्भर करता है, विशेष रूप से जब ऐसा हमारे जीवन की अहम घड़ी में किया जाता है। प्रारब्ध ऐसा नहीं जो हमारे पास स्वत: आ जाता है, बल्कि यह उन महत्त्वपूर्ण चुनावों/फैसलों का परिणाम है, जो हमने अतीत में किया है। अब इस बात को मान लिया गया है कि अवचेतन मन चेतन मन से बड़ा और तेज होता है, तथा प्रतिदिन उसके द्वारा हमारे जीवन के 90 प्रतिशत कार्यों/फैसलों को स्वरूप दिया जाता है। सेल बायोलॉजिस्ट डॉ. ब्रूस लिप्टन के अनुसार, ''अवचेतन मन चेतन मन की तुलना में 500,000 गुना तेजी से काम करता है। अवचेतन मन से हमारे फैसले चाहे किसी भी हद तक क्यों न किए जाएँ, हम उनके लिए और उनके कारण होनेवाली घटनाओं के लिए जिम्मेदार नहीं होते हैं। अचेतन मन, जिस पर हमारा नियंत्रण लगभग नहीं के बराबर होता है, वह निर्णायक पलों में फैसले लेने में अहम भूमिका निभाता है, जिनसे हमारे जीवन की दिशा बदल सकती है।''

6

हम चाहे कितने ही चालाक और बुद्धिमान क्यों न हों, अकसर हम बिना सोच-विचार किए ही इस प्रकार कार्य करते हैं मानो किसी ने हमें गुमराह कर दिया हो। हालाँकि आगे चलकर, हम उन कार्यों या व्यवहार को सही ठहराते हैं, जबकि हमने उन्हें चेतन मन से नहीं किया था। इसका कारण हमारे ऊपर उनका नियंत्रण होता है, जिन्हें सिगमंड फ्रायड ने तर्कहीन और अचेतन इच्छाओं का नाम दिया था। हमारा अवचेतन मन चेतन मन की तुलना में कहीं बड़ा और तेज होता है। हम ऐसे कार्यों या निर्णयों को काफी देर से समझ पाते हैं, लेकिन हमें लगता है कि हमने ही उन निर्णयों को लिया था। यही कारण है कि बाद में हम उन्हें सही ठहराते हैं। दरअसल,

हमारे मन के बाएँ हिस्से में एक दुभाषिया मॉड्यूल होता है, जो एक स्पष्टीकरण का निर्माण करने का साथ ही कथानक और व्याख्या तैयार कर देता है, तथा हमें लगता है कि हम अपनी स्वच्छंद इच्छा के मालिक हैं और महत्त्वपूर्ण बातें तय कर रहे हैं [Michael Gazzaniga द्वारा पोस्ट किया गया (Who's in Charge)]। यह एक भ्रम होता है कि हम चेतना के साथ कार्य कर रहे हैं, जबकि अधिकांशतया हम उन निर्णयों में साझीदार/मालिक नहीं होते हैं।

7

हम जब कहते हैं कि अवचेतन मन हमारे फैसले करने की प्रक्रिया में एक अहम और केंद्रीय भूमिका निभाता है तो क्या हम अपनी व्यक्तिगत जिम्मेदारी से भाग रहे होते हैं? यदि अवचेतन मन हमारे जीवन की घटनाओं और अनुभवों को तय करने में इतनी प्रभावशाली भूमिका निभाता है तो हम इसे कहाँ तक जिम्मेदार ठहरा सकते हैं। कभी-कभी हम इस तर्क की आड़ में वर्तमान दंड प्रक्रिया और न्याय प्रणाली पर सवाल उठाते हैं। आयरलैंड के आलोचक सी.एस. लेविस ने 'एबोलिशन ऑफ मैन' में दलील दी है, ''जब से संसार में पाप की शुरुआत हुई, तब से मनुष्यों ने अपने व्यवहार के लिए बहाने ढूँढ़ने शुरू कर दिए थे, लेकिन भौतिकवाद ने हमें बहानों का अंतहीन खजाना दे दिया। हम चाहे कुछ भी करें, उसकी वजह हम अपने विकल्प की बजाय किसी-न-किसी को बता देते हैं : कभी सामाजिक वातावरण, तो कभी अवचेतन इच्छाएँ या मस्तिष्क का गुणधर्म।'' कोई भी निर्णय चाहे चेतन या अचेतन मन से क्यों न लिया गया हो, उसका प्रभाव हमारे प्रारब्ध को तय करने में महत्त्वपूर्ण हो सकता है।

□

10

भावनात्मक बोझ क्यों बढ़ाएँ?

यदि वर्तमान में रहने की बजाय हम अतीत की नकारात्मकताओं/अप्रिय स्मरणों के बोझ को ढोते रहते हैं और उन्हें बार-बार याद करते हैं, तो फिर अपने लिए नरक का निर्माण हम स्वयं करते हैं।

1

एकहार्ट टोल के अनुसार, ''जो लोग व्यवहार, प्रतिक्रिया और इच्छा की पुरानी और घिसी-पिटी विचार-शैली में जकड़े रहते हैं, उनका भविष्य अकसर अतीत का प्रतिरूप होता है। ऐसे लोगों में सतही बदलाव संभव है, लेकिन वास्तविक परिवर्तन शायद ही कभी हो पाता है। आबादी के एक बहुत बड़े हिस्से में विचार और व्यवहार के इस प्रकार का ठोस अनुकूलन उनकी तरक्की में गंभीर बाधा बन जाता है। ऐसे लोगों में विचार और व्यवहार की शैली घिसी-पिटी और जिद से भरी होती है। जब तक ऐसी स्थिति को समाप्त नहीं किया जाता और लोग अपने आसपास के अवसरों के प्रति जागरूक नहीं होते और उनका लाभ उठाने के लिए तैयार नहीं होते, तब तक वास्तविक परिवर्तन संभव नहीं होता है।'' जागरूकता और स्वीकार्यता से हम सीमा में बाँधनेवाले अपने विचार और व्यवहार को सफलतापूर्वक सुधार सकते हैं।

2

हम सभी जीवन की यात्रा में अपने साथ अपने अतीत को साथ लेकर चलते

हैं, लेकिन हमारे मन पर सबसे बड़ा बोझ अतीत के नकारात्मक अनुभवों का पड़ता है। विरले ही हम अप्रिय यादों के बोझ से छुटकारा पाने का प्रयास करते हैं। इसकी बजाय, हम ज्यादा-से-ज्यादा मानसिक और भावनात्मक बोझ को बढ़ाते चले जाते हैं। अतीत के द्वारा तय किया गया हमारा व्यक्तित्व हमारे लिए एक कैद (न्यू अर्थ, एकहार्ट टोल) बन जाता है। यही नकारात्मक ऊर्जा हमारे व्यक्तिगत विकास की राह का रोड़ा बन जाती है। इस प्रकार की इकट्ठा हो चुकी ऊर्जा को नियंत्रित करने या मिटाने का एक ही तरीका है। जब भी पुरानी पड़ चुकी ऊर्जा सक्रिय हो तब सूझबूझ के प्रदर्शन, तथा वर्तमान में जीने से ऐसा किया जा सकता है। हम धीरे-धीरे ही सही, लेकिन निश्चित रूप से इस भारी बोझ को उतार सकते हैं।

3

हम सभी का एक अतीत होता है। हममें से अधिकांश लोगों को किसी व्यक्ति या किसी घटना ने अतीत में परेशान किया होगा। उन घटनाओं के संबंध में हम किसी-न-किसी प्रकार का भावनात्मक बोझ उठाए रहते हैं। अकसर, जब यह भारी हो जाता है, तब हमारे मानसिक और आध्यात्मिक विकास को धीमा कर देता है, ऐसा विशेषकर हमारे संबंधों में रुकावट पैदा करनेवाले और अत्यधिक प्रतिक्रिया करनेवाले व्यवहार के कारण होता है। हमारे पास एक विकल्प होता है या तो हम बोझ को बढ़ाते चले जाएँ या फिर उसे हलका कर दें। निश्चित रूप से हम अपने भावनात्मक बोझ को अपने साथ लेकर चल सकते हैं या फिर यह समझ लें कि जो अतीत में था उसे अतीत में ही रहना चाहिए और हम केवल उतनी ही चीजों को लेकर स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ें, जिसकी वास्तव में हमें आवश्यकता और जरूरत हो (रॉबिन हॉफमैन द्वारा पोस्ट किया गया ओनिंग आवर इमोशनल बैगेज इन रिलेशनशिप्स)।

4

हम अपने निजी नरक के साथ-साथ मरने से बहुत पहले ही स्वर्ग के भी निर्माता बन जाते हैं। इस निर्माण का जिम्मेदार कोई दूसरा नहीं होता है। चुनाव पूरी तरह हमारा ही होता है। यदि वर्तमान में जीने की बजाय हम अतीत की नकारात्मकताओं/सुखद यादों के बोझ को ढोते रहेंगे, तो नरक का निर्माण अपने आप ही हो जाएगा। इसी प्रकार इसका उलटा भी होता है, यदि हम कष्टदायी अनुभवों/घटनाओं के प्रभावों को मिटा दें/कम-से-कम कर दें और हर दिन एक

ताजा, सकारात्मक जीवन जीने लग जाएँ। अतीत के इस प्रकार के कड़वे अनुभवों से निपटने का तरीका है कि हम उनके प्रति जागरूक रहें, उन्हें जानें, अपनाएँ और फिर उन्हें दूर करें। संक्षेप में, हम अपने जीवन में जिस नरक और स्वर्ग की रचना करते हैं उसके दरवाजे की कुंजी है जागरूकता।

5

चूँकि किसी का भी जीवन दु:ख, दर्द और कष्ट के बिना नहीं होता, इस कारण हममें से अनेक लोग अतीत के अनुभवों की कड़वी यादों के साथ जीते रहते हैं। जब कभी हमें उस भावनात्मक नाटकीय मोड़ से गुजरना होता है, जो अतीत में भोगे गए कष्ट जैसा होता है, तब हम उसे सशक्त करते हैं, जिसे सबसे लोकप्रिय आध्यात्मिक लेखकों में से एक एकहार्ट टोल ने अपनी किताब 'अ न्यू अर्थ' में पेन बॉडी कहा है। प्रमुख रूप से यह एक पुरानी भावनात्मक पीड़ा होती है, जो हमारे भीतर जीवित रहती है। क्रोध, घृणा, शोक, ईर्ष्या, उदासी तथा अनेक प्रकार के भावनात्मक ट्रिगर द्वारा इसे निद्रा की अवस्था से जगाया जाता है। सामान्य तौर पर इस प्रकार की नकारात्मक गतिविधियाँ हमारे शारीरिक कष्ट को सक्रिय कर देती हैं और उन्हें फिर से अपने चंगुल में ले लेती है, तब हम मूकदर्शक बन जाते हैं। शारीरिक कष्ट को समाप्त करने का सबसे अच्छा तरीका है कि हम वर्तमान में जीने की कला सीख लें और पर्याप्त रूप से जागरूक रहें, ताकि अतीत की नकारात्मकता और इकट्ठा हुए कष्टदायी अनुभवों के बोझ को कम कर सकें। हमें बस इस पर नजर रखने की, तथा इसका गवाह बनने और इसे स्थान देने की आवश्यकता होती है। फिर धीरे-धीरे इसकी ऊर्जा क्षीण पड़ती जाती है, जैसी व्याख्या एकहार्ट टोल ने की है।

□

11

भ्रम की दुनिया

हम जिस वास्तविकता को देखते हैं और समझते हैं कि वह असली वास्तविकता है, तब हम अपने आपको धोखा देते हैं। हम भ्रम पैदा करनेवाली वास्तविकता से जब परदा उठाते हैं, तभी हम जागरूक होते हैं और समझ पाते हैं कि वास्तविकता की यथार्थ प्रकृति क्या है।

1

हम मनुष्य इस संसार और ब्रह्मांड की वास्तविकता को सही मायने में समझ ही नहीं सकते। उदाहरण के लिए, हमने जब इस कथन को पढ़ा तब हमें लगा कि हम संतुष्ट हैं, लेकिन पृथ्वी दिन में एक बार अपनी धुरी पर पूर्व दिशा में 1040 मील प्रतिघंटा की रफ्तार से घूमती है। पृथ्वी जिस प्रकार सूर्य के चक्कर लगाती है, तो उस हिसाब से हम 70,000 मील प्रति घंटा की रफ्तार से गति में रहते हैं। सूर्य जिस प्रकार आकाशगंगा के चक्कर काटता है, उस हिसाब से हम प्रति घंटा 500,000 मील की रफ्तार से गति में रहते हैं। अब इससे आगे की कल्पना कीजिए कि पृथ्वी आकाशगंगा के केंद्र से 27,000 प्रकाशवर्ष दूर है (हमारी आकाशगंगा ब्रह्मांड की लगभग 200 बिलियन आकाशगंगाओं में से एक है)। क्या आप जानते हैं, एक प्रकाशवर्ष का अर्थ है छह ट्रिलियन मील? अब हम सभी यह कल्पना कर सकते हैं कि ब्रह्मांड में हममें से हर एक का कितना स्थान है। इस प्रकार हम सभी वास्तविकता के निर्माण के लिए अपने मस्तिष्क पर निर्भर रहते हैं, जो इतना

वास्तविक दिखता है और हमें यह भी अहसास नहीं होने देता कि हम वास्तविकता की सच्ची प्रकृति को समझने में सक्षम नहीं हैं।

2

हम एक रहस्यमयी और उलझे हुए जगत् में रहते हैं। हम इस संसार की जितनी ही खोज करते हैं, उतना ही बड़ा रहस्य सामने आता है। थॉमस एडिशन (1847- 1931) के शब्दों में, ''हम किसी भी विषय के एक प्रतिशत का दस लाखवाँ हिस्सा भी नहीं जानते।'' किंतु हम बड़ी दयनीयता से आश्वस्त रहते हैं कि हम अपने आस-पास की घटनाओं को बहुत अच्छी तरह जानते हैं। इस जगत् की सच्चाई को जान लेना हमारी वर्तमान क्षमताओं से बाहर की बात है, क्योंकि धारणा की एक सीमित क्षमता होती है, और इस कारण वह वास्तविकता की सच्चाई को प्रतिबिंबित नहीं करता, साथ ही जितने ही मन हैं उतने प्रकार की व्यक्तिपरक व्याख्याओं की गुंजाइश भी होती है। इस जगत् की सच्चाई को जानने की इन सीमाओं के बावजूद, हम अत्यंत सीमित सूचना के आधार पर बड़ी होशियारी से अपनी ही एक अनोखी वास्तविकता की रचना कर लेते हैं!

3

प्रत्येक मन के अंदर सीमित सूचना के आधार पर वास्तविकता की रचना करने की एक अनोखी क्षमता होती है। दरअसल, मस्तिष्कों को विकास के द्वारा वास्तविकता की खोज के लिए निर्मित नहीं किया गया है, बल्कि उन अस्पष्ट बातों का सर्वोत्तम अर्थ लगाने के लिए बनाया गया है, जो उस तक पहुँचती हैं, और जिनकी व्याख्या एक सिद्धांत के तौर पर अनगिनत तरीकों से (ब्रेन स्टोरीज से उद्धृत) की जा सकती है। यही कारण है कि हम वास्तविकता की काल्पनिक रचनाओं (प्राप्त होनेवाली अटकलों के आधार पर) के प्रकाश में जीते हैं, जिससे कि एक संगठित और प्रणालीबद्ध रूप से विविध प्रकार के भ्रमों का ताना-बाना बुन लिया जाता है। और न जाने क्यों हम कभी भी इस भ्रमित करनेवाली वास्तविकता को भंग नहीं करते, क्योंकि हम चेतन रूप से इसके प्रति जागरूक नहीं हो पाते हैं। इस कारण, हम वास्तविकता की जैसी व्याख्या और रचना करते हैं, उनसे जुड़ी अनेक गलत तथा दोषपूर्ण धारणाओं और व्याख्याओं के चलते जीवन में हताशा, असंतुष्टि, और उनके फलस्वरूप मानसिक विक्षिप्तता एवं कष्ट को भोगते हैं।

4

हरमन हेस के 'डेमियन' में एक चरित्र ने कहा है, ''हमारे अंदर जो है उसके अतिरिक्त और कोई वास्तविकता नहीं है। यही वजह है कि इतने सारे लोग इस प्रकार का असत्य जीवन जी रहे हैं। वे अपने बाहर के दृश्यों को वास्तविकता मान लेते हैं और अपने अंदर के जगत् को कभी सामने नहीं आने देते हैं।'' आंतरिक वास्तविकता सच्ची वास्तविकता का प्रतिबिंब होती है। अपने आपको नुकसान पहुँचाकर भी लोग अपने बाहर की तसवीरों और घटनाओं से वास्तविकता के निर्माण का प्रयास करते हैं। हममें से हर एक वास्तविकता को पहले से मन में बैठे विचारों, धारणाओं, और अतीत के अनुभवों के आधार पर एक बाधा/परदे के जरिए पूर्ण रूप से अलग रूप में देखता है। इसलिए लोग एक जैसी स्थिति/घटना की पूर्ण से भिन्न व्याख्या कर सकते हैं। हममें से हर एक व्यक्ति अपने अनोखे तरीके से यथार्थ को तोड़ता-मरोड़ता है, जो वस्तुनिष्ठ यथार्थ से अकसर बहुत अलग होता है। इस प्रकार हम अपने मन में समाए संसार को कभी सच्चे अर्थों में अपने रहस्योद्घाटन का अवसर नहीं देते हैं।

5

हमारे अंदर उस सीमित/क्षुद्र सूचना के आधार पर, जिन्हें हम सामान्य तौर पर अविश्वसनीय बाह्य जगत् से इकट्ठा करते हैं, कल्पना करने, तसवीरों को गढ़ने और वास्तविकता को समझने की भरपूर क्षमता होती है। अधिकांशतया, हम उसकी पुष्टि करने का प्रयास नहीं करते, बल्कि हम उस वास्तविकता के प्रति निश्चित रहते हैं और उसके अनुसार ही कार्य भी करते हैं। यह उसी प्रकार है जैसे वास्तविकता की व्याख्या किसी हिमखंड के नोक से कर दी जाए और जो हमारी समझ से बाहर है उसकी अनदेखी कर दी जाए। इसका अर्थ यह हुआ कि हम एक व्यापक तौर पर काल्पनिक और भ्रमित करनेवाले जगत् में रहते हैं, जो हमारे आसपास के जगत् की यथार्थपरक अभिव्यक्ति से कोसों दूर है। सत्य के प्रति यही अज्ञानता तमाम समस्याओं और तबाही लानेवाली परिस्थितियों के लिए जिम्मेदार है, जो अंततः जीवन को कष्टमय बना देते हैं। इस सीमा को समझना और जान लेना ही हमारे जीवन पर इनके प्रभाव से छुटकारा पाने के लिए पर्याप्त है।

6

इस भौतिक जगत् में कई लोग वास्तविकता को समझने के अपने पैमाने पर

चट्टान की तरह अडिग रहते हैं, जैसे हम जो देख-समझ रहे हैं वह किसी मेज और कुरसी के समान ठोस है, जो अन्य सभी वस्तुओं से अलग है। दूसरा, हम यह मान लेते हैं कि हम जिसे देखते, सुनते, सूँघते, चखते और छूते हैं वह भ्रम नहीं, बल्कि वास्तविकता है। हम यह भी मान लेते हैं कि द्रष्टा के रूप में अपने आसपास की वास्तविकता के निर्माण में हमारी छोटी या कोई भूमिका नहीं होती, और उसमें उन्हें भी शामिल कर लेते हैं, जिन्हें हमारी इंद्रियाँ देख-समझ नहीं पाती हैं। इसी प्रकार ऐसे अनेक छिपी धारणाएँ हैं, जिनके आधार पर हम यह तय कर लेते हैं कि क्या संभव हो सकता है या क्या सत्य हो सकता है। हममें से अधिकांश लोग इस धारणा के वश में रहते हैं और यह तक समझ नहीं पाते कि हम उनके जाल में कैसे फँस चुके हैं। हम जब उन हठधर्मी धारणाओं पर गहराई और बिना भटके नजर डालते हैं, तब हमें अहसास होता है कि हम वास्तविकता की सच्ची और वस्तुनिष्ठ समझ से कितना दूर रहकर जीवन बिता रहे हैं।

7

चूँकि हर किसी के मस्तिष्क में उसका अपना ही चुना हुआ फिल्टर होता है, इसलिए हम अपने आसपास के जगत् को अपने अनोखे रूप में देखते हैं। यह फिल्टर करनेवाली प्रणाली हमारे मन में इस प्रकार बनी है कि हमें तसवीर का एक छोटा सा अंश ही दिखता है, जो इस बात पर निर्भर करता है कि हमें उसे किस प्रकार देखने की आदत पड़ चुकी है। मस्तिष्क क्या देखता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम क्या देखना चाहते हैं या हमारी जरूरत क्या है। शोधकर्ताओं ने भी इस बात की पुष्टि कर दी है कि मस्तिष्क अपने आसपास की सारी सूचनाओं को नहीं समझ पाता है। इसकी बजाय, वह उन आंशिक बातों पर ही गौर करता है, जिनसे हम अपनी सुविधा के अनुसार एक मानसिक जगत् का निर्माण कर सकें। मस्तिष्क इस सूचना का प्रयोग विश्व का एक मॉडल बनाने के लिए करता है, और यह वह मानसिक जगत् होता है, जिसमें हम सभी जीते हैं। अधिकांशतया इसका परिणाम वास्तविकता की गलत धारणा के रूप में सामने आता है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने विशिष्ट फिल्टर प्रणाली से विश्व को अपने अनोखे रूप में देखता है। यही वजह है कि हममें से हर एक व्यक्ति एक ऐसे जगत् में रहता है, जो अन्य सभी लोगों से एकदम भिन्न होता है।

8

प्लेटो द्वारा दिया गया गुफा का रूपक मनुष्य का अपने आसपास के जगत्

को लेकर धारणा बनाने से जुड़े भ्रम को संक्षेप में बता देता है। इस प्रसिद्ध रूपक में महान् ग्रीक दार्शनिक प्लेटो (428–348 ई.पू.) ने मनुष्य को एक गुफा में बेड़ियों से बँधे बंदी के रूप में दिखाया था कि वह कैसे जन्म से ही इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में आ जाता है। उन्हें इस गुफा में और कुछ नहीं, बल्कि बाहर जल रही अग्नि से गुफा की दीवारों पर बननेवाली सिर्फ अपनी परछाईं दिखाई देती है। गुफा की दीवारों के बाहर की वास्तविकता से अनजान मनुष्य के लिए वास्तविकता वही होती है, जो उसे गुफा की दीवारों पर बने प्रतिबिंब में दिखाई पड़ती है। गुफा के बाहर की वास्तविकता से वे पूरी तरह से अनभिज्ञ रहते हैं। प्लेटो ने जिस परछाईं का वर्णन किया वे हमारी संवेदी आँकड़ों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन पर स्वयं संवेदी प्रक्रिया का परदा पड़ा रहता है। गुफा में जन्मा मनुष्य हमारी आत्मा के समान है, जो हमारे बंधनों के कारण कष्ट भोगता है। हम सभी को उस परछाईंवाली दुनिया से बाहर आकर इस जगत् की सच्ची वास्तविकता का अनुभव करने की आवश्यकता है।

9

आम तौर पर हम आदतों एवं धारणाओं से इस प्रकार बँधे रहते हैं कि हम अपनी संकीर्ण सोच से ही हर व्यक्ति और वस्तु की व्याख्या कर लेते हैं। यदि हम उसे समझना चाहते हैं, जो इस संसार का सत्य है तो हमें अपनी चेतना का विस्तार करना होगा, जिससे कि हम चीजों को एक वृहत् परिप्रेक्ष्य में समझ सकें। ऐसा करने से हम घटनाओं को निरंतर नए स्वरूप और नई व्याख्या के साथ देख सकेंगे तथा तेजी से बदलते परिदृश्य में नए अर्थ ढूँढ़ सकेंगे। एक महान् उद्देश्य से प्रेरित होकर हम एक लचीली सोच विकसित कर सकते हैं, जो हमें उच्च स्तर तक ले जाने में मदद करेगा।

10

विचारक और दार्शनिक लंबे समय से यह कहते रहे हैं कि हम जिस संसार को देखते हैं उसके पीछे एक ऐसी वास्तविकता छिपी है, जो इस संसार से पूरी तरह भिन्न है। 18वीं सदी में जर्मन दार्शनिक इमानुएल कांट ने एक प्रसिद्ध सिद्धांत दिया कि जिस वास्तविकता का अनुभव हम करते हैं उसका निर्माण हमारे मन ने किया है, और मन हमारे विश्वासों, अनुभवों तथा इच्छाओं के कारण सीमित होता है। एक तरफ हमारा कठोर रूप से रूढ़िवादी मन होता है, तो दूसरी तरफ कमजोर याद्दाश्त और क्षणभंगुर ध्यान (हम ध्यान लगाने/गौर करने में विफल रहते हैं) के

कारण हमारी सोच सीमित हो जाती है। कल्पना पर अत्यधिक निर्भरता के कारण हम इस जगत् की वास्तविकता को देख-समझ नहीं पाते। इस कारण हम उस सत्य को नहीं जान पाते, जिसका वास्तव में अस्तित्व होता है।

11

दो व्यक्ति वास्तविकता को समान रूप से नहीं देख पाते हैं। कोई फिल्म देखने के बाद प्रत्येक व्यक्ति उसकी बातों का अपना ही मतलब निकालेगा। इसी प्रकार वास्तविकता को लेकर प्रत्येक व्यक्ति की धारणा अलग होती है। अपने अतीत के अनुभवों, धारणाओं, ध्यान के कारण हम वास्तविकता को एक अनोखे रूप में देखते हैं, और इस वजह से ही हमारी आकांक्षाएँ और इच्छाएँ उन विशेष क्षणों के सापेक्ष होती हैं। बाहरी जगत् से मिलनेवाले जबरदस्त आँकड़ों/सूचाओं में से इंद्रियों द्वारा मामूली मात्रा में आँकड़ों पर गौर किया जाता है। हम वास्तविकता को तीन चरणों की प्रक्रिया से चुनते हैं, जिनमें शामिल हैं—विलोपन, विरूपण और सामान्यीकरण (रिबेल ब्राउन द्वारा पोस्ट किया गया, योर क्वांटम माइंड इन एक्शन)। हममें से दो लोग कभी भी उसी वास्तविकता को नहीं चुनते हैं, चाहे हम एक ही आँकड़े का अनुभव क्यों न कर रहे हों। यही कारण है कि हम सभी अपने ही तय किए जा चुके तरीकों के आधार पर वास्तविकता की व्याख्या करते हैं, और इस विषय में न के बराबर जागरूक रहते हैं कि दूसरे भी अपनी वास्तविकता का निर्माण करते हैं!

12

वास्तविकता कुछ ऐसी है, जिसका निर्माण हम सभी अपने-अपने लिए करते हैं। हमारी इंद्रियों के माध्यम से, मन इस वास्तविकता की रचना करता है, जिसे हम सभी अपने अनोखे तरीके से समझते हैं और उसकी व्याख्या करते हैं। हालाँकि वहाँ की भौतिक वास्तविकता के (संपूर्ण) सत्य को समझ पाना हमारे लिए संभव नहीं होता, क्योंकि उस सीमा और परिमाण के आँकड़े को समझ पाना हमारी इंद्रियों के बस की बात नहीं होती है। मस्तिष्क के द्वारा केवल सीमित सीमा/बारंबारता के इंद्रिय आँकड़ों को समझा और संगठित किया जा सकता है, जो दृश्य, श्रवण, स्पर्श, घ्राण और स्वाद से संबंधित होते हैं। यही नहीं, हम वास्तविकता की व्याख्या तय विश्वासों, आदतन बने विचारों और स्वाभाविक व्यवहारों के आधार पर करते हैं। यही बाधा वास्तविकता की प्रकृति को विकृत करती है, जिसे कि कुछ लोग कहते हैं कि तय करती है। हममें से अधिकांश लोग इस तथ्य से पूरी

तरह अनजान रहते हैं। हम जब यह मान लेते हैं कि हम जिस वास्तविकता को देख रहे हैं, वही एकमात्र वास्तविकता है तो असल में हम अपने आपको धोखा दे रहे होते हैं। हम भ्रम पैदा करनेवाली वास्तविकता के परदे को उठाते हैं, तब जाकर हमें वास्तविकता की सही प्रकृति का अहसास होता है।

13

हम जब कभी अपनी ही गढ़ी हुई कहानियों के अंश के तौर पर अपने निजी अनुभवों को याद करते हैं, तब हम अपनी सुविधा के अनुसार अतीत को तोड़-मरोड़ देते हैं, ताकि नायक/नायकों के रूप में हमारी भूमिका बनी रहे। इस बात की पुष्टि अनेक शोधकर्ताओं ने की है। एलिजाबेथ एफ. लोफ्टस, जो एक अमेरिका संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिक और मानव स्मृति पर एक्सपर्ट हैं, उन्होंने झूठी यादों की रचना और उनकी प्रकृति पर विस्तार से शोध किया है। उन्होंने दिखाया है कि कैसे हमारी स्मृतियाँ वास्तव में पुनर्निर्मित होती हैं, जिनका कुछ हिस्सा सत्य होता है और कुछ महज कहानी होती है। इस कारण हमारी यादें फिर से गढ़ी गई नई कहानी होती हैं, जो सच्चे अनुभव से तैयार की जाती हैं, लेकिन उन्हें काल्पनिक परिवर्धन और संशोधन द्वारा गढ़ा जाता है। दूसरे शब्दों में, हमारी सबसे प्रिय स्मृतियाँ भी विश्वसनीय नहीं होती हैं, क्योंकि हम उन्हें एक बड़ी कहानी (और आम तौर पर अपनी अधिक चापलूसी) में फिट होने के लिए तोड़-मरोड़ दिया होता है। शोध करनेवाले विद्वानों के अनुसार, इस प्रकार की भ्रम से भरी स्मृतियों के कारण संभव है कि आत्मविश्वास बढ़ जाए और उसका परिणाम सफलता के रूप में देखने को मिले। हालाँकि इससे हमारे अंदर एक भ्रामक अहम का निर्माण होता है, जो हमारे लिए अच्छा भी हो सकता है और नहीं भी।

14

ऐसा कोई रास्ता नहीं जिससे कि हम सच्ची वास्तविकता को या जो वास्तव में वास्तविक है उसे जान सकें। और इसके कारण सरल हैं—इंद्रियों के द्वारा निरंतर रूप से प्राप्त किए जानेवाले आँकड़ों की व्याख्या और विश्लेषण करने की हमारे मस्तिष्क की क्षमता का सीमित होना है। इंद्रियों द्वारा प्राप्त की जानेवाली करोड़ों बिट की सूचना का छोटा सा हिस्सा ही मस्तिष्क द्वारा प्राप्त और शोधित किया जाता है, शेष इंद्रियों की सीमा/बारंबारता से बाहर होता है। कुत्ते, चमगादड़, उल्लू, व्हेल आदि उन आँकड़ों को समझ लेते हैं, जो मनुष्यों की समझ से परे होते हैं। इस प्रकार मस्तिष्क वास्तविकता का आईना नहीं, बल्कि सूचना का संसाधक (प्रोसेसर)

होता है। मस्तिष्क तक जो भी सूचना पहुँचती है उसे पूर्वनिर्धारित विचार और व्यवहार के परदे से छाना जाता है। पहले से बनी धारणाएँ, आकांक्षाएँ, भेदभाव, अंतर्निहित भय, और इन सबसे अधिक, उस बात पर विचार करने की अनिच्छा (मन के दरवाजे को बंद कर लेना), जिन्हें हम पसंद नहीं करते, सूचना को और भी विकृत कर देता है। इस छाने जाने के कारण ही हममें से हर एक व्यक्ति सूचना की व्याख्या अपने ही अनोखे तरीके से करता है। जब तक हम ग्रहणशीलता, खुलापन और चीजों को उनके सही रूप में देखना नहीं शुरू करते, तब तक हम इस संसार की सच्ची वास्तविकता से कोसों दूर रहेंगे।

□

12

क्या स्वतंत्र इच्छा एक भ्रम है?

हमें जब इस बात का अहसास होता है कि हम जिन फैसलों को करते हैं उनके प्रति या उनके परिणामों के प्रति हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं होती, तब एक भ्रम पैदा करनेवाली 'स्वतंत्र इच्छा' का उदय होता है और तभी हम सच्ची स्वतंत्रता पाते हैं।

1

आध्यात्मिक गुरु और महात्माओं ने बरसों से स्वतंत्र इच्छा की भ्रामक प्रकृति की बात कही है, लेकिन हम में से अधिकांश लोग इसे सहज भाव से स्वीकार नहीं करते। पहले तो इस धारणा को सिद्ध करने के लिए कोई वैज्ञानिक तथ्य नहीं है, और दूसरा, हम स्वयं ही अपने दैनिक जीवन में दिन-रात स्वतंत्र इच्छा का प्रयोग करते हैं। मानव चेतना के विषय पर महत्त्वपूर्ण कार्य करनेवाले अमेरिकी वैज्ञानिक बेंजामिन लिबेट ने दिखाया है कि हमारे निर्णय लेने (या स्वीकार करने) से लगभग आधा सेकेंड पहले एक विचार उत्पन्न होता है। इसे एक क्रांतिकारी खोज माना गया है तथा इसकी पुष्टि आगे आनेवाले शोधकर्ताओं ने भी की है। यदि ऐसा है, तो स्वतंत्र इच्छा की बात एक भ्रम मालूम पड़ती है, जैसा कि आध्यात्मिक गुरु भी कहते रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी अचेतन मानसिक प्रक्रिया चेतन मन द्वारा किसी इच्छा को कार्य रूप देने से पहले ही कदमों की शुरुआत कर चुकी होती है (विकिपीडिया)।

2

हममें से अधिकांश को लगता है कि हम अपने विचारों और कार्यों के स्वामी

हैं। किंतु इस पर गहराई से सोचिए कि हमारे मन में विचार कैसे उत्पन्न होते हैं। सोचने पर हमें लगता है कि हमारे मन में उठनेवाले विचार, मंशा, और यहाँ तक कि हमारे चुनाव भी मूलत: एक रहस्यमयी प्रक्रिया के समान हैं। वे बस मन में उत्पन्न हो जाते हैं, किसी निर्वात से अचानक ऐसे प्रकट होते हैं, जिसकी व्याख्या नहीं की जा सकती है। यदि ऐसा है, तो फिर स्वतंत्र इच्छा कहाँ रह जाती है, जिसे हमें लगता है कि हम जब चाहें प्रयोग करते हैं? विचार और मंशा हमारे मन में उठती है और हम उनके आधार पर कार्य करते हैं। न्यूरोबायोलॉजिस्ट मार्टिन हेसनबर्ग ने बताया है कि हमारे मस्तिष्क में अनियंत्रित प्रक्रिया के कारण, हमारे अधिकांश व्यवहारों को वास्तविक रूप से 'स्वत:-उत्पन्न' कहा जा सकता है। अपनी किताब 'फ्री विल' में सैम हैरिस इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि ''विचार और मंशाएँ बस हमारे मन में प्रकट होती हैं। वे और कर भी क्या सकते थे? हमारी सच्चाई उससे कहीं अधिक विचित्र है, जितना हम मानते हैं : स्वतंत्र इच्छा का भ्रम अपने आप में ही एक भ्रम है।''

3

हम संसार को उस प्रक्रिया के तहत ही देखते हैं, जिसकी शिक्षा हमें दी गई है। कुछ चीजों पर विश्वास करने का प्रशिक्षण और अनुकूलन इस प्रकार किया गया है कि हम उन बातों को मानते हैं, जो अनिवार्य रूप से सत्य नहीं होतीं। शैशव काल से ही हम पर अपने माता-पिता, शिक्षकों, दोस्तों और व्यापक तौर पर समाज की शिक्षा और तौर-तरीकों का प्रभाव होता है। धीरे-धीरे हमें सिखाई गईं अधिकांश धारणाएँ जड़ें जमा चुकी विचार-शैली का रूप ले लेती हैं। हम विश्व को अपने पूर्वग्रह और आत्म-केंद्रित स्थान से देखते हैं और सामान्य तौर पर उसकी वास्तविक प्रकृति से अनजान रहते हैं। अपने तथा दूसरों के विषय में प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही धारणा बनाता है, जो उनके पूर्वग्रह से ग्रस्त और भेदभावपूर्ण मन द्वारा निर्धारित की जाती है। यही कारण है कि रॉबिन शर्मा ने अपनी किताब 'डिस्कवर योर डेस्टिनी विद द मॉक हू सोल्ड हिस फेरारी' में लिखा है, ''हमारा यह संसार किसी भी लिहाज से कंप्यूटर से तैयार एक कपोल-कल्पना नहीं है। किंतु मेरे दोस्त जिस संसार को तुम वास्तविक मानकर अभी देख रहे हो, वह बस एक भ्रम है।''

4

हम सभी का एक स्वचालित अचेतन मन होता है, जिसमें आदत में शुमार विचार और धारणाएँ होती हैं। यदि कोई व्यक्ति आस-पास की घटनाओं के प्रति

जागरूक नहीं होता, तो वह अचेतन रूप से प्रतिक्रिया करता है। हममें से हर एक को इस प्रकार तैयार किया गया है कि हम अतीत के अनुभवों, शिक्षा, धारणाओं, मूल्यों आदि के आधार पर एक विशेष तरीके से व्यवहार करते हैं। उसे लगता है कि वह स्वतंत्र रूप से चुनाव कर रहे हैं, लेकिन यथार्थ में उसे उसके अनुकूलित मन ने सीमित जागरूकता के साथ सोचने और कार्य करने के लिए पहले से ही तैयार कर दिया है। अधिकांश मनुष्य इसी शैशव काल में हैं। इस अवस्था से हमें केवल ग्रहणशीलता, संवेदनशीलता, और बदलती परिस्थितियों के प्रति खुली और स्पष्ट दृष्टि ही जगा सकती है।

5

अवचेतन निर्देशों के आधार पर हम तुरंत निर्णय लेते हैं और फिर कार्य करते हैं, जबकि अवचेतन मन पर हमारा किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं होता है। यहाँ तक कि जब हमें लगता है कि हम चेतना से तथा अच्छी तरह सोच-समझकर निर्णय ले रहे हैं, तब भी उस दौरान तर्क और इच्छा को तय करने में अवचेतन अंग, हमारे अवचेतन व्यवहार के तरीकों के साथ मिलकर एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सदियों के बीतने के दौरान हमारे मस्तिष्क में विभिन्न विशिष्ट प्रसंस्करण क्षेत्र विकसित हो चुके हैं, जो मानवता के अस्तित्व को सुनिश्चित करते हैं। यह अंग निरंतर रूप से हमारे चेतन अनुभवों के पीछे काम कर रहे होते हैं। यदि हमारे मस्तिष्क में यह अंग नहीं होते तो हमारा बचना मुश्किल था। इन परिस्थितियों में हम जिस स्वतंत्र इच्छा को लेकर पूरी तरह आश्वस्त रहते हैं, उसका न केवल बहुत थोड़ी (यदि करते भी हैं तो) मात्रा में प्रयोग करते हैं, बल्कि हम अपने कार्यों और व्यवहारों की व्याख्या करने तथा उन्हें सही ठहराने में भी काफी हद तक सक्षम नहीं होते हैं।

6

हम सभी असीमित क्षमता के एक महासागर में रहते हैं, जिनसे फल प्राप्त करने के लिए हम ईश्वर से मिले स्वतंत्र इच्छा के उपहार के माध्यम से चुनाव और कार्य कर सकते हैं। हम प्रत्येक चुनाव और कार्य से अपना एक संसार बनाते हैं। हालाँकि स्वतंत्र इच्छा से एक शर्त जुड़ी होती है। हमें स्वतंत्र इच्छा के प्रयोग की एक भारी कीमत चुकानी पड़ती है। अपनी स्वतंत्र इच्छा के माध्यम से ही मनुष्य दूसरों पर बुरे, क्रूरतापूर्ण और अमानवीय कार्य करता है। अच्छे लोग क्रूर मन द्वारा नियंत्रित निर्दयी लोगों के हाथों कष्ट भोगते हैं। इतिहास में इसके अनेक उदाहरण

हैं : मनुष्य की अमानवीय प्रकृति के कारण लाखों लोग मारे गए हैं। इसका केवल एक विकल्प है स्वतंत्र इच्छा के बिना मानवता, और ऐसा हो पाना संभव नहीं है। मनुष्य के जीवित रहने और उसे होनेवाले अहसास के लिए स्वतंत्र इच्छा एक अनिवार्य शर्त है। दार्शनिक और विचार सदियों से इस 'चिरस्थायी सवाल' का हल ढूँढ़ रहे हैं। मनुष्य को यदि चेतना के उच्च स्तरों तक उठना है, तो दु:ख और दर्द से हृदय में देवत्वरूपी प्रेम उमड़ सकता है।

7

क्या हमारे जीवन पर अनिश्चितता और अनियतिवाद का राज है ? हम सभी जानते हैं कि हमारे कर्मों का फल हमारे हाथ में नहीं होता है। यदि हम ध्यान से देखें, तो हमें अहसास होता है कि विचारों तथा भावनाओं पर हमारा नियंत्रण लगभग नहीं के बराबर है। इसी प्रकार मन में आनेवाले विचारों का प्रवाह भी एक पूर्णतया अनायास और रहस्मयी तरंगों की प्रक्रिया है—यानी कार्यप्रणाली का पतन (जिसे क्वांटम यांत्रिकी की भाषा में 'फंक्शन कोलैप्स' कहते हैं)। संभावित विचारों की अनंतता में मन में विचारों का प्रवाह अनायास ही होता है। अतीत की शिक्षा, निजी अनुभव और आनुवंशिक गुणधर्म भी निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। इस कारण हम इन विचारों और भावनाओं के आधार पर जो निर्णय लेते हैं, और इन निर्णयों का जो परिणाम/निष्कर्ष सामने आता है, वह चुनाव की स्वतंत्रता के हमारे अटल विश्वास के पूर्णतया अनुरूप नहीं होता है। दूसरे शब्दों में, स्वतंत्र इच्छा की अवधारणा काफी हद तक संदेहास्पद हो जाती है। हालाँकि हमें लगता है कि हमारा अपने जीवन पर पूर्ण या पर्याप्त नियंत्रण है, जबकि हम जैसा चाहते हैं उसके अनुसार चीजें नहीं होती हैं। यही वजह है कि जब हमें यह अहसास हो जाता है कि अपने निर्णयों के लिए, या काल्पनिक स्वतंत्र इच्छा के परिणामों के लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं, तब हम सही मायने में स्वतंत्रता प्राप्त कर लेते हैं। □

13

अहम का आंतरिक आत्मा से टकराव

अहम का दबाव जहाँ हमारे स्वार्थी मन पर पड़ने लगता है और एक बार स्वार्थ पीछे हट जाता है, तब आध्यात्मिक विकास की ओर हमारी यात्रा तेज रफ्तार से बढ़ जाती है‥

1

अपने आंतरिक अहम की अपेक्षा हम सभी को अपनी ही बात (स्वार्थ ही हमारा अहम है) सुनना अच्छा लगता है। आंतरिक अहम या आत्मा सदैव हमारे उत्तम हित की बात सोचती है और हम जो कुछ भी करते हैं उसके पीछे की मंशा को समझती है। यही कारण है कि अकसर हमारा अहम जो कहता है और जो बात हमारे अंदर से उठती है, उन दोनों के बीच एक टकराव होता है। यह याद रखिए कि अहम भौतिक सुख, सत्ता और भौतिक वस्तुओं को इकट्ठा करने को लेकर चिंतित रहता है, लेकिन आंतरिक अहम एक ओर स्वार्थ की कभी न समाप्त होनेवाली माँग पर लगाम लगाता है, तो दूसरी तरफ हमें आध्यात्मिक विकास और परिवर्तन की ओर ले जाता है। हमारा वास्तविक अहम जब प्रकट होता है, तब वह हमारी सोच, संसार को देखने और अपने जीवन को हम कैसे जीते हैं, उन सभी को चुनौती देता है। आंतरिक अहम हमें दु:ख नहीं भोगने देता, बल्कि जब हम इसकी आवाज में छिपी भावना को दबाते हैं, तब हम अवश्य कष्ट भोगते हैं।

2

यह सही कहा गया है कि जीवन की सभी गूढ़ बातों और रहस्यों के साथ

भगवान् हम सभी के अंदर रहते हैं। हालाँकि सांसारिक विषयों में हमारा मन इस प्रकार उलझा रहता है कि हम उनके हल को तलाशने के लिए अपने अंदर झाँकने का समय शायद ही कभी निकाल पाते हैं। सच्चा सुख पाने का एकमात्र रास्ता अपने वास्तविक अहम को स्वीकार करने और उसके अनुसार जीवन जीने में है। यदि हम नहीं जानते कि हम कौन हैं तो हम सुखी नहीं रह सकते हैं। और हम तभी अपने आप को जान सकते हैं, जब जड़ें जमा चुकीं उन ठोस धारणाओं को समाप्त करें जिन पर हम विश्वास करते आए, और आंतरिक अहम की खोज के लिए अंदर की यात्रा करें। वास्तविक शांति और स्थिरता तथा चिरस्थायी सुख बाहरी जगत् से नहीं, बल्कि आंतरिक दायरे से ही प्राप्त होगा।

3

हमें एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिलेगा जो सदा प्रसन्न और संतुष्ट रहता है। हम जिससे भी मिलते हैं, उसे कोई-न-कोई दु:ख या तकलीफ होती है, वह किसी चीज से डरता है, किसी से प्रेम करता है और किसी की इच्छा रखता है, और उसने कुछ-न-कुछ खो दिया है। जीवन ऐसा ही है। मनुष्य स्वयं असुरक्षित है, और अपने विचलित मन, अप्रत्याशित मनोदशा और स्वभाव के कारण, उसकी मानसिक स्थिति सदैव बदलती रहती है। हम दूसरे लोगों के कार्यों और व्यवहारों, तथा उन परिस्थितियों के प्रति कहीं अधिक संवेदनशील रहते हैं, जिनसे हमारा कोई लेना-देना भी नहीं होता है। लगभग सदा ही, बाहरी जगत् की दैनिक और सांसारिक बातों में उलझे रहने के कारण, हम अपने आंतरिक अहम को नजरअंदाज कर देते हैं, जो शाश्वत कृपा का स्रोत होता है!

4

हम (अपने स्वार्थ के रूप में) जिन्हें जीवन की गलतियाँ और विफलताएँ मानते हैं, उन्हें हमारी आत्मा बिलकुल भी समस्या नहीं मानती, क्योंकि वह किसी गलती और विफलता को नहीं जानती है। इसकी बजाय, प्रत्येक गलती और विफलता एक सबक सीखने का अवसर होती है। हमारी आत्मा का मुख्य उद्देश्य हमें एक उच्च स्तर के मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर ले जाना होता है, चाहे उन घटनाओं से हमें कितना ही नुकसान क्यों न हो। तो फिर हम विफलता प्रतीत होनेवाले सारे अवसरों को सीखने के एक मौके के तौर पर क्यों नहीं देखते हैं? ऐसा करना कठिन होता है, क्योंकि सदा ही हमारी आत्मा नहीं, हमारा स्वार्थ सोचता रहता है।

5

आत्मा से स्वार्थ की बात : मैं, आपकी आत्मा, सदा ही अपने मन में आपका सर्वोत्तम हित सोचती हूँ, चाहे जब भी आप मुझसे बात करें। मैं आपको सर्वोत्तम निर्णयों और कार्यों की ओर निर्देशित करती हूँ। किंतु मैं जानती हूँ कि आप कई अवसरों पर इस डर से मेरी ओर नहीं देखते, क्योंकि आपको लगता है कि मैं आपके स्वार्थ के कार्यों को सही नहीं कहूँगी। मैं सदैव आपको कष्ट से दूर रखना चाहती हूँ, किंतु आप उन अवसरों पर मुझे अनदेखा करते हैं। आप जानते हैं कि जब आप गलत राह की ओर बढ़ते हैं या मेरे सद्भाव के विपरीत जाते हैं तो मैं आपके मन में फुसफुसाती हूँ, किंतु आप मेरी आवाज नहीं सुनते। आप जब संकट में होते हैं, मैं आपकी मदद करती हूँ और आपकी जागरूकता का विस्तार करती हूँ। मैं आपको इस जगत् में आपकी नश्वरता तथा आपकी क्षणभंगुर, असुरक्षित और भयभीत रहनेवाले स्वभाव की याद दिलाती हूँ, क्योंकि मैं जानती हूँ कि यदि आप मेरी बात नहीं सुनेंगे तो आपकी अज्ञानता से आपको पीड़ा सहनी पड़ेगी (फ्रेड एलन वुल्फ, द स्पीरिचुअल वर्ल्ड)।

6

यदि हम अपने मन पर गहराई से गौर करें, तो हमें अहसास होगा कि यह दो स्तरों पर कार्य करता है, और इस कारण हमारे सिर में दो सत्ता होती है। बाहरी स्तर पर वह होता है, जिसे बुद्ध ने मंकी माइंड कहा था। यह हमेशा बेचैन, व्याकुल, अस्थिर, उलझन में नियंत्रण से बाहर रहता है। यहाँ 'मैं' ही सर्वोच्च होता है। यदि हम वास्तविक अहम को इस दिमाग से अलग कर दें तथा अपने विचारों के कोलाहल को अनदेखा कर दें, तो हम अपने आंतरिक मन/स्वयं को प्राप्त कर लेते हैं। सत्य और चिरस्थायी शांति बाहरी जगत् से नहीं, बल्कि आंतरिक स्वयं से प्राप्त होती है। हम इस दायरे की ओर ध्यान तथा आध्यात्मिक प्रयासों द्वारा प्रेम, करुणा, और दूसरों के लिए चिंता पैदा कर बढ़ सकते हैं।

7

इस यंत्रवत दुनिया में हम भौतिक सामान इकट्ठा करते रहते हैं तथा अपने सुख और अपनी हैसियत को बिना यह जाने लगातार बढ़ाने में प्रयासरत रहते हैं कि हमारी मूल समस्या मनो-आध्यात्मिक अज्ञानता है। मन कभी भी महज उन वस्तुओं से संतुष्ट नहीं होगा जो हमें पैसा या सत्ता तथा हैसियत की अनुभूति कराते

हैं। और क्या आप जानते हैं कि ऐसा क्यों है? क्योंकि हम वास्तविक जगत् की ओर पूरी तरह आँखें मूँदे रहते हैं, जबकि वह हमारे ही मन में है। बाहरी स्वयं वह है, जहाँ सारी गलत धारणाएँ और भ्रम पैदा होते हैं, जिसके बाद असंतोष और अप्रसन्नता उत्पन्न होती है। हमें अपने अंदर झाँकने और सुनने की आवश्यकता है कि हमारा आंतरिक अहम क्या चाहता है। हम बाहर देखते हैं, सपनों की ओर, जबकि कार्ल गुस्ताव ने ठीक कहा है कि जो अंदर झाँकता है, वही जागता है।

8

हम सभी अपने स्वयं के विषय में कहानियाँ बनाते हैं और 'मैं' को उसके केंद्र में रखते हैं। उस कहानी (वास्तव में, एक निजी मिथक) के आधार पर हम अपने स्वयं की व्याख्या करते हैं। अपने चतुर और पूर्वग्रह से ग्रसित दिमाग की मदद से हम अपने भूत और वर्तमान के अनुभवों से जुड़े तथ्यों को तोड़ते-मरोड़ते/दोहराते, मिटाते, और उनसे छेड़छाड़ करते हैं, ताकि हमारा अहंकार, या बड़ा मैं उस कहानी का हीरो/हीरोइन बना या बनी रहे। इस प्रकार के वृत्तांत भ्रामक होते हैं, क्योंकि वे वास्तविकता पर आधारित नहीं होते, बल्कि वे मैं मेरा के आधार पर धूर्तता के साथ गढ़ी गई कहानी पर निर्भर होते हैं। चेतन और अचेतन रूप से हम अपने अनुभवों, धारणाओं, विश्वासों और विचारों को इस निजी महाकाव्य में इस प्रकार जोड़ते चले जाते हैं कि मैं हमारा आदर्श बना रहे। यह सफल या त्रासद रूप से विफल हीरो या परिस्थितियों के शिकार के केंद्र में रहता है, जो शायद ही कभी कोई गलती या बुराई या दुष्कृत्य करता है (ब्रूस हुड, द सेल्फ इल्यूजन)।

9

अपने निजी विकास के शुरुआती दौर में हम विश्व को स्पर्धा से भरे, शत्रुतापूर्ण, और उदासीन रूप में देखते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि 'यह सर्वोत्तम ही जीवित रहता है' के डार्विनवादी सिद्धांत पर कार्य कर रहा हो। इसका कारण यह है कि हमारे हितों को साधने में जुटा रहनेवाला स्वार्थ हमारी सारी आकांक्षाओं और प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करता है। यही नहीं, बाहरी स्वयं तथा आंतरिक स्वयं के बीच हितों के टकराव की वजह से सामंजस्य नहीं होता है। चूँकि हमारे जीवन में असुरक्षा की भावना व्याप्त रहती है, इस कारण हम भौतिकवादी सुरक्षा का अपना किला बनाते और विस्तृत करते चले जाते हैं। हालाँकि धीरे-धीरे इसका अहसास होने के बाद इसे पलटते ही हमारा अंदरूनी दायरा विस्तृत होने लगता है।

10

हममें से प्रत्येक व्यक्ति देर-सवेर इसका अहसास कर लेता है कि अहंकार और आंतरिक स्वयं की आत्मा के बीच एक संवेदनशील संतुलन होता है और वही शाश्वत शांति और सुख के उच्चतर पथ पर सबसे अधिक महत्त्व रखता है। अहंकार हमारे कार्यों और व्यवहार के लगभग सभी पहलुओं को नियंत्रित करता है। मौलिक स्तर पर, अहंकार को आत्मा के अंगरक्षक की भूमिका समर्पित भाव से निभानी चाहिए। हालाँकि समस्या तब खड़ी होती है, जब अंगरक्षक अपनी प्राथमिक भूमिका को भूल जाता है और व्यर्थ ही आत्मा के वैभव पर ग्रहण लगाने का प्रयत्न करता है तथा मनुष्य को स्वार्थ-केंद्रित व्यवहार करने का निर्देश देने लगता है। जब तक कि किसी-न-किसी प्रकार का संतुलन नहीं स्थापित होता, तब तक हम अहम और आत्मा के बीच टकराव का लगातार शिकार होते रहेंगे। हम जब अहम की मंशा के प्रति सचेत हो जाते हैं और आत्मा को स्वीकार कर लेते हैं, तब हम इस जारी संघर्ष पर काबू पा सकते हैं। हमारी आत्मा को सुरक्षा की आवश्यकता नहीं, किंतु अहम को परिष्कृत किया जाना आवश्यक है।

11

हमारे अहम और आंतरिक/वास्तविक अहम के बीच सदा ही टकराव होता रहता है। अहम ही हमारे विचारों और कार्यों पर हावी रहता है तथा यह भौतिक साधनों को इकट्ठा करने के अतिरिक्त, भौतिक सुख और निजी सत्ता के इंतजाम में जुटा रहता है। दूसरी तरफ, हमारा वास्तविक अहम ऐसा महान् द्रष्टा और मार्गदर्शक होता है, जो चेतना के उच्च स्तर के पथ पर हमारा मार्गदर्शन करता है। जैसे-जैसे आध्यात्मिक जागरूकता सशक्त होती जाएगी, अहंकार समाप्त होने शुरू हो जाएगा। यही कारण है कि अहम और वास्तविक अहम के बीच लगातार संघर्ष चलता रहता है। हालाँकि जिस दिन हम स्वार्थ से भरे अहम और अपने बाहरी अहम के बीच टकराव को देखने लग जाते हैं, उसी दिन से हमारी आध्यात्मिक यात्रा आरंभ हो जाती है। उसी समय वास्तविक अहम हमारे स्वार्थ से भरे मन पर अपना नियंत्रण बढ़ाने लगता है तथा एक बार अहम पीछे हटता है, तो आध्यात्मिक विकास की ओर यात्रा में तेजी आ जाती है। निस्संदेह वह हमारे निजी विकास का एक महत्त्वपूर्ण पल होता है।

12

प्रिय भारतीय गुरु रमन महर्षि ने लोगों से अपील की थी, ''अपने विचारों पर गौर करो और सुनिश्चित करो कि वे उस मूल विचार से उत्पन्न हों, जो हमारे मन पर प्रभुत्व रखता है।'' जब हम मैं के विचार को देखते और परखते हैं, तब हमें अहसास होता है कि मैं महज एक स्वार्थ से भरपूर 'मैं' है, जो हमारा वास्तविक स्वयं, आंतरिक स्वयं नहीं है। इसकी बजाय यह एक ऐसे माध्यम के रूप में कार्य करता है, जिसके जरिए हमारे सारे विचार, भावनाएँ और कार्यों को परिष्कृत और निर्देशित किया जाता है। यही 'मैं' (और विशेष 'मैं' और अधिकार संबंधी 'मेरा') ही स्वार्थी विचार का मूल कारण है, जिसके कारण आत्म-केंद्रित और भेदभावपूर्ण व्यवहार और कार्य किए जाते हैं। आशा के अनुरूप यह मैं अथक रूप से पहचान की निर्मित भावना यानी एक बार फिर मैं का बचाव और उसे सशक्त बनाने के लिए कार्य करता है। हम जब विचार की प्रक्रिया से बाहर निकलते हैं और संसार को अपने आंतरिक अहम की आँखों से देखते हैं, केवल तभी हम उस मैं के बेदाग नजरिए देख पाते हैं, जो भय, इच्छा और अनुराग से मुक्त होता है।

□

14

यह संसार एक आईना है आंतरिक जगत् का प्रतिबिंब

ब्रह्मांड की संरचना इस प्रकार की गई है कि यदि हम अपने जीवन और आस-पास के जगत् में सुख देखना चाहते हैं तो हमें अपने अंदर खुशी का निर्माण करना होगा।

1

यह संसार एक दर्पण के सामन है। यदि हम शांत और सुखी हैं, तो हमें अपने चारों तरफ खुशी दिखाई पड़ती है। यदि हमारे दिमाग में नकारात्मक विचार और भावनाएँ भरी होती हैं, तब यही संसार हमें मनहूस, उदास और शत्रुतापूर्ण दिखने लगेगा। इस कारण हम इस संसार को अपने मन के मुताबिक अपने ही तरीके से देखते हैं। यही वजह है कि हम जिन बातों के प्रति खुलापन रखते हैं या जिसमें सबसे अधिक दिलचस्पी लेते हैं, तथा/या अनुभव करने की आवश्यकता समझते हैं, उसके मुताबिक ही आंशिक वास्तविकता को देखते हैं। हमारे आस-पास का संसार सुंदर और प्रसन्न तथा हँसमुख लोगों से भरा है, बशर्ते हम दिल से अच्छे हैं, दूसरों को लाड़-प्यार करते हैं। अन्यथा, बाहरी जगत् में नकारात्मकता का बाहुल्य है, जो हमें शांति से जीने नहीं देगा।

2

हमारे अंदर जो भी भय, दुःख, हताशा तथा किसी प्रकार की नकारात्मकता

है, तो वह बाहरी जगत् में प्रतिबिंबित होगी। सत्य यह है कि हमारा मन इस जगत् को अपने पूर्व निर्धारित तरीके से देखने और प्रतिक्रिया करने का अभ्यस्त होता है, जो हमारे मनोवृत्ति, व्यवहार और धारणाओं पर आधारित होता है। ब्रह्मांड में जो कुछ भी है वह हमारे आंतरिक अनुभव में स्थित होता है। हाँ, इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे आस-पास एक आईना होता है, यह हमारे आंतरिक जगत् का प्रतिबिंब होता है। यह सब हमारी मनोदशा का परावर्तन होता है। एक प्रसिद्ध कहावत है कि ''हम चीजों को उस रूप में नहीं देखते जिसमें वे हैं, हम उन्हें उस रूप में देखते हैं, जिसमें हम हैं।'' हम दूसरों में जिस क्षमता को देखते हैं वह हमारे अंदर भी है, और जिस सुंदरता को हम देखते हैं वह भी हमारे अंदर होती है।

3

यह ठीक ही कहा गया है कि आपके मन के बाहर कोई वास्तविकता नहीं है। इस संसार में आप जो भी देखते हैं उसकी जड़ें आपके जगत् के आंतरिक विचारों, भावनाओं और धारणाओं में होती है। मन की शांति और स्थिरता इस संसार को चारों ओर फैली स्नेहशीलता से अद्‌भुत बना देती है। इसके विपरीत, यदि हम अंदर से उथल-पुथल में हैं तो हमें बाहरी जगत् में भी उथल-पुथल दिखाई देता है। इस विश्व में हमारी पीड़ा और कोई नहीं, स्वयं हमारी प्रतिक्रिया, हमारी चेतना की दशा बढ़ाती है, जो कुरूपता (एनोच तान द्वारा पोस्ट किया गया 'द वर्ल्ड इस सिंपली ए मिरर') का निर्माण करती है। अत: बाहरी जगत् और कुछ नहीं बस किसी व्यक्ति के आंतरिक मन को प्रतिबिंबित करनेवाला आईना है। बौद्ध जेन ज्ञानी कहते हैं कि वास्तविकता आपका मन, आपकी दुनिया है। वह स्वार्थ जिसने प्रत्यक्ष अलगाव को जन्म दिया हमें दुनिया को वैसा दिखाता है जैसी वह दिखती है। It's an Inside World, Outside Reality.

4

हमारा जीवन हमारी धारणाओं, भावनाओं और कर्मों को प्रदर्शित करता है। एक प्रकार से, हम जिस वास्तविकता को भौतिक जगत् में देखते और समझते हैं वह हमारे आंतरिक अनुभव का ही दूसरा रूप होता है। बाहरी समस्या और रुकावटें हमारे मन की आंतरिक दशा की हूबहू झलक होती हैं। हम जब अपनी अंदरूनी कमियों और रुकावटों को दूर करते हैं, तब बाहरी वास्तविकता उसके अनुसार ही सामने आती है और हम विश्व को उसी प्रकार महसूस करते हैं जैसा कि हम अंदर

से महसूस कर रहे होते हैं। ब्रह्मांड की संरचना इस प्रकार की गई है कि यदि हम अपने जीवन और आसपास के जगत् में खुशी चाहते हैं तो हमें अंदर भी खुशी का सृजन करना होगा। दूसरे लोग बस हमारा ही दर्पण हैं। यदि हम दूसरों से प्रेम करते हैं, हम उस प्रेम को अपने वास्तविक आईने में देख सकते हैं, जो हमें दिखने और समझ में आनेवाला बाहरी जगत् है और जो एक नए परिप्रेक्ष्य में प्रतिबिंबित होता है। बस एक सरल मंत्र का अनुशरण कीजिए, बाहरी जगत् में कार्यशील बलों को बदलने की अपेक्षा अपने आपको उनके अनुकूल कर लीजिए।

5

''हम वह हैं, जो हम सोचते हैं। हम जो कुछ भी हैं वह हमारे विचारों से प्रकट होता है। अपने विचारों से ही हम जगत् का निर्माण करते हैं।'' यह बात भगवान् बुद्ध ने करीब 2500 वर्ष पूर्व कही थी। हम उससे भी कहीं अधिक हैं। वास्तविक अर्थ में हम अपने आसपास के यथार्थ की रचना में सक्रिय भागीदार हैं। हम और कुछ नहीं बस कंपन करनेवाली ऊर्जा हैं। हम ब्रह्मांड से ऊर्जा का आदान-प्रदान करते हैं, और हम उन्हीं ऊर्जाओं के साथ तारतम्य बिठा लेते हैं, जिन्हें अपने जीवन में लाते हैं। समान लोग समान लोगों के प्रति आकर्षित होते हैं। अपने आपको नकारात्मक और उन्मादी ऊर्जा से घेर लीजिए तो आपका जगत् वैसा ही बन जाएगा (थॉमस डी क्रेग द्वारा पोस्ट किया गया 'ताओ ऑफ ए जेन वॉरियर')। हम सभी अपने विचारों, शब्दों और कर्मों की झलक हैं। हम जैसा चाहते हैं वैसे संसार की रचना कर लेते हैं। अपने बाहरी जगत् से किसी को निकालकर बाहर फेंकने का राज यह है कि हम उसे अपने आंतरिक जगत् से भी मिटा दें।

□

15

मनुष्य की अंतर्निहित प्रकृति

जीवन अप्रत्याशित है। केवल बदलाव ही स्थिर होता है¨ बदलाव का अहसास करना और स्वीकार करना ही किसी के भी जीवन की सबसे बड़ी अनुभूति होती है। यह जीवन की ही प्रतिध्वनि होती है।

1

हम आंतरिक अहम की वास्तविक प्रकृति को स्वीकार कर अपने आपसे जितना प्रेम करते हैं और अपने आपको स्वीकार करते हैं, उतना ही अधिक दूसरों से भी प्रेम करते हैं और उन्हें स्वीकार करते हैं। हम सभी जीवन के जिस अंतिम सार के लिए संघर्ष करते हैं वह प्रेम ही है। मनुष्य के चित्त में गहराई तक बैठी भय और असुरक्षा की भावना को केवल दूसरों के प्रति प्रेम और करुणा के प्रदर्शन से ही निष्क्रिय किया जा सकता है। केवल प्रेम के माध्यम से ही हम अपने जीवन को सार्थक और सोद्देश्य बना सकते हैं। हम सभी कभी-न-कभी उतार-चढ़ाव के दौर से गुजरते हैं, दर्द, दु:ख, खुशी और प्रसन्नता का अनुभव करते हैं, और उन उतार-चढ़ावों की चोटी पर पहुँचने के बीच ही, जीवन के सत्य को समझने के बाद, हम अपने प्रेम, चिंता और अनुकंपा के दायरे को आध्यात्मिक रूप से बढ़ा पाते हैं।

2

हम जब भी किसी व्यक्ति से मिलते हैं, हमें अच्छे या बुरे भावावेगों का

अनुभव होता है। यही कारण है कि अपने सामाजिक दायरे में, ऐसे लोग होते हैं, जिनसे हम सदा ही प्रेम भाव से मिलते हैं और बातचीत करते हैं, क्योंकि हमें उनसे सकारात्मक आवेग निकलने का अनुभव होता है। यह खिंचाव उस व्यक्ति द्वारा प्रदर्शित विचारों, भावनाओं और कार्यों का समग्र रूप होता है। ऐसा इस कारण होता है, क्योंकि प्रत्येक विचार, भावना और कर्म एक मौलिक ऊर्जा है, जिसमें एक अनोखी आवेगों की आवृत्ति होती है। किसी व्यक्ति के आंतरिक अहम में प्रेम, अनुकंपा और स्थिरता सकारात्मकता के दायरे को बढ़ाती है, जबकि क्रोध, घृणा, ईर्ष्या आदि हममें से हर एक में नकारात्मक आवेगों (नकारात्मकता) को प्रदर्शित करती है।

हममें से हर एक के अंदर कहीं गहराई में दो भेड़िए रहते हैं, एक प्रेम का भेड़िया और एक घृणा का भेड़िया। हममें से अधिकांश लोगों में और अधिकतर समय प्रेम का भेड़िया दूसरे भेड़िया से ताकतवर और बड़ा होता है। हालाँकि घृणा का भेड़िया प्रभुत्व कायम करने के लिए व्यग्र और खतरनाक होता है, और प्रेम के भेड़िया से अधिक ताकतवर बनने के अवसर ढूँढ़ता रहता है। उसे क्रोध, घृणा, अपमान, हमला और भय में आनंद आता है और इस प्रकार वह हमें नकारात्मक व्यवहार करने के लिए उकसाता रहता है, ताकि हम उसे वह पोषक आहार दे सकें, जो उसके जीवित रहने के लिए आवश्यक होता है। उसे मारने या भूखा रखने की गलती कभी मत कीजिएगा, क्योंकि इससे वह और ताकतवर (नकारात्मक भावनाओं के दमन से डिप्रेशन, चिंता और सभी प्रकार की नकारात्मकता बढ़ जाती है) हो जाएगा। यही वजह है कि प्रेम के भेड़िए को सदा ही पोषित करना और बढ़ावा देना बेहतर होता है। यह भेड़िया स्वयं दूसरे से निपट लेगा।

4

जब कभी कोई भयंकर हादसा या घटना होती है, या कुछ बहुत बड़ी गड़बड़ हो जाती है, तब हम अकसर वही पुराने मैं ही क्यों? वाले सिंड्रोम को अपना लेते हैं। पूरा विश्व जब जश्न मना रहा है, तब त्रासदी ने मेरे ही परिवार पर हमला क्यों बोल दिया? यही सवाल हमें परेशान करता है। भगवान् का भेदभावपूर्ण दिखनेवाला रवैया हमें अपनी किस्मत या पुराने कर्मों को कोसने के लिए मजबूर कर सकता है। यही भावना हमें एक कुचक्र में डाल सकती है, जिससे पहले से ही कमजोर हो चुकी इच्छाशक्ति और मनोबल परिस्थिति से निपटने में सक्षम नजर नहीं आता है! ऐसे समय में हमें जिस चीज की जरूरत होती है, वह है एक अहसास की। हमारे

जीवन में जो कुछ हो रहा है वह एक महान् उद्देश्य के तहत हो रहा है। न जाने क्यों लेकिन ऐसे ही हृदय को महान् बना देनेवाले चुनौतीपूर्ण अनुभवों के कारण ही हम सबसे अधिक सबक लेते हैं और दूसरों के प्रति करुणा और सहानुभूति पैदा करना सीख लेते हैं। अकसर इस प्रकार के भयंकर बदलाव और तनावपूर्ण समय में हमारी आध्यात्मिक प्रकृति एक नई यात्रा पर निकल पड़ने के लिए प्रेरित होती है, जिससे कि जीवन के प्रति हमारी सोच और धारणा में क्रांतिकारी परिवर्तन आता है। इससे भी महत्त्वपूर्ण बदलाव यह आता है कि हम अपने संबंधों में अधिक संवेदनशील और गर्मजोशी लाते हैं। हम दूसरों को दया, करुणा और सहानुभूति के साथ देखते हैं।

5

हमें अपनी आध्यात्मिक यात्रा में सबसे बड़ी बाधा का सामना बरसों से इकट्ठा होते चले आ रहे अज्ञान के कारण करना पड़ता है, जो हमारी अपने विषय में तथा आसपास की घटनाओं से जुड़ी वास्तविकता की धारणा और समझ को विकृत करने और बिगाड़ने का काम करता है। हमारी धारणाएँ, विचार और फैसले जितना अधिक कट्टर होंगे, हमारा दिमाग उतना ही बोझिल और बुरा होगा, तथा इस स्थिति से निकलना उतना ही कठिन हो जाएगा। फिर भी हम विलियम ब्लेक के स्पष्ट दृष्टिकोण में एक उम्मीद देख सकते हैं, जिन्होंने कहा था, ''यदि अनुभूति के रास्तों को साफ कर दिया जाए, तो मनुष्य को सबकुछ वैसा ही अनंत दिखेगा जैसा कि वास्तव में होता है।'' इस सफाई की प्रक्रिया से कुछ देरी हो सकती है, लेकिन हमें जगाने के लिए यह आवश्यक है। अधिकांश कट्टर धारणाएँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भय के कारण बनती हैं। सामान्य तौर पर हम गहराई तक बैठ चुकी धारणाओं पर सवाल उठाने से डरते हैं। हमें कट्टर धारणाओं और रुढ़िवादी व्यवहारों से छुटकारा पाने के लिए साहस और संपूर्ण खुलापन रखते हुए वास्तविकता को समझने की आवश्यकता है। स्पष्टता के साथ आध्यात्मिक यात्रा की एकदम नई शुरुआत होती है।

6

आध्यात्मिकता का सार अपने सच्चे अहम को समझना और अपने जीवन के अर्थ को जानना है। चूँकि इस संसार के सारे तत्त्वों और परिस्थितियों में निरंतर परिवर्तन आ रहा है, इस कारण हमारी पहचान की व्युत्पन्न भावना, यानी अहंकार (हमारी

वह तसवीर, जिसे हमने अपने पूरे जीवन में अपने आसपास बनाया है) हमेशा खतरे में रहता है। इस कारण हमारा अहंकार ही हमारे अधिकांश स्वार्थी व्यवहारों के लिए जिम्मेदार होता है। सबसे मौलिक स्तर पर हमारे अहंकार से जुड़ी तमाम प्रतिक्रिया का मूल भय में ही होता है। भय की छाप मनुष्य की चेतना पर गहरी होती है और वह हमारे अधिकांश विचारों और कार्यों को नियंत्रित करता है, तथा अहंकार अपने आपको बचाने के लिए सदैव सतर्क रहता है। अपने अहंकार को काबू में करने के लिए किसी भी व्यक्ति को सबसे पहले अपने भय के स्वरूप पर गौर करना चाहिए। यह सलाह ठीक ही दी जाती है कि हमें कभी भी अपने अहंकार को दबाने या कुचलने का प्रयास नहीं करना चाहिए, बल्कि भय पर ध्यान देना चाहिए, जो अहंकार का अभिन्न अंग होता है। भय को दूर करने के लिए हमारे अंदर उसका सीधा सामना करने और उससे निपटने का साहस होना चाहिए।

7

समाज का कोई भी वर्ग भय और चिंता के 'उन्मुक्त प्रवाह' से मुक्त नहीं होता। व्यवहार पर भय और प्रतिकूल परिस्थितियों की गहरी छाप होती है। मृत्यु, सत्ता छिन जाने, मर्यादा, ख्याति, जवानी, धन और विश्वास खो देने तथा अन्य संभावित नुकसानों का हमारे व्यवहार और सोचने के तरीके पर स्पष्ट प्रभाव दिखता है। यद्यपि हम अपने भय को यह कहकर सही ठहरा सकते हैं कि यह एक अनिवार्य भावना है, जो कुछ गलत होने से पहले हमें सतर्क करती है या किसी अनहोनी से निपटने के लिए तैयार कर देती है, लेकिन इस तर्क पर प्रश्न उठ सकते हैं, क्योंकि अकसर भय मिथ्या, काल्पनिक और पूर्वग्रह पर आधारित होता है। 'द डिवाइन मैट्रिक्स' में ग्रेग ब्रैडेन ने कहा है, ''हमारी संस्कृति में भय कई मुखौटे लगाए रहता है···हर दिन भय हमारे जीवन के किसी-न-किसी रूप में दिखाई देता है, जिसे हम पहचान नहीं पाते। लेकिन यह दिलचस्प बात है कि यह स्वरूप हमारा नहीं भी हो सकता है।'' ब्रिटिश दार्शनिक और इतिहासकार बरट्रेंड रसेल (1872-1970) ने बहुत अच्छी तरह इस तथ्य पर जोर दिया था, ''भय पर विजय से ही बुद्धिमानी का आरंभ होता है।''

8

हम सभी इच्छाओं के पीछे भागने के मोह में फँसे हैं। उनमें से अधिकांश इच्छाएँ हमारे जीवन को बेहतर बनाने की ओर लक्षित होती हैं, लेकिन कुछ हमारा

ही विनाश करनेवाली होती हैं तथा सुख और समृद्धि की तलाश में हमें दु:ख का भागी बना देती हैं। समस्या तब खड़ी होती है, जब हम इच्छाओं और उनके परिणामों से जुड़ जाते हैं। इच्छा और लगाव दोनों एक-दूसरे से संबंधित हैं और दोनों ही अहंकार की अभिव्यक्ति हैं। हम अपने आपको इच्छाओं के जाल में फँसा लेते हैं, और हम अपने सबसे घटिया उमंगों से निकलना चाहते हैं, तो रास्ता केवल एक उच्चतर उद्देश्य से होकर जाता है, जिससे सबका भला हो सकता है (वॉर ऑफ द वर्ल्ड व्यूज में दीपक चोपड़ा और लियोनार्ड Deepak Chopra and Leonard Mlodinow, *War of the World views*)। महज इस बात का अहसास होने से कि अहंकार और उसकी माँग/इच्छाएँ झूठी तथा कभी समाप्त नहीं होनेवाली हैं, और वही हमारे जीवन में दु:ख का कारण हैं, हमारी अनुभूति बदल सकती है और हमें आंतरिक सुख का रास्ता दिख सकता है।

9

बिना शर्त प्रेम और करुणा ही हमारे जीवन की सारी चुनौतियों का जवाब है। हम इस संसार में सरल और परस्पर प्रेम के सिद्धांत को सीखने के लिए आए हैं। आप दूसरों से जितना ही प्रेम करेंगे, जीवन में उतने अधिक प्रेम का अनुभव होगा। प्रेम दूसरों को पूरे मन से स्वीकार करना सिखाता है, विशेषकर उनकी धारणाओं की अपेक्षा उनके आंतरिक सत्व को। दूसरों को आलोचनात्मक हुए बिना स्वीकार करना सिखाता है, क्योंकि हम सभी अनोखे हैं और इस संसार में प्रेम के विषय में ही सीखने आए हैं। हमें अपना जीवन प्रेम बाँटने के लिए तथा दूसरों का खयाल रखते हुए बिताना चाहिए, यह शिक्षा हमें विज्ञान, धर्म और आध्यात्म से मिलती है।

10

जीवन का तात्कालिक उद्देश्य खुश, संतुष्ट और आहलादित रहना है। हमारे जीवन के मूल में ही संतुष्ट होने की भावना छिपी है। हम दूसरों का जितना खयाल रखेंगे और उनके प्रति करुणा दिखाएँगे, उतनी ही संतुष्टि, खुशी और अच्छाई का हमें स्वयं अहसास होगा। दूसरों के प्रति प्रेमपूर्ण और गर्मजोशी से भरा व्यवहार हमारे मन को भी शांति देता है। यही नहीं, इस प्रकार की भावना से यदि हमारे मन में कोई भय, चिंता और असुरक्षा है, जो उससे भी निजात दिलाने की आंतरिक शक्ति देता है, जिससे हम अपने जीवन की समस्याओं का सामना कर पाते हैं।

11

हमारा जीवन इससे तय नहीं होता कि हमारे साथ क्या होता है, बल्कि जो होता है उस पर हम किस प्रकार प्रतिक्रिया करते हैं। दूसरे शब्दों में, जीवन में हमें क्या मिलता है उससे फर्क नहीं पड़ता, बल्कि हम जीवन को किस मंशा से गले लगाते हैं। एक सकारात्मक रवैया सकारात्मक विचारों और घटनाओं के चेन रिएक्शन की शुरुआत करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सकारात्मक विचारोंवाले व्यक्ति आराम से लंबा, सुखी, स्वस्थ और अधिक सफल जीवन बिताते हैं···और ऐसा जीवन कौन नहीं चाहता है!! इस बात का अहसास कीजिए कि जीवन यह नहीं कि आपके साथ क्या होता है, बल्कि यह अहम है कि जो होता है उस पर आपकी प्रतिक्रिया कैसी होती है। संभवत: यह सबसे अच्छा उपाय है, जो हम अपने भावनात्मक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए कर सकते हैं! सकारात्मक रवैया एक चिनगारी के समान होता है, जो हमारे जीवन में असाधारण परिणाम दे सकता है।

12

नेट ऑफ ज्वेल्स में मशहूर आध्यात्मिक गुरु रमेश एस. बालेसकर ने कहा है कि आत्मबोध या जीवन में ज्ञान की प्राप्ति का सीधा मार्ग है आत्म-मंथन। मन को बाहरी दुनिया में भटकने से रोकने का एकमात्र रास्ता उसे अंदर की ओर मोड़ देना है। शुरुआत में आत्म-मंथन में मन के अंदर बाहर की ओर भागने की प्रवृत्ति पर काबू पाने में कड़ी मेहनत करनी पड़ती है, क्योंकि वह किसी वस्तु के प्रति जागरूक होने के लिए अंदर झाँकने की बजाय बाहर की ओर देखता है। हालाँकि अनुभव के साथ-साथ परिश्रम कम होता जाता है, क्योंकि स्वयं की ओर ध्यान लगाने से मन शांत होता जाता है। हम जब अंदर झाँकते हैं, तब तन-मन और बाकी संसार की गतिविधियाँ उसी प्रकार जारी रहती हैं, लेकिन वे हमें प्रभावित नहीं करती हैं। हम जितना समय अंदर की ओर बिताते हैं, हमें अपनी वास्तविक प्रकृति का उतना ही अहसास होता है और हमें अच्छा लगने लगता है।

13

हम जैसे-जैसे बड़े होते जाते हैं, अपने और अपने आसपास की दुनिया के विषय में विचार और धारणाओं की परत इकट्ठा करते जाते हैं। यह स्तरीकरण विभिन्न स्रोतों से सीखी और अपनाई गई बातों से होता है! हालाँकि उनमें से अधिकांश स्तर सांस्कृतिक और सामाजिक परिवेश के प्रभावों से विचारों और धारणाओं में पैदा हुई रूढ़िवादिता के कारण ठोस रूप ले लेते हैं। यह गहराई तक बैठ चुकी रूढ़िवादिता आत्म-बोध और आध्यात्मिक विकास की ओर हमारी प्रगति

को अवरुद्ध कर देती है और हमें संसार की सच्ची वास्तविकता से दूर ले जाती है। गंभीर मामलों में ऐसी रूढ़िवादिता पतन की ओर ले जाती है और व्यक्ति अपना विनाश कर सकता है। सीमित करनेवाली धारणाओं के प्रति जागरूक होने के बाद ही हम नए विचारों और संभावनाओं को अपनाते हैं। रूढ़िवादिता के ठोस स्तरों को पिघलाने के लिए सूझबूझ की आवश्यकता होती है, जिससे कि हम अपने आसपास की घटना की सच्चाई को समझ पाते हैं।

14

स्वयं आप ही ऐसे व्यक्ति हैं, जिस पर आपकी अपनी खुशी पूर्णतया निर्भर करती है। किसी भी परिस्थिति और प्रत्येक अवसर पर प्रसन्न बने रहने का विकल्प आप ही चुनते हैं। यदि आपकी प्रसन्नता दूसरे लोगों पर निर्भर होती है, विशेषकर जो आपके करीब हैं, तो निश्चित ही आप अपने आपको दु:ख की स्थिति में पाएँगे। इसलिए यदि आप खुश रहना चाहते हैं, तो बस अपने आप पर भरोसा रखिए, और अपने अंदर खुशी और प्रसन्नता को बंद कर लीजिए। यह भी याद रखिए कि आपको तुच्छ और छोटे-छोटे विषयों में अपने आपको न उलझाना है और न ही उन पर अपनी ऊर्जा नष्ट करनी है। हमें चीजों को सही परिप्रेक्ष्य में देखना सीख लेना चाहिए। अन्यथा जीवन निरुद्देश्य हो जाएगा और वह उपहार व्यर्थ हो जाएगा, जिसे ईश्वर ने हमें विशेष रूप से दिया है।

15

शांति और प्रसन्नता के लिए हमें चीजों को सही परिप्रेक्ष्य में देखना और विश्लेषण करना चाहिए। इसका अर्थ हुआ कि अपने मन को विशाल तसवीर पर स्थिर कीजिए, वर्तमान समस्याओं को एक दूसरी दृष्टि से देखिए, जैसे आप किसी कलाकृति को देख रहे हों। इस बात पर विश्वास कीजिए कि जो भी विषय है वह चिरस्थायी नहीं है। वह सारी परिस्थितियाँ, घटनाएँ और उनसे जुड़ी भावनाएँ जिनके कारण अप्रसन्नता हुई हैं, उनका बदलना तय है। शाश्वतता के लिहाज से, हम जितना तर्क देते हैं, या उन कारणों को गिनाते हैं जिनके चलते दु:ख हुआ है, उनसे कोई फर्क नहीं पड़ता है। आपका चाहे दिल टूट गया हो या आप बस दु:खी हैं, अपने आप से यह अवश्य पूछिए: यदि हम इसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में या लंबी अवधि में देखें तो क्या इस भावना या घटना का कोई अर्थ रह जाता है?

16

जीवन में सबसे बड़ी और सबसे कठिन अनुभूति यह होती है कि हम जीव संसार में जीते और बढ़ते हैं। उसकी रचना (या दार्शनिक रूप से कहें तो निर्माण) के लिए पूर्णतया जिम्मेदार होते हैं। हम उन चुनावों का परिणाम हैं, जिनका निर्णय हमने सर्वोत्तम मंशा और अपने पास उपलब्ध संसाधनों से लिया है। हम उन भावनाओं को चुनते हैं, जिनका अहसास करते हैं और हम यह भी तय करते हैं कि हम कैसे प्रतिक्रिया देंगे और काररवाई करेंगे। इसी प्रकार हम अपनी नियति का निर्माण भी करते हैं। यह ठीक ही कहा गया है कि हमारे पास अपनी इच्छा के अनुसार चीजों को करने का केवल एक ही जीवन और एक ही मौका होता है। संक्षेप में कहें तो हम ही अपने आस-पास की वास्तविकता के जाल को बुनते हैं, उसके आकार और बुनावट को तय करते हैं।

17

यहाँ यह देखना दिलचस्प होगा कि मरते व्यक्ति का सबसे आम खेद यह होता है, ''काश! मैं अपने आपको और खुश रख पाता।'' (जैसा कि एक नर्स ब्रॉनी वेयर के सामने मृत्यु शैया पर सैकड़ों मरीजों ने कबूल किया)। हममें से अधिकांश लोग अपनी मृत्यु तक यह नहीं समझ पाते कि खुश रहना दरअसल एक चुनाव है। हम सामान्य तौर पर पुराने तौर-तरीकों और आदतों (ठोस रूढ़िवादिता) में उलझे रहते हैं। हमारे जीवन में तथाकथित आराम की इच्छा सर्वत्र रहती है। बदलाव के डर से हम अपने आरामदेह दायरे में छिप जाते हैं और इस बात को झुठलाते हैं कि हम खुश और संतुष्ट हैं, लेकिन अंदर-ही-अंदर हँसने के लिए और पागलों की तरह खुश होने और जीव का लुप्फ उठाने के लिए मचलते रहते हैं!

18

एक पुरानी तिब्बती कहावत है, ''आप जब मुसकराते हैं, आधी मुस्कान आपके चेहरे पर होती है और आधी दूसरों के।'' यही कारण है कि हम सभी को हँसते-मुसकराते चेहरे पसंद हैं। मदर टेरेसा की एक महान् उक्ति है, ''शांति की शुरुआत एक मुस्कान से होती है।'' कुछ न्यूरोसाइंटिस्ट कहते हैं कि मस्तिष्क में सकारात्मक भावनाओं के लिए एक प्रणाली होती है, जो सक्रियता के लिए तैयार रहती है, साथ ही लोगों को नकारात्मक की अपेक्षा अधिकतर जोश में रखती है, और उन्हें जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण देती है (सोशल इंटेलिजेंस, डैनियल गोलमैन)। यही कारण है कि हमारा मन प्रसन्न चेहरों को पसंद करता है। इस

प्रकार के साक्ष्य हैं कि जिन चेहरों पर खुशी की झलक होती है उन्हें अन्य चेहरों के मुकाबले अधिक अच्छी तरह पहचाना जाता है। मनोवैज्ञानिक इस तथ्य को 'हैप्पी फेस इफेक्ट' कहते हैं। इसलिए जीवन में सदा मुसकराते रहिए, क्योंकि आप दूसरों के लिए भी मुसकराते हैं।

19

सामान्य तौर पर हम या तो अपना समय अतीत की दुर्घटनाओं/घटनाओं के विषय में सोचकर गँवाते हैं, जो अकसर नकारात्मक होती हैं, या फिर अपने भविष्य को लेकर चिंतित और असुरक्षित रहते हैं। हमारा संसार चाहे कितना ही खुशनुमा और आनंददायक क्यों न हो, लेकिन किसी भी पल कोई भी अनहोनी हो सकती है। यह संसार ऐसा ही है। इस अनिश्चितता के बावजूद हम शायद ही कभी उस पल का आनंद उठाते हैं, जो हमारे पास होता है। इस वजह से हम उन अनमोल क्षणों को गँवा देते हैं। वर्तमान में जीना एक चमत्कार जैसा होता है। हरी-भरी धरती पर वर्तमान पल में चलना, उस शांति और सुंदरता की सराहना करना भी चमत्कार है, जो उस पल में प्रत्यक्ष होता है। इसके बावजूद हम इस प्रकार जीते हैं जैसे हमारी मृत्यु कभी होगी ही नहीं, और फिर अंत में हमारी मौत हो जाती है, लगता है जैसे हमने अपना जीवन जीया ही नहीं (टी.एन. हान)।

20

मानो या न मानो, हममें से कई लोग दोषारोपण करने में माहिर हो जाते हैं। जब भी कुछ गड़बड़ हो जाती है या हमारे साथ कुछ बुरा होता है, हमारी रक्षात्मक प्रणाली कार्य करने लगती है। अपने कर्मों के लिए शायद ही कभी हम पूरी जिम्मेदारी लेते हैं, और इस प्रकार अपनी गलतियों और कमियों को सही ठहराने का हमारा व्यर्थ प्रयास जारी रहता है!

21

जीवन वैसा नहीं जैसा हम सामान्य तौर पर इसके विषय में सोचते हैं। हम पहले अपनी कहानी का निर्माण करते हैं और फिर उसे इस प्रकार पुख्ता करते हैं कि हमारा मैं ही सबकुछ नियंत्रित करता है, चाहे कार्य की बात हो या संबंधों की। हम अपने जीवन की घटनाओं का अनुमान लगाने और उन पर नियंत्रण पाने का जी-तोड़ प्रयास करते हैं। यह तथ्य कि जीवन पर नियंत्रण असंभव है, एक उत्तरोत्तर बढ़ते संकट का रूप ले लेता है ('डूइंग नथिंग', स्टीवन हैरिसन)। सत्य यह है कि

केवल परिवर्तन ही निरंतर होता है, इसलिए समय के साथ बदलना होगा। सबकुछ समय के साथ बदलता है, जिसमें संबंध भी शामिल हैं। जीवन में यदि कोई सबसे बड़ा अहसास है तो वह यही है कि हम स्वीकार करें कि जीवन में परिवर्तन निश्चित है। यही जीवन की प्रतिध्वनि है।

22

हमारे जीवन की गुणवत्ता उन बीजों पर निर्भर करती है, जो हमारे मन की गहराई में बोए गए हैं। कुछ बीज हमें अपने पूर्वजों से मिलते हैं (जीन के रूप में) और कुछ दूसरों के द्वारा बोए जाते हैं, जैसे हमारे माता-पिता और शिक्षकों के द्वारा हमारे बचपन में, जबकि कुछ बीज हम स्वयं बढ़ती उम्र के साथ बोते हैं। हमारा जीवन इस बात पर निर्भर करता है कि हम किस प्रकार के फैसले करते हैं और बढ़ने के साथ-साथ उन बीजों को कितना पानी देते हैं। यदि हम प्रेम और करुणा के बीजों को पानी देते हैं, तो हम एक आध्यात्मिक पथ पर बढ़ते हैं, जिसमें हम आंतरिक शांति का आनंद उठाते हैं। दूसरी तरफ, यदि हम घृणा और क्रोध के बीजों को पानी देने का फैसला करते हैं, तो हमें तनावपूर्ण पलों की फसल काटनी पड़ती है, जो अंततः हमें दुःख और दर्द देते हैं।

23

हमारा स्वरूप निरंतर रूप से उन लोगों द्वारा तय होता है, जो हमारे आसपास होते हैं। यहाँ तक कि अपने जीवन के प्रत्येक अनुभव और घटना के बाद हम जिस कहानी का निर्माण करते हैं और उसमें नए तथ्य जोड़ते हैं वह भी कुल मिलाकर उन बातों पर आधारित होता है, जो दूसरे हमें बताते हैं या हमारे बारे में कहते हैं। इस कारण हमारा अहम अपने ही मन का एक परिणाम है, जो असल में हमारे और दूसरों के मन के मिलकर कार्य करने से बना होता है (ब्रूस हुड, 'द सेल्फ इल्यूजन')। फिर भी, हम बड़ी सफाई से अपनी कहानी इस प्रकार संपादित और काट-छाँटकर तोड़ते-मरोड़ते जाते हैं कि विजेता हम ही होते हैं (या विफल रहे जो परिस्थितियों या अन्य लोगों के शिकार)। ऐसा इस कारण है, क्योंकि हमारा घोर स्वार्थी मन हमेशा अपनी ही कहानी गढ़ता-सुधारता रहता है और आंतरिक अहम के विषय में नहीं सोचता जो सारा सत्य जानता है।

24

हम तभी कुछ पाते हैं, जब हम उसके लिए तैयार हो जाते हैं, अन्यथा हम

चाहे कितना ही हाथ-पैर क्यों न मार लें, परिस्थिति हमारे वश में नहीं आती। यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण अनुभूति है। कोई भी अच्छी या बुरी खबरों को आने से न रोक सकता है, न ही उन्हें टाल सकता है। वांछित घटनाओं को तेजी से लाने की जल्दबाजी में व्यग्रता और चिंता केवल नुकसान ही पहुँचा सकती है। हम वर्तमान के विषय में जल्दबाजी करते हैं, अभी को ठीक करने की चिंता करते हैं या भविष्य के संकट के लिए तैयारी करते हैं, लेकिन जो होना है वह अपने समय पर ही होगा। जैसा कि डॉ. ब्रायन वाइस ने 'सेम सोल, मेनी बॉडीज' में ठीक ही कहा है, ''जन्म लेने से पहले ही, हम आनेवाले जीवन की छटा को देख लेते हैं, और जब जन्म लेते हैं तो उसे भुला देते हैं।''

25

यदि हम 'अच्छी' तरह नहीं रहते और अपने जीवन की कहानी के लेखक नहीं बनते, तो जीवन संघर्षों से भर जाता है। यदि हम बदलावों का विरोध करते हैं और भौतिक सुखों और बनावटी संबंधों से चिपके रहते हैं, तो समस्याओं का उत्पन्न होना निश्चित है। हम जब दोहरा जीवन जीते हैं, तो स्वाभाविक रूप से विरोधाभास पैदा होंगे। किसी-न-किसी प्रकार से हम अच्छे और बुरे, दर्द और खुशी, अँधेरे और उजाले के विरोधाभासों के प्रति आकर्षित हो ही जाते हैं। अद्वैतवाद की शिक्षा में बताया जाता है कि इस जगत् का कोई अर्थ नहीं है। जन्म, मरण, दुःख, सुख—सबकुछ अवैयक्तिक होता है। हमारा मस्तिष्क समग्रता को छिन्न-भिन्न करता है और यही भ्रामक अलगाव फिर सीमा रेखा खींच देता है, जिसमें युद्ध की रेखा बनने की क्षमता हमेशा ही होती है। हमें इस बात का अहसास होना चाहिए कि सारे ध्रुवीय विपरीतार्थक विषय या द्वैधता और कुछ नहीं बल्कि महज मन की धारणा हैं, जबकि वास्तविकता समग्रता में ही होती है। यह संसार असल में एक अंतहीन और गतिशील इकाई है, एक अकेला जीव जो सदैव परिवर्तनशील रहता है (जॉन स्नेलिंग, 'द इलिमेंट्स ऑफ बुद्धिज्म, 1990')।

26

अधिकांशत: हमारा जीवन मैं और 'मेरा' के आस-पास घूमता रहता है, और ऐसा लगता है, जैसे उसके आगे कुछ भी नहीं है। हम 'मैं' और 'मेरा' के मामलों में इस प्रकार खोए रहते हैं कि 'मैं', 'मेरा' परिवार, और अपनों से आगे कुछ सोच ही नहीं पाते। हमें यह बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि वस्तुओं और संबंधों के

बीच सारे विभेद बस एक धारणा है, और एक प्रकार से भ्रम है। वी वू वी ने इस परिस्थिति की व्याख्या सारगर्भित रूप से की है : ''हम अप्रसन्न क्यों रहते हैं? क्योंकि आप जो सोचते हैं और जो करते हैं, उसका 99.9 प्रतिशत अपने लिए सोचते और करते हैं। और ऐसा करनेवाला कोई एक नहीं होता।'' एक बार हमारे मन ने मैं की धारणा को बना लिया, तो फिर यही संदर्भ का केंद्रबिंदु बन जाता है। हम इससे जुड़े रहते हैं और इसी से अपनी पहचान बनाते हैं। जॉन स्नेलिंग ने कहा है, ''यद्यपि हम अपने अहम की अकड़ में फँसे होने की वजह से इसे देख नहीं पाते, लेकिन हमारे अंदर कुछ है जो विशाल और गहरा है : हमारा एक अलग ही रूप।''

27

यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि आप दूसरों से प्रेम नहीं कर सकते, जब तक कि आप अपने आप से प्रेम नहीं करते। प्रेम ही हमारा वास्तविक स्वभाव है। प्रेम ही ऐसा है, जिसे हम तुरंत ढूँढ़ लेते हैं, न कि कुछ ऐसा जिसे हम करते हैं या जो हमारे पास होता है। फिर भी हमारी पहचान जब मैं से होती है और हमें लगता है कि अपने जीवन की घटनाओं पर हमारा पूर्ण या अच्छा नियंत्रण है, तब जैसे ही कोई बहुत बड़ी गड़बड़ होती है, तो हम अपने आपको, और/या दूसरों को दोषी ठहराते हैं। कोई व्यक्ति जब गलत फैसलों या उनके परिणाम के लिए अपने आपको जिम्मेदार मानता है तो उसका अपने आप से असंतुष्ट रहना या खफा रहना भी सामान्य सी बात होती है। ऐसा होने की वजह से ही अपने आप से प्रेम करना कठिन हो जाता है। आत्म-प्रेम तभी संभव है, जब व्यक्ति जीवन की घटनाओं को जैसे वह घटती है उसके अनुसार ही स्वीकार कर लेता है। हमें जब अपने वास्तविक स्वभाव का पता चल जाता है, तब हम अपने अंदर की अच्छाई और दयालुता पर भरोसा करने लगते हैं। बिना शर्त अपने सारे अनुभवों को स्वीकार करने पर ही हम पाते हैं कि अपने आपको, और/या दूसरों को दोषी ठहराने की प्रवृत्ति खत्म होने लगती है और आत्म प्रेम बढ़ता और फलता-फूलता जाता है!

28

हममें से हर एक की सबसे बड़ी इच्छा जीवन में खुश रहना होता है। खुशी की तलाश में हम बाहरी जगत् की ओर देखते हैं और भौतिक सुख-सुविधा के साधन जुटाना, मन पसंद दोस्त बनाना, सगे-संबंधियों से प्रेम करना, और सामाजिक प्रतिष्ठा पाने में जुट जाते हैं, जो हमें लगता है कि एक संतुष्ट जीवन के लिए

आवश्यक है। हालाँकि अकसर यह अहसास बहुत देरी से होता है कि वास्तविक और चिरस्थायी खुशी बाहरी जगत् पर कतई निर्भर नहीं होती है, विशेषकर भौतिक संसाधनों पर, यद्यपि अस्थायी भोग और विलास के लिए वे अनिवार्य हो सकते हैं। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि हमारी सामूहिक खुशी के लिए भौतिक सफलता की बजाय संबंध अधिक अनिवार्य हैं। हालाँकि मुझे लगता है कि आंतरिक शांति और प्रसन्नता का आपस में गहरा संबंध होता है, और शांति तभी आती है जब हम अपने जीवन में जो कुछ हैं उसका स्वागत करते हैं। बदलाव के विरोध और अपनी परिस्थितियों तथा संबंधों पर नियंत्रण स्थापित करने के प्रयास अकसर नुकसानदेह साबित होते हैं। हमें अपने जीवन की परिस्थितियों और परिवर्तनों को पूरे मन से स्वीकार करना चाहिए, विशेष रूप से जब बात करीबी संबंधों की होती है। यह खुशी का भरोसेमंद मंत्र है।

29

बुद्ध ने कहा था कि वह व्यक्ति जो अपने आप से प्रेम करता है कभी दूसरों को कष्ट नहीं पहुँचाएगा। इस कारण, दूसरों के प्रति सहानुभूति से पहले व्यक्ति अपने लिए सहानुभूति दिखाता है। सहानुभूति के माध्यम से ही हम जान पाते हैं कि दूसरे लोग कष्ट में हैं। वे दु:ख और दर्द में हैं। हमें इस चिरस्थायी प्रश्न का भी उत्तर मिल जाता है कि मैं ही क्यों? क्यों भगवान् ने ही मुझे उस दु:ख-दर्द के लिए चुना, जिससे मैं गुजर रहा हूँ। अध्ययनों के माध्यम से न्यूरोसाइंटिस्ट भी यह दिखा चुके हैं कि जो लोग सहानुभूति दिखाते हैं उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है और वे अंदर से प्रसन्न रहते हैं (इसका अर्थ यह नहीं है कि बीमार लोग सहानुभूति नहीं दिखाते)। वे भी अपने कष्ट को अच्छी तरह कम कर सकते हैं। वह जब तक अपनी सहानुभूति के दायरे को नहीं बढ़ाता, जिसमें सारे जीव शामिल नहीं होते, तब तक मनुष्य को शांति नहीं मिलेगी (अलबर्ट स्विट्जर)।

30

प्रेम सर्वत्र है—यह अंतहीन है। सुंदरता सर्वत्र है—यह असीम है। सारे पलों को खुशियों से भरा जा सकता है। संगीत, खेल-कूद, मनोरंजन की गतिविधियाँ, और परिवार तथा नजदीकी दोस्त—यहाँ तक कि नए परिचित भी—स्थिरता और शांति के विशाल भंडार के समान हो सकते हैं। हालाँकि हमें अपने दिल को खोलने की आवश्यकता है, क्योंकि सारा प्रेम, सुंदरता और शांति वहीं रहती है।

दु:ख की बात है कि हममें से अधिकांश लोग इस खुशी को बाहरी जगत् में ढूँढ़ते हैं। हममें से बहुत अधिक लोग रूढ़िवादी और अकसर एक या दूसरी बाहरी जगत् की इच्छाओं के पीछे भागकर संतुष्टि और खुशी की तलाश करते हैं। इसी मनोवृत्ति ने हमें बाहरी दिखावे और छल में इतना उलझा दिया है कि हम अपने हृदय और अंतर्मन से अलग हो गए हैं, जहाँ सुंदरता और प्रेम बसता है। अपने आपको बाहर से नहीं, बल्कि अंदर से बदलने का एक प्रयास कीजिए। प्रेम और सुंदरता ही एकमात्र वास्तविकता है। हम यहाँ यह सीखने के लिए आए हैं कि अपने आप से और दूसरे से कैसे प्रेम करें, तथा अपने और दूसरों को बिना किसी भेदभाव के पूरी तरह स्वीकार करें।

31

हममें से कितने लोग हैं, जो जीवन को पूर्णतया उस रूप में स्वीकार करते हैं जैसा कि वह हमारे सामने आता है? हममें से अधिकांश लोग उससे संतुष्ट नहीं रहते जो हमारे पास है और सुरक्षा का अहसास करने के लिए और अधिक भौतिक साधनों की इच्छा रखते हैं। हम अपने जीवन पर और अधिक नियंत्रण चाहते हैं। हालाँकि जीवन ऐसा नहीं जैसा 'ए नेट ऑफ ज्वेल्स' में रमेश बालसेकर ने कहा है, ''जीवन समस्याएँ पेश करती है, क्योंकि हम जीवन से लड़ते हैं। हमारे पास जो है हम उसे स्वीकार नहीं करते हैं। हम जो हैं उसकी बजाय कुछ और बनना चाहते हैं। हम उससे अधिक चाहते हैं, जो अभी हमारे पास है।'' ऐसा तब होता है जब हम अपनी पहचान मैं से बना लेते हैं। सारे दु:खों, असंतोष और संघर्षों का मूल कारण मैं पर अत्यधिक बल देना है। यह कुचक्र तभी समाप्त होता है, जब हम अपने वास्तविक स्वभाव को पहचान लेते हैं। जागरूकता ही हमारी वास्तविक प्रकृति है। यह ठीक ही कहा गया है कि मैं एक अलग व्यक्ति के रूप में नहीं रहता—मैं, बस वह है, जो एक व्यक्ति में जागरूकता के तौर पर मैं के रूप में उत्पन्न होता है। इसे प्रत्यक्ष रूप से देखना ही सारे दु:खों से मुक्ति दिलानेवाला होता है।

32

दूसरों के लिए प्रेम और सहानुभूति की भावना रखने से अधिक महत्त्वपूर्ण कुछ नहीं होता। किसी मंदिर, मसजिद या गुरुद्वारा जाने, या चर्च की सेवाओं में शामिल होने तथा प्रार्थना करने से भी यह कहीं अधिक सुकून देता है। भगवान्

कहीं और नहीं, बल्कि हमारे ही हृदय और मन में रहते हैं। करुणा और सहानुभूति के सरल सूत्र की तुलना में कोई भी दर्शन या खोज महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकती है। प्रसन्नता और शांति की कुंजी हमारे मन में ही है और हमें उस कुंजी की मदद से दूसरों के प्रति प्रेम और सहानुभूति के दरवाजों को खोल देना चाहिए। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे दूसरे प्रतीत होनेवाले कौन हैं या उन्होंने क्या किया है, अंतत: हम सभी को यही करने की आवश्यकता पड़ती है।

33

अकसर हम इच्छाओं के पीछे निरंतर भागने में लगे रहते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि इनमें से कई इच्छाओं के पीछे जीवन को बेहतर बनाने की अच्छी मंशा होती है। फिर भी उनमें से कुछ इच्छाएँ अपने आपको ही तबाह करनेवाली होती हैं और उनके पीछे भागने से हम दु:ख भोगते हैं। चूँकि इच्छाओं के साथ-साथ वांछित परिणाम/नतीजे प्राप्त न होने का भय होता है, इस कारण दु:ख होना निश्चित है। किसी इच्छा को रखना तब तक नुकसानदेह नहीं होता, जब तक कि हम उसके संभावित परिणाम/नतीजे से जुड़ नहीं जाते। किंतु अकसर यह संभव नहीं होता और हम इच्छा-भय के दोहरे जाल में फँस जाते हैं। महज यह अहसास की इच्छाएँ कभी खत्म न होनेवाली, भ्रामक प्रकृति की होती हैं, और सारे दु:खों का कारण हैं, जैसी शिक्षा बुद्ध दिया करते थे, तो वह भय-इच्छा की द्वैधता से मुक्ति पाने की ओर पहला कदम हो सकता है। यदि हम अपनी इच्छाओं को कम कर लें, तो हम खुशी को बढ़ाना सीख सकते हैं, चाहे बाहरी जगत् में कुछ भी क्यों न हो रहा हो।

34

हम अपने जीवन में समस्याओं को उनके विषय में लगातार विचार करने के कारण बढ़ा लेते हैं। आखिर हममें से कई लोग क्यों उन्हीं पुरानी अतीत की नकारात्मक/दु:ख भरे अनुभवों की कहानियाँ दुहराते रहते हैं? ऐसा करने से हम एक कुचक्र में प्रवेश कर जाते हैं, क्योंकि हम जितनी बार उन अनुभवों को याद करते हैं, उतनी बार तंत्रिका संपर्क (नेटवर्क) पुष्ट और सशक्त हो जाता है। इसके कारण हमारे अंदर उन घटनाओं को बार-बार याद करने की प्रवृत्ति बढ़ती चली जाती है। इससे हम उन दु:खी कहानियों को दुहराने के शिकार हो जाते हैं। यही जीवन का तरीका हो जाता है, क्योंकि हम उस आदत की जड़ें जमा लेने के प्रति

जागरूक नहीं होते और इस कारण समस्या को सुलझाने का प्रयास नहीं करते हैं। बाहरी जगत् में हमें किसी प्रकार का समाधान नहीं मिल सकता है। और हम इन ऊर्जाओं को जितना दबाने का प्रयास करते हैं, वे उतना ही मुखर रूप से सामने (चेतन मन में) आती हैं। अपने अंदर झाँकिए, उन सभी जख्मों से दूर और तमाम धारणाओं से पूर्व की स्थिति में, और आप पाएँगे कि शांति यहीं, और आपके सामने है (गेल ब्रेनर द्वारा पोस्ट किया गया, 'यू आर ऑलरेडी होल')। इस प्रकार की घटनाओं की पुनरावृत्ति से बचने का रास्ता जागरूकता के साथ-साथ सूझबूझ और भटकाव पर ध्यान देने से ही निकलता है।

35

हम सभी अकसर सोच-विचार में इतने मग्न रहते हैं कि यही भूल जाते हैं कि मन ही सारे सोच-विचार करता है। हमारी पहचान पूरी तरह से हमारे मन से होती है। हम विचारों के निर्बाध प्रवाह में फँस जाते हैं, जो लगभग बार-बार प्रकट होने और निरर्थक पूरी तरह से नकारात्मक और इनसे भी कहीं अधिक अवास्तविक होती हैं। हम न तो सतर्क रहते हैं न ही ध्यान देते हैं, और इस कारण, हाथ आए अवसर को गँवा देते हैं। अतीत जा चुका है, भविष्य कल्पना या पूर्वाभास है, और वर्तमान को हम अचेतन विचारों से गँवा देते हैं। हम वर्तमान पल में तभी लौटते हैं, जब हम सतर्क और सचेत रहते हैं। उन पलों में हम सोचते रहते हैं। तब अपने मन पर गौर कीजिएगा। अपने मन को ध्यान से देखिएगा। बहुत ध्यान से देखिएगा! विचारों के स्तर से ठीक नीचे एक चेतना की एक अविभक्त धारा होती है। यह बिना विचारों का एक दायरा होता है, जिसमें न कोई अतीत होता है, न भविष्य, बस एक शाश्वत शांति होती है।

□

16

हम सभी का आध्यात्मिक विकास निश्चित है

हमारे जीवन का उद्देश्य जीवन के इस सफर को अकसर ऊँचे-नीचे और पुराने कठोर रास्तों पर आगे बढ़ाते हुए, वर्तमान स्तर से एक उच्चतर स्तर पर ले जाना है।

1

हम सभी की मृत्यु निश्चित है। यह केवल परमात्मा का एकाधिकार है कि वह हम में से प्रत्येक को कितनी बार अगली सुबह देखने की अनुमति देता है। फिर भी हममें से अधिकांश लोग इस प्रकार व्यवहार करते हैं जैसे हम सदा ही जीवित रहेंगे। तो भी हम इस जीवन का आनंद क्यों नहीं उठाते, क्यों दूसरों को प्रसन्न नहीं करते, उनके प्रति प्रेम और करुणा के भाव प्रदर्शित नहीं करते, और इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण यह कि जीवन का एक उद्देश्य क्यों नहीं तय करते? जीवन के अर्थ की तलाश भी किसी के जीवन का उद्देश्य हो सकता है। और चूँकि प्रेम की प्रकृति अपने आप में ही एकांतिक होने की अपेक्षा समावेश है, तो फिर क्यों न प्रेम के आंतरिक दायरे में हम सबको शामिल करें, जहाँ वर्तमान में केवल मैं, हमारे मित्र, और हमारे परिजन रह रहे हैं? दूसरों के प्रति अच्छा व्यवहार करें और सरल किंतु जीवन की प्रचुर खुशियों का आनंद उठाएँ! फिर देखें उन संबंधों में से प्रत्येक में उस अनोखे खजाने को, जिसे भगवान् इतनी सुंदरता से अभिव्यक्त करते हैं।

2

जीवन एक पेंडुलम के समान है। एक छोर पर हमें लगता है कि जीवन मूल रूप से अच्छा है, लेकिन पेंडुलम जब दूसरी तरफ जाता है, तब जीवन हमें मूल रूप से बुरा प्रतीत होने लगता है। अगले ही पल जीवन संघर्षों से भरा लग सकता है। हम सभी जीवन में अच्छी चीजों को पाने के लिए संघर्ष करते हैं, लेकिन दु:ख और दर्द से बचने का भय मन में बना रहता है। किंतु सच यह है कि हम गलतियाँ करते हैं और विफल हो जाते हैं, क्योंकि परिणाम हमारे वश में नहीं होता है। निर्णय लेना अपने आप में गलत होता है, लेकिन जिम्मेदारी हमारे ऊपर आ जाती है। संघर्ष के बाद भी यदि हमें वह मिल भी जाता है, जिसकी हम इच्छा करते हैं, तो खुशी थोड़ी देर की ही होती है। मनुष्य का स्वभाव ऐसा ही है। हम शीघ्र वहीं पहुँच जाते हैं, जहाँ से शुरुआत की थी। यदि जीवन में संघर्ष न हो तो वह उबाऊ हो जाता है, जो संघर्ष से भी बुरा होता है। इसलिए चक्र अपने आपको दुहराता है: संघर्ष, क्षणिक प्रसन्नता, ऊब (शोपेनहावर का निराशावाद)। पेंडुलम के दोनों पक्ष जीवन की अभिन्न अभिव्यक्ति हैं। निष्कर्ष यह है कि खुशी और आह्लाद की खोज से आप सीखें, बदलें और बढ़ें!

3

अकसर यह प्रश्न उठता है, यह कैसे जानें कि हमारी आध्यात्मिक यात्रा का आरंभ हुआ है या नहीं। हमने जीवन के विभिन्न चरणों में कितनी आध्यात्मिक यात्रा कर ली है, इसे मापने का कोई पैमाना नहीं है। यहाँ उस रास्ते पर मिली सफलता को हमारी निजी उपलब्धि, संतुष्टि से नहीं मापा जाता है। दरअसल सफल यात्रा से न केवल उस व्यक्ति को बल्कि उन लोगों में भी अच्छाई और प्रसन्नता बढ़ती है, जो उसके आसपास होते हैं। आध्यात्मिक रूप से जागृत व्यक्ति के संपर्क में आने से दूसरों को भी सकारात्मक तरंगों का आभास होता है। आखिर हम उन लोगों की सेवा कैसे कर सकते हैं, जो हमारी आध्यात्मिक यात्रा में हमारे साथ नहीं हैं? दूसरों की जागरूकता ऐसी है, जो नए युग की निजी इच्छाओं की पूर्ति की उस कल्पना को आध्यात्मिक यात्रा से अलग करती है, जो हर किसी व्यक्ति या वस्तु से संपर्क में नहीं होती है (ब्रैड हैर्शफील्ड, 'हाऊ टू टेक अ स्पीरिचुअल जर्नी')।

4

हमारा जीवन अपने आंतरिक अहम से जुड़ने के विषय में सीखना है। संपूर्ण

आध्यात्मिक यात्रा एक ऐसी यात्रा है, जिसमें हम यह खोज करते हैं कि वास्तव में हम कौन हैं। हम यहाँ क्यों आए हैं? यह ठीक ही कहा गया है कि पहले यह जानना चाहिए कि हम कौन हैं। यही सबकुछ है। बाकी सबकुछ विस्तार है। लामा थुबटेन येशे के अनुसार, 'हमें अंतत: यह पता चलता है कि हमारे मन का पहले से ही एक हिस्सा है, जो आध्यात्मिक दिशा में जा रहा है। जैसे-जैसे हमारा आध्यात्मिक विकास होता है, हम यह समझने लग जाते हैं कि हमारे अंदर पहले से ही वह मौजूद है, जिसे हम बाहरी जगत् में ढूँढ़ रहे थे। वह सारा प्रेम, खुशी और शांति जो सदैव हमारे साथ था।'' इस यात्रा की शुरुआत बाहर की ओर नहीं, बल्कि अंदर की ओर यात्रा से होती है। यह अंतर्दृष्टि उतनी ही पुरानी है, जितनी पुरानी इस सभ्यता की शुरुआत है।

5

हमारे सामान्य और सुखी जीवन में जब व्यवधान पड़ता है, विशेष रूप से ऐसे अवसर पर जब हमें विफलता का सामना करना पड़ता है या हम कोई बहुत बड़ी गलती करते हैं, जिससे मानसिक पीड़ा और संताप का अनुभव होता है, उन मौकों पर ही शिक्षा में गति आती है और वह सार्थक हो जाता है। निजी विकास और प्रगति के लिए सीखने की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। यदि हमने अपने सबक ठीक प्रकार से नहीं सीखा, तो पुरानी गलतियाँ फिर होंगी और बार-बार विफलता का सामना करना पड़ेगा। ऐसे में सबक अधिक कष्टदायी और कठिन हो जाएगा। अकसर हमारे जीवन में या आसपास घटनेवाली गंभीर घटना से पहले भगवान् एक चेतावनी देते हैं। हम यदि किसी प्राकृतिक आपदा या प्रकोप का अध्ययन करें, तो हम अकसर पाते हैं कि सुधार के कदमों और रोकथाम के उपायों पर ईश्वर की चेतावनी को अनदेखा कर दिया गया था। ऐसी प्रत्येक घटना के पीछे कोई छिपा अर्थ या सबक होता है, जिसे हमें बाद में ही सीख पाते हैं।

6

अपने जीवन की यात्रा के दौरान हम आध्यात्मिक विकास के विभिन्न पड़ावों से गुजरते हैं। सबसे नीचे वे लोग हैं जो कठोर रूप से स्वार्थ सिद्ध करनेवाला जीवन जी रहे हैं। वे आत्म-केंद्रित, सुविधाभोगी, असहिष्णु, भौतिक साधन जुटाने में व्यस्त रहते हैं। यही नहीं, उन्हें अपनी रूढ़िवादी सोच और धारणा का अहसास भी नहीं होता है। इसके बावजूद उनमें से अधिकांश लोग जो बढ़ती उम्र के साथ-

साथ विविध गति से आध्यात्मिक रूप से विकसित होते हैं। एम. स्कॉट पेक ने 'फरदर अलोंग द रोड लेस ट्रैवल्ड' में आध्यात्मिक विकास के चार क्रमिक चरणों की पहचान की है, जिनमें से अधिकांश धीरे-धीरे (लेकिन कुछ अपवाद भी हैं) सामने आते हैं। उस रास्ते पर चलते हुए व्यक्ति सिद्धांतवादी और अपने ऊपर अनुशासन रखनेवाला बन जाता है। अंततः वह (स्वाभाविक) अंतिम चरण की अनुभूति हो जाती है, जब व्यक्ति रहस्यवादी बन जाता है। रहस्यवादी मानवता के बीच के अंदरूनी जुड़ाव का अनुभव करते हैं, और अराजकता और अव्यवस्था के रहते हुए भी उन्हें एकता और संबद्धता दिखाई देती है।

7

हम अपने जीवन के अंतिम दिन तक भी सबक सीखते रहते हैं। जीवन का कोई हिस्सा नहीं, जिसमें उसके सबक नहीं होते। हर एक व्यक्ति कभी-न-कभी अपने पेशे में या सेवा में या फिर संबंधों में गलतियाँ करता है और विफलता का सामना करता है। किंतु उन दुर्घटनाओं/घटनाओं को सदा ही अवसरों में परिवर्तित करने का विकल्प होता है, साथ ही उन बाधाओं और रुकावटों को आगे बढ़नेवाले पत्थरों के समान इस्तेमाल करने का अवसर भी होता है। यदि हम सबक नहीं लेते, तो सबक तब तक दुहराए जाते हैं, जब तक कि हम उन्हें सीख नहीं लेते। सबक सिखानेवाली परिस्थितियाँ हमारी ओर तब तक विभिन्न रूपों में आती हैं, जब तक कि हम अपेक्षित सबक को सीख नहीं लेते। यह एक पुरानी कहावत है कि विफलता ही सारी सफलताओं की उसी प्रकार जननी है, जिस प्रकार आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है।

8

भगवान् ने हम सबके लिए एक पथ निश्चित कर दिया है, जिस पर हमें चलना है। इस पथ पर चलते हुए हम सभी अपने विशिष्ट तरीके से सीखते हैं। चढ़ाई और ढलान पर चलते हुए हमारा सामना उन तीखे और अप्रत्याशित मोड़ों से होता है, जो हमें आनेवाले पथ की चुनौतियों के लिए सबक सिखा देते हैं। संघर्ष, विफलता के बीच उनसे सीखना या जब हम लगातार बिना सोच-समझे गलतियाँ करते जाते हैं, तब वही गलतियाँ जीवन में हमारे विकास के लिए अनिवार्य अंग बन जाती हैं। यदि हम नहीं सीख पाते, तो राह में हमें तब तक और अधिक झटके और हिचकोले खाने पड़ते हैं, जब तक कि हमें सीखने की आवश्यकता का

अहसास नहीं हो जाता है। उस रास्ते पर लगातार सीखते हुए हमारी आत्मा उन सबक से जुड़ी परीक्षा लेती रहती है, जिन्हें हमने सीखा है और हमारे आध्यात्मिक विकास में हमें लगातार निर्देशित करती रहती है।

9

जीवन के सफर में हमारे सामने नए चेहरे आते हैं। उनमें से कुछ हमारा हाथ पकड़कर हमें बाधाओं को पार करने में मदद करते हैं, (सफलता) की सीढ़ी के ऊँचे पायदान की ओर बढ़ने की प्रेरणा देते हैं। हालाँकि कुछ अन्य लोग हमें दु:ख पहुँचा सकते हैं और धोखा दे सकते हैं, तथा अपमानित और तिरस्कृत कर सकते हैं, या इससे भी बुरा यानी सीढ़ी से धकेल सकते हैं। उन्हें माफ कर दो, हालाँकि ऐसा करना अत्यंत कठिन होता है, फिर भी हमें उन्हें माफ कर देना चाहिए। जैसा कि जीसस ने कहा था, वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं। इस प्रकार की आत्मा भी हमारे पथ पर सामने आती है और जीवन के विषय में ऐसे महत्त्वपूर्ण सबक सिखाती है, जिन्हें हम अन्यथा नहीं सीखेंगे। वे हमें सिखाते हैं कि उनके प्रति अपने दिल में खुलापन लाने से पूर्व हमारा सावधान रहना कितना महत्त्वपूर्ण है। सबक को सीखना ही हमारे जीवन का एकमात्र उद्देश्य है!

10

हम यहाँ अकस्मात नहीं आए हैं। हमारे यहाँ आने के पीछे एक सार्थक कारण है। हम में से हर एक यहाँ सीखने और विकसित होने और एक सार्थक मकसद के साथ बढ़ने के लिए आया है, ये ऐसे सबक हैं और ऐसे विशिष्ट कार्य हैं, जिन्हें हमारे जीवन में सफल होने के दौरान पूर्ण कर लिया जाना है (आचार्य रजनीश, एक भारतीय रहस्यवादी गुरु, शिक्षक और आध्यात्मिक शिक्षक)। एक सार्थक जीवन एक व्यापक शब्द है, जिसकी विभिन्न प्रकार की परिभाषाएँ हैं, जिनका संबंध जीवन में संतुष्टि की खोज (विकीपीडिया) से जुड़ा होता है। सार्थक जीवन जीने के लिए यह आवश्यक है कि हमारा दैनिक जीवन उद्देश्य, और जिम्मेदारी से परिपूर्ण हो। हमें एक सच्चे मनुष्य की भाँति जीने के सभी संभव प्रयास करने चाहिए। हम सबकी विकसित होने, और इस प्रकार मानवता के भविष्य को बेहतर और अधिक सार्थक बनाने की एक सामूहिक जिम्मेदारी है।

11

अपने विकास की यात्रा में हम गर्भ से शवदाह या कब्रगाह तक का सफर

तय करते हैं। हम जितनी भी गलतियाँ समय-समय पर करते हैं और विफलता का सामना करते हैं, वे सब जारी रहनेवाली सीखने की प्रक्रिया का ही अंग हैं। जीवन सरल नहीं है, कई बार घटनाएँ रहस्यमयी मोड़ ले लेती हैं। अपनी यात्रा में हम शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूप से विकसित होते हैं, और यह सब एक साथ या एक के बाद एक होता है और हम जीवन के सबक सीखते जाते हैं। धीरे-धीरे हम जैसे-जैसे जीवन की जटिलताओं से सीखते जाते हैं, जो अकसर कष्ट से भरा होता है, और उसके रहस्यों को समझते हैं, वैसे-वैसे हम प्रेम और करुणा के अपने दायरे का विस्तार करते हैं तथा दूसरे लोगों के कष्ट को अधिक-से-अधिक महसूस करने लगते हैं, यही आध्यात्मिकता का वास्तविक अर्थ है।

12

हमारे जीवन का उद्देश्य यात्रा के दौरान, जो अकसर ऊँचे-नीचे रास्तों से होकर गुजरती है, अपने अंदर के जीव को उसके वर्तमान स्तर से उच्च स्तर तक ले जाने का होता है। इस पूरी यात्रा के दौरान हमारा सामना कई उतार-चढ़ावों से होता है, फिर भी हम अपनी चुनौतियों और समस्याओं से जुड़े सबक को सीखते हुए अपना विकास करते रहते हैं। हम सभी संभावनाओं और विकास के अवसरों के प्रति खुला रुख रखते हैं और उनका लाभ उठाते हैं। हालाँकि हममें से अधिकांश लोग अपनी छोटी और निजी दुनिया में इतने व्यस्त या खोए रहते हैं कि हम शायद ही इस संसार को सही रूप में देख पाते हैं। हममें से अधिकांश लोग अपने आस-पास उपलब्ध अवसरों को खुले दिल से स्वीकार भी नहीं करते। सुंदरता तो इसी बात में है कि सही मौके पर संभावनाओं के अथाह सागर में उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाया जाए। तभी उन संभावनाओं से हमारा जीवन पूर्ण हो सकेगा।

13

जीवन भगवान् की दी गई अनुपम भेंट है, जिसका एक सार्थक उद्देश्य होता है। विकास और परिस्थितियों के चरणों के लिहाज से भिन्न समय में हमारे उद्देश्य भिन्न हो सकते हैं, लेकिन लंबे समय तक हममें से हर एक के लिए जीवन का अर्थ सामान्य तौर पर एक ही होता है। हममें से हर एक स्त्री या पुरुष जीवन का अपना ही विशेष अर्थ निकलता या निकालती है। जीवन की यात्रा के दौरान हम सभी संभावनाओं के प्रति खुला रुख अपनाते हैं, और उन्हीं संभावनाओं की ओर बढ़ते और विकसित होते हैं। हालाँकि हम उन अवसरों का यदि लाभ उठाना

चाहते हैं तो हमें ग्रहणशील और संवेदनशील होना पड़ेगा। संवेदनशीलता की शुरुआत तब होती है, जब हम अपनी अंतर्रात्मा की आवाज को सुनना सीख जाते हैं, और अपने मन से कहते हैं कि वह उन बातों को गंभीरता से लेना शुरू कर दे।

14

जीवन की यात्रा के दौरान हमें सोद्देश्य विकल्प तभी मिलते हैं, जब हमें विश्वास होता है कि वह लक्ष्य प्राप्त करने योग्य है। अन्यथा हम निरुद्देश्य भटकते रहते हैं और दैनिक जीवन के कार्यों में अपनी ऊर्जा और समय गँवाते रहते हैं। इसकी बजाय, हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि इस जीवन में हमें किसकी आवश्यकता है और फिर उस दिशा में अपनी ऊर्जा को मोड़ दें। इसके लिए किसी को भी मन में जड़ें जमा चुकी सोच, विचारधारा, भावनाओं और विश्वासों से बाहर निकलना होगा, जिनका निर्माण बीते कई वर्षों में हुआ है और जिन्हें बदलना कठिन होता है। इसलिए सबसे पहले हमें अपने आपको स्पष्ट और जितनी गहराई से संभव हो जान लेना होगा, तथा व्यक्तिगत विकास और परिवर्तन को अपनाने के लिए खुला रुख रखना होगा। हम जब अपने आप को बदल लेंगे, तो हम इस संसार को भी बदल सकते हैं।

15

जीवन के अर्थ की तलाश ही अपने आप में एक ऐसा उद्देश्य है, जिसे हमें अपने जीवनकाल में पूरा करना चाहिए। जीवन हमें उन सबको सीखने की व्यापक संभावनाएँ उपलब्ध कराती है, जो हमारी चेतना को उच्च स्तर तक ले जा सकते हैं। हम जो सबक सीखते हैं वे हमें जीवन के हर पहलू में एक अच्छा मनुष्य बना सकते हैं। हम सभी भौतिक सुख, सुविधाओं, परिस्थितियों, और उनसे जुड़े 'विशेष' लोगों से चिपके रहते हैं, और अपने सामने आनेवाले सबक को न ग्रहण करते हैं, न ही खुले दिल से स्वीकार करते हैं, ऐसे में हम उच्च स्तर तक विकसित होने की बात नहीं सोच सकते। हालाँकि सबसे मूलभूत स्तर पर इस प्रश्न के उत्तर की तलाश कि ''जीवन क्या है ?'' उन विशेषताओं और गुणों के प्रति हमें ग्रहणशील और उत्सुक बना सकती है, जो हमें जागरूकता के उच्च स्तर तक ले जाने की क्षमता रखते हैं, जहाँ हम अपने साथी मनुष्यों की भलाई में अधिक-से-अधिक योगदान करने की स्थिति में आ जाते हैं।

16

हमारी जीवन यात्रा हिचकोले खाती नाव के समान होती है, जो अंतत: एक अनजान मोड़ पर आकर समाप्त हो जाती है। यात्रा के दौरान हमें शारीरिक, मानसिक, और आध्यात्मिक रूप से या तो चरण-दर-चरण यानी शनै:-शनै: विकसित होने के अवसर मिलते हैं या फिर अगले या उच्चतर स्तर तक छलाँग लगाने का एक बड़ा अवसर प्राप्त होता है। फिर भी यह हम पर निर्भर करता है कि हम कैसे और कब उन अवसरों का लाभ उठाते हैं, जो हमारे रास्ते में बार-बार सामने आते हैं। विकसित होने की प्रचुर क्षमता के बावजूद हम अकसर उन अवसरों को गँवा देते हैं, क्योंकि हम या तो जागरूक नहीं होते या फिर अपने आपको तैयार/राजी नहीं कर पाते हैं। यदि हम कभी भी अपनी वास्तविक क्षमता के अनुसार विकसित होने का निर्णय लेते हैं, तो हमें पर्याप्त रूप से ग्रहणशील तथा अपने आरामदेह दायरे से बाहर निकलने का हौसला रखना होगा, जहाँ हम सभी सुरक्षित रहकर अवसरों को सफलतापूर्वक हथियाने की ताक में रहते हैं।

17

हम सभी दो चरणों में विकसित हो सकते हैं। पहला चरण वह होता है, जब जीवन और कुछ नहीं केवल हमारे अहंकार का चढ़ा-बढ़ा रूप होता है। अहंकार शुद्ध रूप से स्वार्थी होता है। हम अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए धन-दौलत और भौतिक साधन जुटाते हैं। कई लोग तो अपने अहंकार को संतुष्ट करने में ही अपना जीवन समाप्त कर लेते हैं। हालाँकि हममें से कई लोग अपने आप से चिरस्थायी प्रश्न पूछते हैं, जैसे जीवन का अर्थ क्या है? हम यहाँ क्यों आए हैं? क्या जीवन अनावश्यक और निरुद्देश्य है? ऐसे प्रश्न पूछनेवाले ही दूसरे चरण में प्रवेश करते हैं, जो अपने प्रश्नों के उत्तर की तलाश करते हुए अपनी चेतना का विस्तार करते हैं। वे उच्च स्तर की जागरूकता तक पहुँचना चाहते हैं, जहाँ प्रेम, करुणा, सहानुभूति और दूसरों के लिए चिंतित होना ही उनके जीवन का अर्थ होता है।

18

इससे फर्क नहीं पड़ता कि हमारी योजना या उद्देश्य क्या है, जीवन अपनी राह अचानक बदल सकता है और हमें अप्रत्याशित परिस्थिति में ला खड़ा कर सकता है। जॉन लेनॉन ने ठीक ही कहा था, ''जीवन वह है जो तब घटित होता है, जब आप दूसरी योजनाएँ बनाने में व्यस्त हों।'' हालाँकि सुंदरता इसी बात में छिपी

होती है कि हम नई परिस्थितियों को ग्रहण करने और अपनाने के लिए अपना रुख कितना लचीला रखते हैं। हमें चुनौतियों को पूरे दिल से स्वीकार करना चाहिए तथा जब हमारी योजनाएँ विफल हो जाएँ तो उनसे सबक लेना चाहिए। ऐसी कोई गलती या विफलता नहीं होती, जिसमें कोई छिपा हुआ सबक नहीं होता। हमें अपने कार्यों के किसी भी परिणाम/निष्कर्ष की जिम्मेदारी बिना शर्त स्वीकार करनी चाहिए। बदलती परिस्थितियों में ग्रहणशीलता और स्वीकार्यता ही सफलता और उससे संबद्ध प्रसन्नता की कुंजी होती है।

19

बाहरी जगत् भ्रम पैदा करनेवाला और अकसर छलनेवाला होता है। इसके 'नियम' कई बार अप्रत्याशित और मनमाने होते हैं। इस जगत् के वास्तविक सत्य को समझने के लिए हमें अपने अंदर जाना ही होगा। इस यथार्थ की अनुभूति के लिए कि हम वास्तव में कौन हैं, आंतरिक यात्रा अनिवार्य है। अंदर जाने का अर्थ यही है कि हम अपने अंदर झाँकें और आत्म-मंथन करें। यदि कोई व्यक्ति हमें बदल सकता है तो वह स्वयं हम ही हैं। अंदर की यात्रा से हम उस दिशा के बारे में जान सकते हैं, और यह समझ सकते हैं कि हम उस पर क्यों चल रहे हैं। इसलिए हम अपने आपको जो सबसे महान् उपहार दे सकते हैं वह आत्मज्ञान का आरंभ और उसका पुष्पित-पल्लवित होना ही है। ऐसा करने से हम अपने मन को तथा उसमें अपने ज्ञान से संबद्ध आने और जानेवाले विचारों का अवलोकन कर सकते हैं। आत्मावलोकन से हम अंततः उस जकड़ी मानसिकता से स्वतंत्र हो जाएँगे, जो अकसर हमारी प्रगति की राह का रोड़ा बन जाती है।

20

हम अपने बनाए रास्ते पर ही चलते हैं, लेकिन अंत में हम सभी की मंजिल एक ही होती है। हम सभी विभिन्न गति से चलते हैं, जो हमारे व्यक्तिगत विकास पर निर्भर करती है, और जीवन के द्वारा उपलब्ध कराए गए अनेक अवसरों पर प्रयोग करते हुए अपने उद्देश्य को प्राप्त भी करते हैं। यदि हम नए क्षेत्रों की ओर जाने का साहस नहीं जुटाएँगे, और अपने आरामदेह दायरे तक सीमित रहेंगे तो हमारी गति या तो धीमी पड़ जाएगी या इससे भी बुरा हुआ तो वह ठहर जाएगी। निश्चित उद्देश्य के साथ हमें अपने चुने रास्ते पर आगे बढ़ते रहना चाहिए। जीवन के रहस्यों को स्पष्ट रूप से समझने और उसमें अपनी भूमिका या अपने उद्देश्य

की इच्छा ही मनुष्य को उसकी यात्रा के लिए प्रेरित करती है (ब्रायन ल्यूक सीवार्ड, क्वाइट माइंड फीयरलेस हार्ट : द ताओइस्ट पाथ थ्रू स्ट्रेस ऐंड स्पीरिचुअलिटी)।

21

''आप न अपने अतीत को बदल सकते हैं; न ही भविष्य को प्रभावित कर सकते हैं···दूसरे शब्दों में, हमारा अतीत केवल संभावित रूप से ही सामने आया था और जो कुछ वास्तव में घट चुका है उसके अतिरिक्त कुछ और होना संभव नहीं था।'' (डेविड ए शियांग, 'गॉड डज नॉट प्ले डाइस')। नियतिवाद के इस वैश्विक विचार का अल्बर्ट आइंस्टीन तथा अन्य महान् विचारकों ने जबरदस्त समर्थन किया था। दार्शनिकों का यह मत है कि प्रत्येक घटना के लिए एक परिस्थिति पहले से ही मौजूद रहती है, जिसके बिना कोई दूसरी घटना घट ही नहीं सकती है। दूसरे शब्दों में, पूर्वनिश्चित परिस्थितियाँ किसी घटना का परिणाम निश्चित करती हैं। इसके बिना घटना किसी और रूप में नहीं घट सकती है। हालाँकि हम चीजों के विषय में विचार कर व्यर्थ बहुत समय गँवाते हैं। जो हो चुकी हैं और जिन्हें बदला नहीं जा सकता है, उन पर अफसोस करना छोड़कर, एक सबक अवश्य सीखना चाहिए!

22

अब यह बात व्यापक तौर पर स्वीकार कर ली गई है कि समकालिकता, यानी ऐसी दो या अधिक घटनाएँ जो एक-दूसरे से जुड़ी नहीं हैं, फिर भी वे एक साथ एक सार्थक रूप से घटती हैं और ऐसा हर किसी के जीवनकाल में होता है, लेकिन कुछ ही लोग उन घटनाओं को समझ पाते हैं और उनके महत्त्व को समझ पाते हैं, जबकि वे देखने में बेतरतीब ही लगती हैं। हालाँकि ऐसी घटनाएँ एक सार्थक उद्देश्य के कारण ही घटती हैं, यही नहीं, ऐसा माना जाता है कि ये घटनाएँ हमारे प्रारब्ध को पलट सकती हैं। इस कारण किसी को भी इस प्रकार (प्रतीत होनेवाले) संयोगों को परमात्मा या जिन्हें हम भगवान् कहते हैं उनकी ओर से महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन समझकर स्वीकार कर लेना चाहिए। सामान्य तौर पर वे एक पथ /दिशा की ओर ले जाते हैं, जो आगे चलकर हमारे विकास के लिए उपयुक्त होते हैं। समकालिकता के गूढ़ अर्थ को समझने के लिए इसकी व्याख्या सावधानीपूर्वक की जानी चाहिए।

23

आखिर ऐसा क्यों होता है कि छोटी और मामूली घटना या फैसलों का भी हमारे जीवन पर व्यापक और विनाशकारी प्रभाव पड़ता है ? इसे 'बटरफ्लाई इफेक्ट' कहते हैं, जिसमें शुरुआती परिस्थिति में थोड़ा सा परिवर्तन भी प्रणाली पर लंबे दौर में बहुत बड़ा परिवर्तन ला सकता है। इस इफेक्ट का नामकरण पहली बार एडवर्ड लॉरेंज ने किया था। क्वांटम यांत्रिक के अनुसार, हम 'सहभागी ब्रह्मांड' में रहते हैं, जहाँ हमारे अंदर अपने आस-पास के जगत् को परिवर्तित करने की काबीलियत होती है। ग्रेग ब्रैडन ने 'द डिवाइन मैट्रिक्स' में बताया है कि चूँकि क्वांटम स्तर पर हम ब्रह्मांडीय रूप से जुड़े हुए दिखते हैं, अंततः हमारा जुड़ाव यह विश्वास दिलाता है कि हमारे जीवन में छोटा दिखनेवाला बदलाव भी हमारे संसार पर बहुत बड़ा प्रभाव डाल सकता है।

24

जीवन देखने में अव्यवस्थित दिखता है, किंतु सदा ही इसका तरीका सार्थक होता है। जीवन में जो कुछ भी होता है, वह लंबे दौर में, संतुलित और बराबर हो जाता है। जीवन में सबकुछ, जैसे कष्ट-सुख, सफलता-विफलता, विजय-पराजय, उजाला-अँधेरा और उतार-चढ़ाव, संतुलित मात्रा में रहते हैं। प्रकृति का यही स्वभाव है। जीवन में हम जो कुछ देखते और महसूस करते हैं उस पर द्वैधता लागू होती है। हममें से हर एक को, लंबे दौर में, कष्ट और सुख, सफलता और विफलता आदि को कमोबेश बराबर-बराबर ही भोगना होगा। सुंदरता तो इस बात में है कि कैसे हम इस द्वैधता को अपने जीवन के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। एक ही जीवन में नरक और स्वर्ग दोनों का अनुभव हो सकता है। जीवन के इस मौलिक सत्य का अहसास केवल तभी होता है, जब हम जीवन की घटनाओं को एक वृहत् परिप्रेक्ष्य में देखते हैं। यह जान लेने के बाद हमें सबकुछ और अधिक 'स्वीकार्य' लगने लगता है और कष्ट स्वाभाविक रूप से समाप्त हो जाता है।

25

कुछ अपवादों को छोड़ दें, तो हम जीवन के अनुभवों से सबक लेते हुए प्रगति के पथ पर बढ़ते जाते हैं। हालाँकि किसी भी व्यक्ति का जीवन घिसा-पिटा होता है और काफी हद तक एक रुटीन के आसपास घूमता है, और सभी के जीवन में सफलता और विफलता का उतना ही हिस्सा होता है। जीवन सदा ही अप्रत्याशित

घटनाओं और हमारे विचारों, शब्दों एवं कर्मों के फल का एक मिला-जुला कॉकटेल होता है। वही घटनाएँ और अनुभव हमारी यात्रा की दशा और दिशा तय करते हैं। तनाव और दबाव के दौरान ही हम उन परिवर्तनों के प्रति अधिक ग्राह्य होते हैं, जिन्हें हम देखते हैं और जिनकी रचना करते हैं।

26

हममें से कितने लोगों में दूसरों की क्या अपेक्षा है यह सोचने की बजाय 'अपने नगाड़ों की थाप पर' चलने, जीवन को पूरी तरह से जीने का साहस होता है? हम से कितनी अपेक्षाएँ होती हैं, और उनके कारण बाहरी संस्थानों, जैसे—परिवार और समाज का हमारे ऊपर इतना दबाव होता है कि हम अकसर यह नहीं सुन पाते कि हमारा दिल क्या कह रहा है। हममें से अधिकांश लोग नई चीजें सीखने की अपनी क्षमता को कम आँकते हैं तथा नए क्षेत्रों में जाने से डरते हैं। हम सभी बदलाव के डर से प्रत्याशित और परिचित आरादेह दायरे में रहना पसंद करते हैं। यही प्रवृत्ति विकास को रोकती है। हम अपने सपनों को पूरा नहीं करते, और यात्रा के अंत में, हमें इस बात का अफसोस होता है। जीवन हर पल विकल्प पेश करता है। हमें वही चुनना चाहिए, जो हमारे लिए सही है, न कि दूसरे जिसे हमारे लिए अच्छा समझते हैं।

□

17

मानवीय कष्ट से बचा जा सकता है

कष्ट तब उत्पन्न होता है, जब हमारा विचारक मन अतीत की अप्रिय घटनाओं/अनुभवों की याद दिलाता है या हमें अपने भविष्य को लेकर चिंतित और भयभीत कर देता है।

1

इसमें कोई संदेह नहीं कि अधिकांश मानवीय कष्ट का कारण स्वयं हम ही हैं। हम जब खुले मन के और ग्राह्य नहीं होते और उसके विपरीत समय-समय पर होनेवाले निश्चित परिवर्तनों का विरोध करते हैं, तब हमारा कष्ट बढ़ जाता है। कष्ट परिवर्तन के बाद उत्पन्न परिस्थितियों से नहीं होता, बल्कि उनसे जुड़े प्रतिक्रियावादी विचार और भावनाएँ कष्ट एवं दु:ख पैदा करती हैं। उन परिस्थितियों में जब अहम का स्वार्थ खतरा महसूस करता है, तब हमें लगता है कि हमारी रक्षात्मक या आक्रामक प्रतिक्रियाओं के सिवाय कोई विकल्प ही नहीं है। हमें परिवर्तनों के प्रति स्वाभाविक, खुला, और उन्हें स्वीकार करनेवाला रुख अपनाना चाहिए तथा अपरिचित एवं कठिन परिस्थितियों पर खुले मन और दिल से प्रतिक्रिया करनी चाहिए। इस प्रकार, हम प्रतिकूल परिवर्तनों से जुड़े कष्ट को कम-से-कम कर सकेंगे।

2

गेल शीही ने ठीक ही कहा था, ''यदि हम बदलेंगे नहीं तो विकसित नहीं होंगे। यदि हम विकसित नहीं हुए, तो हम सच में जी नहीं रहे हैं।'' बदलाव ही एकमात्र स्थायी तत्त्व है। हम अपने शरीर, संबंधों और काम करने के माहौल आदि

में निरंतर परिवर्तन को देखते हैं। हालाँकि कष्ट तब होता है, जब-जब हम बदलावों का विरोध करते हैं और उनके प्रति नकारात्मक प्रतिक्रिया करते हैं, विशेषकर जब हम किसी विशेष परिणाम से मोह करने लगते हैं। ऐसे में हमें क्या करना चाहिए? कष्ट तो मन में होता है। ''हमारे मन में विचार होते हैं। उन विचारों पर ध्यान दें तो वे परिवर्तन का विरोध करते हैं। वे विचार ही आसक्ति पैदा करते हैं। अपने विचारों पर ध्यान देना, दूसरे शब्दों में आसक्ति पर गौर करना ही उसे बाहर निकलने का प्रयास है और फिर आपको यह अहसास होता है कि आप ऐसे व्यक्ति नहीं, जिसकी पहचान आसक्ति से होती है, बल्कि आप बस उसका अवलोकन करनेवाले हैं। एक बार आप उस अवलोकन करनेवाले को जान लेते हैं, अपनी आत्मा के आध्यात्मिक जीव को पहचान लेते हैं, तब आपको प्रेम का वह अनुभव कहीं अधिक होने लगेगा, जो अब तक आपको वहाँ बाहर से मिला है। अमेरिकी आध्यात्मिक शिक्षक रामदास ने ऐसी ही सुंदर अनुभूति की है।

3

हम भले ही सर्वोत्तम प्रयास करें, किंतु जीवन अकसर हमें कष्ट देता है। यह स्वाभाविक है। हममें से हर एक के कष्ट झेलने का खतरा होता है। याद कीजिए कि बुद्ध ने इस जगत् के विषय में क्या कहा था। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि यह कष्ट से भरा है। हमारे पास आज जो कुछ भी है या हमारा जो भी अनुभव है वह कल नहीं रहेगा। धन और संबंध समेत सबकुछ समाप्त हो जाएगा। इस पैराग्राफ को पढ़ने में जितने सेकेंड लगेंगे उस दौरान करोड़ों पुराने अणु का स्थान नए अणुओं द्वारा ले लिया जाएगा। हमारे अंदर एक चीज, जिसमें परिवर्तन नहीं होता और जो हमारे साथ मृत्यु तक रहती है, वह है हमारी जागरूकता। इस जगत् में अपने आपको उसी प्रकार महसूस करना जैसी कि वास्तविकता है। हम जिस पल में हैं उसी पल में जीते हैं, तो कष्ट दूर हो जाता है। यदि हम अपनी भावनाओं, अनुभूतियों और विचारों के प्रवाह को बस मूक-दर्शक बनकर देखते रहें तो वे आसानी से आकर चले जा सकते हैं। ऐसा करने से हम बिना शर्तवाली संपूर्णता के स्थान की खोज कर सकेंगे, जहाँ किसी प्रकार के इलाज की आवश्यकता नहीं पड़ती है (मैक पॉल द्वारा पोस्ट की गई 'फीलिंग स्टोरी ऑन मेडिटेशन')।

4

हम सभी कष्ट और दुःख से बचने के लिए कड़ा संघर्ष करते हैं, साथ-ही-साथ सुख और प्रसन्नता के लिए प्रयासरत रहते हैं। मृत्यु अटल है, यह जान लेने

के बाद भी हम मरने से डरते हैं। अपने जीवन को सुरक्षित और आरामदेह बनाने के लिए हम सुख के भौतिक साधन से चिपके रहते हैं और उन्हें जुटाते रहते हैं, तथा यह जानते हुए भी कि अंतत: इनके कारण कष्ट ही मिलेगा हम अपनी होड़ को बंद करने की एक सीमा तय नहीं करते। यह उस चेतना की, उस द्वैधता की एक व्याख्या है, जो हमारे पूरे जीवन में सक्रिय रहती है। हालाँकि सुंदरता इस बात में है कि हम अपने जीवन में द्वैधता को संतुलित कैसे करते हैं। जीवन के कष्ट का निवारण करने में बौद्ध विचार सहायक है, जिसके मुताबिक द्वैधता से बचा नहीं जा सकता, लेकिन उसे संतुलित करना अनिवार्य है। जीवन में द्वैधता को स्वीकार कर, हम दोनों तटों के बीच बिना किसी एक से चिपके, आराम से तैर सकते हैं, जिनमें से एक तट दु:ख और कष्ट का है, और दूसरा प्रसन्नता और सुख का।

5

अपने उपदेशों में भगवान् बुद्ध कहा करते थे, ''जीवन में दु:ख है।'' यही हमारे जीवन का सत्य है। हम सभी कष्ट और दु:ख को झेलते हैं। माना जाता है कि कष्ट इस कारण है, क्योंकि यह हमारे जीवित रहने के लिए आवश्यक है, चूँकि यह शरीर में कहीं भी शारीरिक नुकसान या बीमारी का सूचक होता है। दु:ख मनोवैज्ञानिक प्रकृति का होता है। हम चाहे कितने ही अमीर या सफल क्यों न हों, एक मौलिक असंतुष्टि बनी रहती है। हम जो कुछ भी सोचते हैं वह इच्छा पूरी नहीं होती है। निश्चित रूप से हममें से अधिकांश लोग उस भ्रम के जाल में फँस जाते हैं कि यह असंतुष्टि हम जो (या जिसे) चाहते हैं उसे प्राप्त कर सुख और प्रसन्नता से दूर हो सकते हैं। वास्तव में दु:ख और कष्ट इस कारण होते हैं, ताकि हम दूसरों के लिए करुणा, सहानुभूति का अनुभव करें और उनकी चिंता करें। कष्ट का अनुभव स्वयं किए बिना हम दूसरों के कष्ट को नहीं समझ सकते हैं।

6

हम जब वर्तमान में जीते हैं, तब कोई कष्ट नहीं होता है। कष्ट तब होता है, जब हमारा मन हमें अतीत की घटनाओं/अनुभवों की याद दिलाती है और हमें अपने भविष्य के प्रति भयभीत और चिंतित कर देती है। अतीत की स्मृतियों से हमारा मजबूत लगाव तथा भविष्य के लिए चिंता कष्ट का कारण होती है। अप्रिय पलों को दूर करने का एक ही रास्ता है कि हम अपना ध्यान वर्तमान पल पर लगाएँ। किंतु हम जब तक अपने मन को प्रशिक्षित नहीं करते, तब तक यह अपनी

प्रवृत्ति के अनुसार हमारा ध्यान वर्तमान से दूर ले जाने में लगा रहता है। मन को वर्तमान पल में लाने के कई उपाय हैं, जैसे—ध्यान लगाना, जिसका प्रमुख उद्देश्य अपने अंदर झाँकना और श्वास की सूक्ष्म गतिविधि को महसूस करने का होता है। अतीत जा चुका है और भविष्य अनिश्चित है, केवल वर्तमान ही हमारे साथ है, जिसका हम आनंद और लुत्फ उठाकर उसका सर्वाधिक लाभ ले सकते हैं।

7

जहाँ भी इच्छा है वहाँ भय है और जहाँ भय है वहाँ इच्छा है। हमारे अधिकांश कार्य और व्यवहार पर इसी इच्छा-भय की द्वैधता का नियंत्रण होता है, जो अकसर कष्ट, असंतोष और जीवन में चिंता का कारण बनता है। सत्य यह है कि हमारे अंदर जितनी इच्छाएँ होती हैं, हमें उनके पूर्ण न होने का भय भी उतना ही सताता है। यदि हम स्वस्थ बुढ़ापे की इच्छा रखते हैं, तो उससे पूर्व मृत्यु हो जाने का डर सताने लगता है। जीवन के स्वभाव और उससे संबद्ध द्वैधता को समझ लें, तो हम भय और उससे जुड़े कष्ट को मिटा सकते हैं। यदि हम इस बात को समझ लें कि इच्छा/भय के जाल के पीछे छद्म 'मैं और मेरा' है तो कष्ट दूर करने का यह पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण कदम हो सकता है।

8

कष्ट सार्वभौमिक है। हम जीवन में जो कष्ट झेलते हैं उससे कोई भी अछूता नहीं है। हमें तब अधिक कष्ट होता है, जब हम उसे निजी तौर पर लेते हैं और उसका विरोध करते हैं। किंतु हम जब यह समझ लेते हैं कि कष्ट व्यक्तिगत नहीं होता, और परिस्थितियों और घटनाओं को उसी रूप में स्वीकार कर लेते हैं, जिस रूप में वे सामने आती हैं, तो सबकुछ बदल जाता है। स्वीकार्यता में कष्ट दूर करने की बड़ी शक्ति होती है, क्योंकि जब हम यह मान लेते हैं कि वास्तव में हमारा अपने कर्मों और विचारों पर कोई नियंत्रण नहीं होता, और विचारों तथा भावनाओं पर आधारित हमारे कार्यों का परिणाम हमारी मूल धारणा पर आधारित है, तो हमें राहत महसूस होती है। यदि 'हम' सोचते हैं कि 'हमारी' इच्छा स्वतंत्र है और 'हम' सोचते हैं कि 'हमें' कोई दूसरा रास्ता अपनाना चाहिए था, तो यह निश्चित हो जाता है कि 'हमें' कष्ट होगा। कष्ट का एक उपाय है : 'मैं' की पड़ताल करें। यदि 'हम' ऐसा करें, तो 'हमें' वह नहीं मिलेगा। 'मैं' नहीं तो कष्ट नहीं (स्टेनली सबोटका, 'ए कोर्स इन कनसशनेस')।

9

मनुष्यों के अथाह सागर में हममें से कितने लोग जागरूक या ज्ञानी हैं? किसी वस्तुनिष्ठ पैमाने के अभाव में जागरूकता के उन चरणों की पहचान बहुत कठिन है जिनसे हममें से अधिकांश लोग जीवन यात्रा के दौरान गुजरते हैं। सामान्य तौर पर हम समझ जाते हैं कि हम कब जागृत हो रहे हैं और अपने विषय में अधिक-से-अधिक जागरूक होते जाते हैं। कष्ट कम होता जाता है, आंतरिक शांति स्थापित हो जाती है। वास्तविक रूप से सभी ज्ञानी मनुष्यों में दूसरों के प्रति करुणा और नि:स्वार्थ प्रेम होता है, क्योंकि वे अपने और दूसरों के बीच अलगाव को नहीं देखते हैं।

10

हम जैसे-जैसे जीवन की द्वैधताओं, जैसे—कष्ट और सुख, अच्छे और बुरे आदि की द्वैधता को समझने लगते हैं, वैसे-वैसे एकता की इस अवश्यंभावी मौलिक अनुभूति का होना निश्चित हो जाता है। हमें केवल कष्ट की, उसके स्रोत की और उसके प्रति सबसे सद्भावपूर्ण प्रतिक्रिया की गहरी समझ होनी चाहिए। ऐसा होने पर ही हम न केवल मैं से अपनी गहरी पहचान के प्रति जागरूक होते हैं, बल्कि अपने विचारों, भावनाओं, अनुभूतियों और धारणाओं को भी समझ पाते हैं। हम जब उनका विरोध करने की बजाय उन्हें स्वीकार करने लगते हैं, तभी सारे कष्ट को समाप्त करने का आरंभ करने की कुंजी प्राप्त कर पाते हैं।

आध्यात्मिक यात्रा का अर्थ है आत्म-अन्वेषण और जागरूकता से यह पता लगाना कि वास्तव में हम कौन हैं। हम जैसे-जैसे आध्यात्मिक रूप से विकसित होते जाते हैं, हम समझने लगते हैं कि हमारे अंदर पहले से ही वह है, लेकिन हम उसे बाहर ढूँढ़ते हैं। हम यहाँ गलती से नहीं आए हैं। हमारे अस्तित्व के पीछे एक मकसद होता है। हम जीवन की यात्रा जैसे-जैसे आगे बढ़ाते हैं, वैसे-वैसे सीखते जाते हैं और यह प्रक्रिया जीवन के अंतिम दिन तक चलती रहती है। सबक सिखानेवाली परिस्थितियाँ हमारे सामने विभिन्न रूपों में आती हैं और हम तब तक सीखते जाते हैं, जब तक कि हम जीवन और अस्तित्व के वास्तविक अर्थ को नहीं समझ जाते।

यह किताब मनुष्य की आध्यात्मिक यात्रा से जुड़े कई विवादास्पद विषयों की पड़ताल करती है, जो हमारे जीवन में मुख्य भूमिका निभाते हैं। इस किताब में गहराई के स्तर पर आपस में जुड़ा और अविभक्तता तथा भौतिक विश्व से अलगाव

का असंभव होना से लेकर मनुष्य के मूल स्वभाव की अच्छाई तक और ऐसे प्रश्नों जैसे क्या बेतरतीबपन और अनिश्चितता हमारे जीवन पर हावी रहती है ? उन्मुक्त इच्छा आखिर कितनी मुक्त है ? तथा क्या यथार्थ स्वभाव से भ्रम पैदा करनेवाला होता है ? की खोज संक्षेप में की गई है। इन विषयों की मौलिक समझ से पाठकों को अपने आसपास के जगत् की वास्तविक सच्चाई को बेहतर तरीके समझने और अज्ञान के परदे तथा जड़ें जमा चुके विचारों से बाहर निकलने में मदद मिलेगी। इसका प्रतिफल उच्च स्तर की चेतना तक पहुँचने में यात्रा की तेज रफ्तार के रूप में सामने आएगा।

हम सभी यथार्थ को अपनी धारणा के अनुसार ही समझते हैं, और हमें इस बात का बस जरा सा ही आभास होता है कि अन्य लोग भी यथार्थ की अपनी ही रचना करते हैं !

हमारे विचारों में भौतिक जगत् में घटनेवाली घटनाओं की दिशा बदलने की शक्ति होती है। आप मानें या न मानें, सहभागी वास्तविकता में, हम अपनी धारणाओं के अनुसार ही अपने अनुभवों का निर्माण करते हैं, साथ-ही-साथ उसका अनुभव करते हैं, जिसका हमने निर्माण किया है।

हममें से हर एक स्त्री या पुरुष जीवन का अपने ही एक विशिष्ट अर्थ की रचना करता या करती है। जीवन की यात्रा के साथ ही, हममें से हर एक व्यापक संभानाओं के प्रति खुला रुख रखता है, और हम उन संभावनाओं की दिशा में बढ़ते हुए विकसित हो सकते हैं।

हम अनुभव की जानेवाली भावना को चुनते हैं, हम अपनी प्रतिक्रिया और क्रिया का निर्णय लेते हैं। संक्षेप में, हम आपने आसपास के यथार्थ के ताने-बाने को बुननेवाले, संरचना तय करनेवाले बुनकर हैं।

मृत्यु को प्राप्त करने से बहुत पहले अपने नरक और अपने स्वर्ग के रचनाकार हम ही होते हैं। उनकी रचना के लिए कोई और जिम्मेदार नहीं होता। वह चुनाव सिर्फ और सिर्फ हमारा ही होता है।

बदलाव के भय के कारण हम सभी संभाव्यता और सुपरिचित, सुरक्षित और आरामदेह माहौल में रहना पसंद करते हैं। यह प्रवृत्ति आध्यात्मिक विकास में काफी हद तक बाधा पहुँचाती है।

यहाँ तक कि हमारी सबसे प्रिय स्मृति भरोसेमंद नहीं हो सकती है, क्योंकि हम उसे अपने महिमामंडन के लिए रची जानेवाली कथा के अनुरूप बनाने के लिए तोड़ते-मरोड़ते हैं।

□□□